नारदसंहिता



नारदसंहिता

(ज्योतिषग्रन्थः)

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई

संस्करण : दिसंबर २०१४, संवत् २०७१

मूल्य:१४० रुपये मात्र

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass,
Prop: Shri Venkateshwar Press,
Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s. Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai - 400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013.

भूमिका।

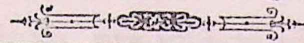
सिद्धान्त, संहिता और होरा इन तीन स्कन्धोंसे युक्त ज्योतिः-शास्त्र वेदका नेत्र कहा जाता है। संसारका शुभाशुभ विषय आँखोंसे ही देखा जासकता है, इसी प्रकार वेदविहित शुभाशुभ कर्मोंका उपादान और त्याग अर्थात कौन कर्म किस समय करना और कब न करना; किस प्रकार करना इत्यादि नेत्रका कार्य ज्योतिषशास्त्रके द्वारा ही होता है। नेत्रवान् मनुष्य जैसे मार्गमें पड़े कण्टकादिकोंको देख उनसे अपनी रक्षा करसकता है इसी प्रकार ज्योतिषका जाननेवाला, सम्पूर्ण शुभाशुभ कर्मोंको जानकर शुभकर्मोंके आचरणसे सुखी रहसकता है। जब मनुष्य इस मर्त्यलोकमें जन्म लेकर श्रेष्ठ कर्म करनेसे देवदुर्लभ कर्मोंको भी सिद्ध करसकता है तो कौन बुद्धिमान् ऐसे उत्तम लोकमें आकर अपनी उन्नतिका साधन करनेमें चूकेगा? यही विचार कर स्वभावसे ही सर्वजीवोपकारी महर्षि नारदजीने मनुष्योंके लाभके लिये स्कन्धत्रयात्मक ज्योतिषशास्त्र मनाया, उनमेंसे यह तृतीय होरास्कन्ध नारदसंहिता नामसे प्रसिद्ध है। इसमें शास्त्रोपनयन, ग्रहचार, अब्दलक्षण, संवत्सरफल, तिथि, वार, नक्षत्र, योग, मुहूर्त, उपग्रह, सूर्यसङ्क्रान्ति, ग्रहगोचर, चन्द्रताराबलाध्याय, लग्नविचार, प्रथमरजोदर्शनविचार, गर्भाधानसे लेकर विवाहपर्यन्त १६ संस्कार, प्रतिष्ठा, यात्रा, गृहप्रवेश, सद्योवृष्टि, कूर्मलक्षण, उत्पात, शान्ति, इत्यादि अनेक उपयोगी कर्मोंका वर्णन सरल बडे श्लोकों द्वारा ३५ अध्यायोंमें किया गया है। देवर्षि नारदकी महिमा कौन नहीं जानता जैसे योगी विज्ञानवेत्ता यह हैं। इन्होंने अपनी तत्त्वज्ञानकी महिमासे बडे २ गूढ विषय स्वनिर्मित इस "नारदसंहिता" में रक्खे हैं। और भी अनेक ज्योतिष ग्रन्थ उत्तम २ विद्यमान हैं। परन्तु यह नारदसंहिता आर्ष ग्रन्थ है। इसका वेदाङ्ग होना यथार्थही है। सुबोध होनेपर भी कहीं २ विषयके गहन होनेसे शास्त्र कठिन होताही है इससे सर्वसाधारण इसके समस्त आशयको भलीभांति जानसकें यह समझकर हमने बेरी-ग्रामनिवासी पण्डित वसतिराम ज्योतिर्विद् द्वारा भाषाटीका बनवाकर इस संहिताको सुन्दर टाइप और कागजमें मुद्रित कराकर उत्तम जिल्द बँधाय तैयार किया है। आशा है कि लोग इस ग्रन्थका अध्ययन कर अपना तथा दूसरोंका उपकार करेंगे.

विद्वज्जन कृपाकांक्षी,

खेमराज श्रीकृष्णदास.

॥ श्रीः ॥

अथ नारदसंहिताविषयानुक्रमणिका ।



इति नारदसंहिताकी विषयानुक्रमणिका समाप्त।

॥ श्रीः ॥

अथ नारदसंहिता ।

भाषाटीकासहिता ।



अणोरणुतरः साक्षादीश्वरो महतो महान् ॥
आत्मा गुहायां निहितो जंतोर्जयत्यतीन्द्रियः ॥ १ ॥

सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म और महान्से भी अत्यन्त महान् ऐसे परमात्मा जो कि अतीन्द्रिय याने किसी चक्षु आदि इंद्रियसे भी ग्रहण नहीं किये जाते हैं वे साक्षात् परमेश्वर जीवके अन्तःकरणमें उत्कर्षतासे वर्तते हैं ॥१॥

ब्रह्माचार्यौ वसिष्ठोऽत्रिर्मनुः पौलस्त्यलोमशौ ॥
मरीचिरंगिरा व्यासो नारदः शौनको भृगुः ॥ २ ॥

ब्रह्माजी, आचार्य, वसिष्ठ, अत्रि, मनु, पौलस्त्य, लोमश, मरीचि, अङ्गिरा, वेदव्यास, नारद, शौनक, भृगु ॥ २ ॥

च्यवनो यवनो गर्गः कश्यपश्च पराशरः ॥
अष्टादशैते गंभीरा ज्योतिःशास्त्रप्रवर्तकाः ॥ ३ ॥

च्यवन, यवनाचार्य्य, गर्ग, कश्यप, पराशर, ये अठार हूं गम्भीर ज्योतिःशास्त्रको प्रवर्त्त करनेवाले भये हैं ॥ ३ ॥

सिद्धांतसंहिता होरा रूपं स्कंधत्रयात्मकम् ॥
वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिःशास्त्रमनुत्तमम् ॥ ४ ॥

सिद्धान्त, संहिता, होरारूप, तीन स्कन्धोंवाला वेदका निर्मल नेत्ररूप परमोत्तम ज्योतिःशास्त्र ऐसे यह ग्रन्थ कहा है ॥ ४ ॥

अस्य शास्त्रस्य संबंधो वेदांगमिति कथ्यते ॥
अभिधेयं च जगतः शुभाशुभनिरूपणम् ॥ ५ ॥

यह ज्योतिःशास्त्र वेदांग कहलाता है जगत्का शुभ अशुभ हालको वर्णन करता है ॥ ५ ॥

यज्ञाध्ययनसंक्रांतिग्रहषोडशकर्मणाम् ॥
प्रयोजनं च विज्ञेयं तत्तत्कालविनिर्णयात् ॥ ६ ॥

यज्ञ, अध्ययन, संक्रांतिका पुण्यकाल, ग्रह, षोडशकर्म, इन्होंके यथार्थ समयका निर्णय (मुहूर्त्त) ज्योतिःशास्त्रसे ही होता है ॥ ६ ॥

विनैतदखिलं श्रौतस्मार्तकर्म न सिध्यति ॥
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा रचितं पुरा ॥ ७ ॥

इसके विना सम्पूर्ण श्रुति स्मृतिमें कहाहुआ कर्म सिद्ध नहीं होवे इस लिये ब्रह्माजीने जगत्की सिद्धिके वास्ते पहिले ज्योतिःशास्त्र रचा है ॥ ७ ॥

तं विलोक्याथ तत्सूनुर्नारदो मुनिसत्तमः ॥
उक्त्वा स्कंधद्वयं पूर्वं संहितास्कंधमुत्तमम् ॥ ८ ॥

तिसको देखकर ब्रह्माजीके पुत्र नारद मुनि पहिले दोस्कन्ध बनाकर ॥८॥

वक्ष्ये शुभाशुभफलज्ञप्तये देहधारिणाम् ॥
होरास्कंधस्य शास्त्रस्य व्यवहारप्रसिद्धये ॥ ९ ॥

फिर देहधारियोंके शुभ अशुभ फलका ज्ञान होनेके वास्ते इस होरा स्कंध शास्त्रको व्यवहारकी सिद्धिके वास्ते कहते हैं ॥ ९ ॥

संज्ञा ह्युक्ताः समस्ताश्च सम्यग् ज्ञात्वा पृथक्पृथक् ॥
शास्त्रोपनयनाध्यायो ग्रहचारोऽब्दलक्षणम् ॥ १० ॥
तिथिर्वारश्च नक्षत्रं योगं तिथ्यृक्षसंज्ञकम् ॥
मुहूर्तोपग्रहोऽर्कस्य संक्रांतिर्गोचरस्तथा ॥ ११ ॥

इसमें अच्छे प्रकारसे अलग २ संज्ञा कही हैं शास्त्रोपनयनाध्याय अर्थात् इस शास्त्रका अभिप्राय वर्णन, ग्रहचार वर्णन, संवत्सरोंका फल, तिथी, वार, नक्षत्र और तिथी तथा नक्षत्रसे शीघ्र हुआ योग, इन्होंका विचार, मुहूर्त प्रकरण, उपग्रह प्रकरण, सूर्य संक्राति फल, ग्रहगोचर, ॥ १० ॥११॥

चन्द्रताराबलाध्यायः सर्वलग्नार्तवाह्वयः ॥
आधानपुंससीमंता जातनामान्नभुक्तयः ॥ १२ ॥

चन्द्र तारा बल देखनेका अध्याय, सब लग्नोंका विचार, प्रथम रजस्वलाका विचार, आधान, पुंसवन, सीमन्त, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन ॥ १२ ॥

चौलांकुरार्पणं मौंजीछुरिकाबन्धनं क्रमात् ॥
समावर्तनवैवाहप्रतिष्ठासद्मलक्षणम् ॥ १३ ॥

चौलकर्म, मङ्गलाकुरार्पण, मौंजीबन्धन, छुरिका बन्धन ये सब क्रमसे कहे हैं और समावर्त्तनकर्म, विवाहकर्म, प्रतिष्ठाकर्म, घरोंका लक्षण, ॥ १३ ॥

यात्रा प्रवेशनं सद्योवृष्टिकूर्मविलक्षणम् ॥
उत्पातलक्षणं शांतिमिश्रकं श्राद्धलक्षणम् ॥ १४ ॥

यात्रा प्रकरण, प्रवेशमुहूर्त्त, सद्य वृष्टि, कूर्मलक्षण, उत्पात लक्षण, शांतिकर्म, मिश्रकाध्याय, श्राद्धलक्षण ॥ १४ ॥

सप्तत्रिंशद्भिरध्यायैर्नारदीयाख्यसंहिता ॥
य इमां पठते भक्त्या स दैवज्ञो हि दैववित् ॥ १५ ॥

ऐसे इन प्रकरणों करके सैंतीस अध्यायोंसे यह नारद संहिता बनाई गई है जो भक्तिसे इसको पढता है वह दैवको जाननेवाला ज्योतिषी होता है ॥१५॥

त्रिस्कंधज्ञो दर्शनीयः श्रौतस्मार्तक्रियापरः ॥
निर्दांभिकः सत्यवादी दैवज्ञो दैववित्स्थिरः ॥ १६ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां शास्त्रोपनयनाध्यायः प्रथमः ॥१॥

तीनों स्कन्धोंको जानने वाला, दर्शन करने योग्य, श्रुतिस्मृति विहित कर्म करनेवाला, पाखण्डरहित, सत्यवादी, दैवको जाननेवाला स्थिर दैवज्ञ होता है ॥ १६ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां शास्त्रोपन-
यनाध्यायः प्रथमः ॥ १ ॥

चैत्राद्येष्वपि मासेषु मेषाद्याः संक्रमाः क्रमात् ॥
चैत्रादितिथिवारेशस्तस्याब्दस्य त्वधीश्वरः ॥ १ ॥

चैत्र आदि इन महीनेमें मेष आदि संक्रांति यथा क्रमसे होती हैं और चैत्रशुक्ला प्रतिपदाको जो वार होता है वह वर्षका राजा कहलाता है ॥१॥

मेषसंक्रांतिवारेशो भवेत्सोऽपि च भूपतिः ॥
कर्कटस्य तु वारेशो सस्येशस्तत्फलं ततः ॥ २ ॥

और मेषकी संक्रांतिको जो वार होवे वह सेनापति होता है, कर्क की संक्रांतिको जो वार हो वह सस्यपति होता है ॥ २ ॥

तुलासंक्रांतिवारेशो रसानामधिपः स्मृतः ॥
मकराधिपतिः साक्षान्नीरसस्य पतिः क्रमात् ॥ ३ ॥

तुलाकी संक्रांतिका वार रसेश होता है और मकरकी संक्रांतिका जो वार होवे वह नीरसेश अर्थात् सुवर्ण आदि धातुओंका वस्त्रादिकोंका पति होता है ॥ ३ ॥

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा दिवाकरः ॥
तस्मिन्नब्दे नृपक्रोधः स्वल्पसस्यार्घवृष्टिकृत् ॥ ४ ॥

वर्षपति (राजा) वा सेनापति (मन्त्री) अथवा सस्येश सूर्य हो तो उस वर्षमें राजाओंको क्रोध रहे थोडी खेती हो अन्नका भाव महंगा रहे वर्षा थोडी होवे ॥ ४ ॥

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा निशाकरः ॥
तस्मिन्नब्दे करोति क्ष्मां पूर्णां शालिफलेक्षुभिः ॥ ५ ॥

वर्षपति वा सेनापति तथा सस्यपति चन्द्रमा होय तो उस वर्षमें गेहूं चाँवल आदि धान्य तथा ईख आदिसे भरपूर पृथ्वी होवे ॥ ५ ॥

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा महीसुतः ॥
तस्मिन्नब्दे चौरवह्निवृष्टिक्षुद्भयकृत्सदा ॥ ६ ॥

जो राजा व मन्त्री तथा सस्यपति मंगल होय तो उस वर्षमें चोर तथा अग्निका भय हो वर्षा नहीं हो दुर्भिक्ष हो ॥ ६ ॥

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा शशांकजः ॥
अतिवायुं स्वल्पवृष्टिं करोति नृपविग्रहम् ॥ ७ ॥

राजा व मन्त्री तथा सस्यपति बुध हो तो अत्यन्त पवन चले थोडी वर्षा हो राजाओंका युद्ध होवे ॥ ७ ॥

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा सुरार्चितः ॥
करोत्यनुत्तमां धात्रीं यज्ञधान्यार्थवृष्टिभिः ॥ ८ ॥

जो राजा व मन्त्री तथा सस्यपति बृहस्पति होय तो यज्ञ धान्य द्रव्य वर्षा, इन्हों करके पृथ्वी परिपूर्ण होवे ॥ ८ ॥

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वा भृगोः सुतः ॥
करोति सर्वां सम्पूर्णां धात्रीं शालिफलेक्षुभिः ॥ ९ ॥

जो राजा व मन्त्री तथा सस्यपति शुक्र होय तो चावल धान्य ईख आदिसे भरपूर पृथ्वी हो ॥ ९ ॥

अब्देश्वरश्चमूपो वा सस्येशो वार्कनन्दनः ॥
अन्तकश्चौरवह्नयंबुधान्यभूपभयप्रदः ॥ १० ॥

जो राजा व मन्त्री तथा नरपति वा सस्यपति शनि होय तो दुर्भिक्ष हो चोर अग्नि जल धान्य राजा इन्होंका भय होय ॥ १० ॥

ज्ञात्वा बलाबलं सम्यग्वदेत्फलनिरूपणम् ॥
दंडाकारेऽर्कवेधे वा ध्वांक्षाकारेऽथ कीलके ॥ ११ ॥
दृष्टेऽर्कमंडले व्याधिर्भीतिश्चौरार्थनाशनम् ॥
छत्रध्वजपताकाद्यैराकारैस्तिमिरैर्घनैः ॥ १२ ॥
रविमंडलगैर्धूमैः स्फुलिंगैर्जननाशनम् ॥
सितरक्तैः पीतकृष्णैस्तैर्मिश्रैर्विप्रपूर्वकान् ॥ १३ ॥

ऐसे सम्पूर्ण बलाबल देखकर संवत्सरका फल कहना चाहिये अब सूर्य-चार फल कहते हैं कि दण्डके आकार काग तथा कीलाके आकार सूर्यमें बेध दीख पड़े तो पीड़ा भय चोर द्रव्यनाश ये उपद्रव होवें और छत्र ध्वजा पताका आदि अन्धकार दीख पड़े सूर्य मण्डलमें धुँवा सरीखा दीखे अग्निके किणके दीखें तो मनुष्योंका नाश हो सफेद लाल पीली काली मिली हुई ऐसी सूर्यकी किरण दीखें तो यथाक्रमसे ब्राह्मण आदिका नाश हो ॥११॥ ॥ १२ ॥ १३ ॥

हंति द्वित्रिचतुर्भिर्वा राज्ञोऽन्यजनसंक्षयः ॥
ऊर्ध्वैर्भानुकरैस्ताम्रैर्नाशं याति स भूपतिः ॥ १४ ॥

और दो तीन चार वर्णकी मिली हुई किरण दीखे तो राजाओंका नाश हो, अन्य प्रकार कुछ दुष्ट चिह्न होवे तो प्रजाका नाश हो, तांबासरीखा वर्णवाली सूर्यकी किरण ऊपरको फैली हुई हों तो राजाका नाश हो ॥१४॥

पीतैर्नृपसुतः श्वेतैः पुरोधाश्चित्रितैर्जनाः ॥
धूम्रैर्नृपः पिशंगैश्च जलदोऽधोमुखैस्तथा ॥ १५ ॥

पीलावर्ण हो तो राजाके पुत्रका नाश, सफेद हो तो राजाका पुरोहित नष्ट होय, अनेक वर्णोंकी मिली हुई हो तो प्रजानाश हो और धूम्र वर्ण वा भुरा वर्णकी किरण बादलोंसे नीचेको मुख करके दीखें तो राजाका नाश हो ॥ १५ ॥

उदयास्तमये काले स्वास्थ्यं तैः पांडुसन्निभैः ॥
भास्करस्ताम्रसंकाशः शिशिरे कापिलोऽपि वा ॥ १६ ॥

उदय तथा अस्त समय कछु कपिलाई सहित सफेद स्वच्छ किरण हो और तांबा सरीखा लालवर्ण अथवा कपिलाई वर्ण सूर्य होवे तो शिशिर ऋतुमें अच्छा कहा है ॥ १६ ॥

कुंकुमाभौ वसंततौं कापिलो वापि शस्यते ॥
अपांडुरः स्वर्णवर्णो ग्रीष्मे ।चित्रो जलागमे ॥ १७ ॥

वसन्तऋतुमें केशर सरीखा लालवर्ण वा कपिलवर्ण अच्छा है और ग्रीष्म (गरमी) ऋतुमें लालवर्ण सोनासरीखा और वर्षाऋतुमें विचित्रवर्ण अच्छा कहा है ॥ १७ ॥

पद्मोदराभः शरदि हेमंते लोहितच्छविः ॥
हेमंते प्रावृषि ग्रीष्मे रोगाणां वृष्टिभीतिकृत् ॥ १८ ॥

शरदऋतुमें कमलके मध्य भाग सरीखा, हेमन्तमें लालवर्ण अच्छा है और वर्षा॰तथा ग्रीष्म वा हेमन्त ऋतुमें लालवर्ण होवे तो रोग होवे वर्षा नहीं हो ॥ १८ ॥

पीताभः कृष्णवर्णोऽपि लोहितस्तु यथाक्रमात् ॥
इन्द्रचापार्द्धमूर्तिश्चेद्धानुर्भूपविरोधकृत् ॥ १९ ॥

और पीला वर्ण काला वर्ण फिर लाल ऐसे क्रमसे तीन रंगोंवाला इन्द्र-धनुष होवे तथा सूर्यमें ये रंग देख पडें तो राजाओंका युद्ध होवे ॥ १९ ॥

मयूरपत्रसंकाशो द्वादशाब्दं न वर्षति ।
शशरक्तनिभे भानौ संग्रामो ह्यचिराद्भवेत् ॥ २० ॥

मोरकी पंख सरीखा सूर्यका वर्ण दीख पड़े तो बारहवर्ष तक वर्षा नहीं हो, शशाके रक्त समान लालवर्ण होवे तो शीघ्र ही युद्ध हो ॥ २० ॥

चंद्रस्य सदृशो यत्र चान्यं राजानमादिशेत ॥
अर्के श्यामे कीटभयं भस्माभे शस्त्रतो भयम् ॥ २१ ॥

चन्द्रमाके समान वर्ण होवे तो अन्य राजाका राज्य हो, काला वर्ण होय तो प्रजामें कीट सर्पादिकका भय हो, भस्मसरीखा वर्ण होय तो शस्त्रभय (युद्ध) होवे ॥ २१ ॥

छिद्रेऽर्कमंडले दृष्टे तदा राजविनाशनम् ॥
घटाकृतिः क्षुद्भयकृत्पुरहा तोरणाकृतिः ॥ २२ ॥

सूर्यमण्डलमें छिद्र दीख पडे तो राजाओंका नाश हो, घडा सरीखा आकार दीख जाय तो दुर्भिक्ष भय हो, तोरणकी आकृति दीखे तो शहर (नगर) भङ्ग हो ॥ २२ ॥

छत्राकृतिर्देशहंता खंडभानुर्नृपांतकृत् ॥
उदयास्तमये भानोर्विद्युदुल्काशनिर्यदि ॥ २३ ॥

छत्र सरीखा आकार होय तो देश नष्ट हो, खण्डित सूर्य होवे तो राजा नष्ट होवे, सूर्य अस्त होते, समय अथवा उदय होते समय कोई तारा टूटे अथवा बिजली गिरे तो ॥ २३ ॥

तदा नृपवधो ज्ञेयस्त्वथवा राजविग्रहः ॥
पक्षं पक्षार्द्धमर्केन्दु परिविष्टावहर्निशम् ॥ २४ ॥

राजा नष्ट हो अथवा राज्य विग्रह हो, पन्दरह दिनतक अथवा सात दिनतक सूर्य चन्द्रमाके दिनरात निरन्तर मण्डल रहे तो ॥ २४ ॥

राजानमन्यं कुरुतो लोहितावुदयास्तगौ ॥
उदयास्तमये भानुराच्छिन्नः शस्त्रसन्निभैः ॥ २५ ॥
घनैर्युद्धं खरोष्ट्राद्यैः पापरूपैर्भयप्रदः ॥
ऋतुकालानुरूपोऽर्कः सौम्यमूर्तिः शुभावहः ॥ २६ ॥
रविचारमिदं सम्यग ज्ञातव्यं तत्त्ववेदिभिः ॥ २७ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां सूर्यचारः ॥

दूसरा राजाका राज्य हो और उदय अथवा अस्त होते समय सूर्य वा चन्द्रमा रुधिरसमान लालवर्ण होवें तो भी राज्य नष्ट हो, उदयसमय वा अस्तसमय सूर्य तथा चन्द्रमाको शस्त्र सरीखे आकारवाले बादल आच्छादित कर लेवें तो युद्ध हो और गधा ऊँट आदिके आकारवाले बादलोंसे आच्छादित होय तो प्रजामें भयहो तथा ऋतु और कालके अनुरूप सुन्दर स्वच्छ सूर्य होय तो शुभ फल होवे इस प्रकार यह सूर्यचार पण्डित जनोंसे अच्छे प्रकारसे समझना चाहिये ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां सूर्यचारः ।

याम्यशृंगोन्नतश्चंद्रोऽशुभदो मीनमेषयोः ॥
सौम्यशृंगोन्नतश्रेष्ठो नृयुग्मकरयोस्तथा ॥ १ ॥

उदयकालमें मीन और मेषके चन्द्रमाका शृंग दक्षिणकी तर्फ ऊंचा हो तो अशुभदायक है और मिथुन मकरके चन्द्रमाका उत्तरकी तर्फका कोना ऊंचा हो तो शुभ है ।। १ ॥

समोऽक्षघटयोः कर्कसिंहयोः शरसन्निभः ॥
चापकीटभयोः स्थूलः शूलवत्तौलिकन्ययोः ॥ २ ॥

वृषभ कुम्भके चन्द्रमाके दोनों कोने समान, कर्क वा सिंहके चन्द्रमाके कोने बाणाकार, वृश्चिक और धनके चन्द्रमाका स्थूल आकार, तुला कन्याके चन्द्रमाका शूलके आकार होय तो शुभदायक है ।। २ ॥

विपरीतोदितश्चंद्रो दुर्भिक्षकलहप्रदः ॥
यथोक्तोऽभ्युदितश्चेंदुः प्रतिमासं सुभिक्षकृत् ॥ ३ ॥

इनसे विपरीत चन्द्रमा उदय होवे तो दुर्भिक्ष तथा कलह करे और महीना २ प्रति जैसा कहा है वैसा ही उदय हो तो सुभिक्षकारक जानना॥३॥

आषाढद्वयमूलेंद्रधिष्ण्यानां याम्यगः शशी ॥
अग्निप्रदस्तोयचरवनसर्पविनाशकृत् ॥ ४ ॥

पूर्वाषाढ, उत्तराषाढ, ज्येष्ठा, मूल इन नक्षत्रोंमें दक्षिणचारी चन्द्रमा होय तो अग्निभय हो, जलचर जीव वनसर्प इन्होंका नाश हो ।। ४ ॥

विशाखामैत्रयोर्याम्यपार्श्वगः पापकृत्सदा ॥
मध्यगः पितृदैवत्ये द्विदैवत्ये शुभोत्तरे ॥ ५ ॥

विशाखा तथा अनुराधा नक्षत्रपर आया हुआ चन्द्रमा दक्षिणकी तर्फ होके गमन करे तो सदा अशुभ है, मघापर मध्यमचारी, विशाखापर आवे तब उत्तरचारी चन्द्रमा शुभदायक है ।। ५ ॥

सम्प्राप्य पौष्णभाद्रौद्रात्षट् चर्क्षाणि शशी शुभः ॥
मध्यगो द्वादशर्क्षाणि अतीत्य नव वासवात् ॥ ६ ॥

रेवतीआदि छःनक्षत्रोंपर आवे तब चन्द्रमा शुभ है, ग्रन्थांतरोंमें लिखा है कि ये छः अनागत नक्षत्र हैं अर्थात् उत्तराभाद्रपदपर स्थित चन्द्रमा रेवतीके तारा पर दीख पडता है इसलिये शुभ कहा है और आर्द्रा आदि बारह नक्षत्रोंपर मध्यम चारी शुभ है ।। ६ ॥

यमेंद्राहिभतोयेशा मरुतश्चार्द्धतारकाः ॥

ध्रुवादिति द्विदैवाः स्युरध्यर्द्धाश्च पराः समाः ॥ ७ ॥

भरणी, ज्येष्ठा, आश्लेषा, शतभिषा, स्वाती ये अर्द्धसंज्ञक तारे हैं और ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र, पुनर्वसु विशाखा ये अर्द्धसंज्ञक हैं, बाकी रहे नक्षत्र सम कहे हैं ॥ ७ ॥

याम्यशृंगोन्नतः श्रेष्ठः सौम्यशृंगोन्नतः शुभः ॥

शुक्के पिपीलिकाकारे हानिवृद्धी यथाक्रमात् ॥ ८ ॥

दक्षिणका शृंग ऊंचा श्रेष्ठ है और उत्तरका शृंग भी ऊंचा श्रेष्ठ है,शुक्ल पक्षमें कीडीके आकार याने मध्यमें पतला ऐसा चन्द्रमा हानि और कृष्ण-पक्षमें शुभदायक है और दक्षिणको स्थूल होवे तो हानि,उत्तरको ज्यादे स्थूल हो तो वृद्धिदायक है ॥ ८ ॥

सुभिक्षकृद्विशालेंदुरविशालोर्घनाशनः ॥

अधोमुखे शस्त्रभयं कलहो दंडसन्निभे ॥ ९ ॥

स्थूल सुन्दर चन्द्रमा सुभिक्षकारक है, कृश चन्द्रमा उदय होय तो दुर्भि-कारक है, नीचेको मुख होय तो शस्त्र भय हो, दंडाकार होय तो प्रजामें कलह हो ॥ ९ ॥

कुजाद्यैर्निहते शृंगे मंडले वा यथाक्रमात् ॥

क्षेमार्घवृष्टिनृपतिजनानां नाशकृच्छशी ॥ १० ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां चन्द्रचारः ॥

मंगलादि ग्रहों करके चन्द्रमंडलका शृंग वेधित होवे तो क्रमसे क्षेम नाश, भावमहिगा, वर्षानाश, राजानाश, प्रजानाश, यह फल होता है ॥ १० ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां चन्द्रचारः ।

सप्ताष्टनवमर्क्षेषु स्वोदयाद्वक्रिते कुजे ॥

तद्वक्रमुष्णं तस्मिन्स्यात्प्रजापीडाग्निसंभवः ॥ १ ॥

अपने उदयके नक्षत्रसे सातवां आठवां नवमा नक्षत्रपर मंगल वक्री होय तो उस नक्षत्रपर रहे तबतक प्रजामें पीडा हो अग्निकोप हो ॥ १ ॥

दशमैकादशे ऋक्षे द्वादशे वा प्रतीपगे ॥

वक्रमल्पसुखं तस्मिंस्तस्य वृष्टिविनाशनम् ॥ २ ॥

और दशवां और ग्यारहवाँ बारहवाँ नक्षत्रपर वक्री होय तो प्रजामें थोडा सुख, वर्षाका नाश ॥ २ ॥

कुजे त्रयोदशे ऋक्षे वक्रिते वा चतुर्दशे ॥
व्यालाख्यवक्रं तत्तस्मिन्सस्यवृद्धिरहेर्भयम् ॥ ३ ॥

मंगल उदय नक्षत्रसे तेरहवें चौदहवें नक्षत्रपर वक्री होय तो यह व्यालनामक वक्री कहा है इसमें खेतीकी वृद्धि हो और सर्पोका भय हो ॥ ३ ॥

पंचदशे षोडशर्क्षे तद्वक्रं रुधिराननम् ॥
सुभिक्षकृद्भयं रोगान्करोति यदि भूमिजः ॥ ४ ॥

पंद्रहवें सोलहवें नक्षत्रपर वक्री होय तो वह रुधिरानन वक्री कहा है तहां सुभिक्ष हो भय और रोग होवे ॥ ४ ॥

अष्टादशे सप्तदशे तदासिमुसलं स्मृतम् ॥
दस्युभिर्धनहान्यादि तस्मिन्भौमे प्रतीपगे ॥ ५ ॥

अठारहवां नक्षत्र वा सतरहवां नक्षत्रपर वक्र हो वह असिमुसल नामक है तहां चौरादिकोंसे धननाश हो ॥ ५ ॥

फाल्गुन्योरुदितो भौमो वैश्वदेवे प्रतीपगः ॥
अस्तगश्चतुरास्यर्क्षे लोकत्रयविनाशकृत् ॥ ६ ॥

पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रोंपर मंगलका उदय हो और उत्तराषाढा नक्षत्रपर वक्री हो और रोहिणी नक्षत्रपर अस्त होय तो त्रिलोकीको नष्ट करे ॥ ६ ॥

उदितः श्रवणे पुष्ये वक्रतो नृपहानिदः ॥
यद्दिग्भ्योऽभ्युदितो भौमस्तद्दिग्भूपभयप्रदः ॥ ७ ॥

श्रवण पुष्य इनपर उदय होकर वक्री होय तो राजाकी हानि करे, जिस दिशामें मंगल उदय हो उस दिशाके राजाको भयकारक जानना ॥ ७ ॥

मघामध्यगतो भौमस्तत्रैव च प्रतीपगः ॥
अवृष्टिशस्त्रभयदः पांडुदेशाधिपांतकृत् ॥ ८ ॥

मघा नक्षत्रपर मंगल उदय होवे फिर वक्री होजाय तो वर्षा नहीं हो, प्रजामें युद्धभय, पांडुदेशके राजाका नाश हो ॥ ८ ॥

पितृद्विदैवधातॄणां भिद्यंते योगतारकाः ॥
दुर्भिक्षं मरणं रोगं करोति यदि भूमिजः ॥ ९ ॥

मघा, विशाखा, रोहिणी इन नक्षत्रोंपर मंगल हो तब इनके ताराओंको भेदन करे तो प्रजामें दुर्भिक्ष और महामारी रोग होवे ॥ ९ ॥

त्रिषूत्तरासु रोहिण्यां नैर्ऋत्ये श्रवणेंदुभे ॥
अवृष्टिदश्चरन्भौमे रोहिणीदक्षिणे स्थितः ॥ १० ॥

तीनों उत्तरा, रोहिणी, मूल, श्रवण, मृगशिरा इन नक्षत्रोंपर मंगल होय अथवा रोहिणी नक्षत्रके तारासे दक्षिणको स्थित होय तो वर्षा नहीं हो॥१०॥

भूमिजः सर्वधिष्ण्यानामुदग्गामी शुभप्रदः ॥
याम्यगोनिष्टफलदो भेदे भेदकरो नृणाम् ॥ ११ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां भौमचारः ॥

यह मंगल सब नक्षत्रोंसे उत्तरकी तरफ होकर चले तो शुभदायक जानना और दक्षिणकी तरफ होकर चले तो अशुभदायी है, तारोंको भेद करे तो प्रजामें युद्ध हो ॥ ११ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां भौमचारः समाप्तः ॥

विनोत्पातेन शशिजः कदाचिन्नोदयं व्रजेत् ।
अनावृष्ट्यग्निभयकृदनर्थं नृपविग्रहम् ॥ १ ॥

कभी उत्पातके बिनाही समयपर बुध उदय नहीं हो तो वर्षा नहीं हो अग्निभय अनर्थ और राजाओंका युद्ध होवे ॥ १ ॥

वसुश्रवणविश्वेंदुधातृभेषु चरन्बुधः ॥
भिनत्तिं यदि तत्तारामवृष्टिव्याधिभीतिकृत् ॥ २ ॥

धनिष्ठा श्रवण उत्तराषाढा मृगशिरा रोहिणी इन नक्षत्रोंपर विचरता हुआ बुध जो इन ताराओंको भेदन करे तो वर्षा नहीं हो प्रजामें रोगभय हो ॥२॥

आर्द्रादिपितृभांतेषु दृश्यते यदि चंद्रजः ॥
तदा दुर्भिक्षकलहरोगाणां वृद्धिभीतिकृत् ॥ ३ ॥

आर्द्रा आदि मघा नक्षत्रपर्यंत बुध स्थित रहे और इन ताराओंको भेदन करे तब दुर्भिक्ष कलह रोग इन्होंकी वृद्धिसे प्रजामें भय हो ॥ ३ ॥

हस्तादिरसतारासु विचरन्निंदुनंदनः ॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं कुरुते पशुनाशनम् ॥ ४ ॥

हस्त आदि ज्येष्ठापर्यंत नक्षत्रोंपर बुध स्थित होय तो प्रजामें कुशल, सुभिक्ष, आरोग्य हो, पशुओंका नाश हो ॥ ४ ॥

अहिर्बुन्ध्यार्यमाग्नेययमभेषु चरन्यदि ॥
धातुक्षयं च जंतूनां करोति शशिनंदनः ॥ ५ ॥

उत्तरा भाद्रपदा, उत्तरा फाल्गुनी, कृत्तिका, भरणी इन नक्षत्रोंपर गति करता हुआ बुध होय तो जीवोंके शरीरकी सात धातुओंका नाश हो अर्थात् दुर्भिक्ष हो ॥ ५ ॥

दस्रवारुणनैर्ऋत्यरेवतीषु चरन्बुधः ॥
भिषक्तुरगवाणिज्यवृत्तीनां नाशकस्तदा ॥ ६ ॥

अश्विनी, शतभिषा, मूल, रेवती इन नक्षत्रोंपर विचरता हुआ वेध करता हुआ बुध, वैद्य अश्व तथा वणिजकी वृत्तिकरने वालोंका नाश करे ॥ ६ ॥

पूर्वात्रये चरन् सौम्यो योगतारां भिनत्ति चेत् ॥
क्षुच्छस्त्रामयचौरेभ्यो भयदः प्राणिनस्तदा ॥ ७ ॥

तीनों पूर्वाओंपर विचरता हुआ बुध अपने योग ताराको भेदन करे तो दुर्भिक्ष, राजयुद्ध, रोग, चौर इन्होंसे प्राणियोंको भय हो ॥ ७ ॥

याम्याग्निधातृवायव्यधिष्ण्येषु प्राकृतागतिः ।
ईशेंदुसार्पपित्र्येषु ज्ञेया मिश्राह्वया गतिः ॥ ८ ॥

भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, स्वाती इन्होंपर बुध होय तो बुधकी प्राकृता गति कही है, आर्द्रा, मृगशिर, आश्लेषा, मघा इनपर होय तो मिश्रा गति कही है ॥ ८ ॥

संक्षिप्तादितिभाग्यार्यमेज्यधिष्ण्येषु या गतिः ॥
गतिस्तीक्ष्णाजचरणेऽहिर्बुन्ध्येंद्राश्विपूषसु ॥ ९ ॥
योगांतिकांबुविश्वाख्यमूलगस्येंदुजस्य च ॥
घोरा गतिर्हरित्वाष्ट्रवसुवारुणभेषु च ॥ १० ॥

पूनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, पुष्य इन नक्षत्रोंपर संक्षिप्ता तथा पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, ज्येष्ठा, रेवती, अश्विनी इन्होंपर होय तो तीक्ष्णा गति कही है । पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, मूल इन नक्षत्रोंपर बुध होय तो योगांतिका गति कहलाती है । श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा इनपर होय तब घोरा गति कही है ॥ ९ ॥ १० ॥

इन्द्राग्निमित्रमार्तंडभेषु पापाह्वया गतिः ॥
प्राकृताद्यासु गतिषु ह्युदितोस्तमितोपि वा ॥ ११ ॥
एतावंति दिनान्येव दृश्यस्तावन्न दृश्यगः ॥
चत्वारिंशत्क्रमात्त्रिंशद्द्वाविंशद्विंशतिर्नव ॥ १२ ॥

और विशाखा, अनुराधा, हस्त इन नक्षत्रोंपर होय तब पापा गति कही है। इन प्राकृत आदि गतियोंपर प्राप्त हुआ बुध उदय होवे अथवा अस्त होजाय तब जितने दिनोंतक रहता है उनका प्रमाण यथाक्रमसे ऐसे जानना कि प्राकृता गतिमें ४० दिन फिर मिश्रामें ३० दिन संक्षिप्तामें २२ तीक्ष्णामें २० योगांतिकामें ९ दिन ॥ ११ ॥ १२ ॥

पंचदशैकादशभिर्दिवसैः शशिनन्दनः ॥
प्राकृतायां गतौ सस्यक्षेमारोग्यसुवृष्टिकृत् ॥ १३ ॥

घोरामें १५ और पापामें ११ दिनतक उदय वा अस्त रहता है इन गतियोंपर दृश्य भी हुवा बुध अदृश्यही रहता है, प्राकृता गतिमें खेतीकी वृद्धि, कुशल, आरोग्य शुभवर्षा होवे ॥ १३ ॥

मिश्रसंक्षिप्तयोर्मध्ये फलदोऽन्यास्वनिष्टदः ॥
वैशाखे श्रावणे पौषे आषाढेऽप्युदितो बुधः ॥ १४ ॥
जनानां पापफलदस्त्वितरेषु शुभप्रदः ।
इषोर्जमासयोः शस्त्रदुर्भिक्षाग्निभयप्रदः ॥
उदितश्चंद्रजः श्रेष्ठो रजतस्फटिकोपमः ॥ १५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां बुधचारः ।

और मिश्रा तथा संक्षिप्ता गतिमें भी शुभफल होता है, अन्य गतियोंमें अशुभफल होता है, वैशाख, श्रावण, पौष, आषाढ इन महीनोंमें बुध उदय होय तो मनुष्योंको अशुभ फल देता है और अन्य महीनोंमें उदय हो तो शुभफल देता है। आश्विन और कार्त्तिकमें उदय होय तो युद्ध, दुर्भिक्ष, अग्निभय ये फल करता है और चांदी तथा स्फटिक मणिके समान स्वच्छ उदय होवे तो बुध शुभ कहा है ॥ १४ ॥ १५ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां बुधचारः ।

अथ गुरुचारः ।

द्वीभा ऊर्जादिमासास्स्युः पंचांत्यैकादशस्त्रिभाः ॥
यद्धिष्ण्याभ्युदितो जीवस्तन्नक्षत्राह्ववत्सरः ॥ १ ॥

कार्तिक आदि मास दो २ नक्षत्रोंसे होते हैं और पांचवाँ बारहवाँ ग्यारहवाँ ये महीने तीन २ नक्षत्रोंसे होते हैं, जिस नक्षत्रपर बृहस्पति उदय हो उसही नामका वर्ष होता है इसका भावार्थ यह है कि, कृत्तिका आदि दो

दो नक्षत्रकरके कार्तिक आदि वर्ष होते हैं, पाचवाँ ग्यारहवाँ बारहवाँ ये वर्ष तीन २ नक्षत्रोंकरके होते हैं जैसे कि, कृत्तिका वा रोहिणीपर स्थित बृहस्पति उदय हो तो उस वर्षको कार्तिक कहते हैं, मृगशिर आर्द्रामें मार्गशिर वर्ष, पुनर्वसु पुष्यमें पौष, आश्लेषा मघामें माघ, पूर्वाफाल्गुनी उत्तराफाल्गुनी हस्तमें फाल्गुन, चित्रा स्वातिमें चैत्र, विशाखा अनुराधामें वैशाख, ज्येष्ठा मूलमें ज्येष्ठ, पूर्वाषाढा उत्तराषाढामें आषाढ, श्रवण, धनिष्ठामें श्रावण, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपदमें भाद्रपद, रेवती अश्विनी भरणीमें स्थित बृहस्पति उदय हो वह वर्षमें आश्विन कहाता है ॥ १ ॥

पीडा स्यात्कार्तिके वर्षे रथगोग्न्युपजीविनाम् ॥
क्षुच्छस्त्राग्निभयं वृद्धिः पुष्पकौसुंभजीविनाम् ॥ २ ॥

इस प्रकार कार्त्तिक वर्षमें बृहस्पति उदय हो तो रथ तथा गौ आदि पशुओंसे आजीविका करनेवाले, अग्निसे आजीविका करनेवाले, हलवाई आदि पुष्प वा कसुंभा आदिसे आजीविका करनेवाले इन्होंको पीडा हो और दुर्भिक्ष, युद्ध, अग्निभय हो ॥ २ ॥

अनावृष्टिः सौम्यवर्षे मृगाखुशलभांडजैः ॥
सर्वसस्यवधो व्याधिर्वैरं राज्ञां परस्परम् ॥ ३ ॥

मार्गशिर वर्षमें वर्षा नहीं हो तो मृग, मूंसा, टीडी, तोतें आदि पक्षी इन्होंसे खेतीका नाश हो, संपूर्ण प्रजामें बीमारी, राजाओंका परस्पर वैर होवे ॥ ३ ॥

निवृत्तवैरा क्षितिपा जगदानन्दकारकाः ॥
पुष्टिकर्मरताः सर्वे पौषेब्देऽध्वरतत्पराः ॥ ४ ॥

पौषसंज्ञक वर्षमें राजाओंमें परस्पर मित्रता, प्रजामें आनंद, संपूर्ण मनुष्य सुखी तथा यज्ञकरनेमें तत्पर रहैं ॥ ४ ॥

माघेऽब्दे सततं सर्वे पितृपूजनतत्पराः ॥
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं वृष्टिः कर्षकसंमता ॥ ५ ॥

माघ वर्षमें निरंतर सब मनुष्य पितरोंका पूजन करनेमें तत्पर रहें, सुभिक्ष हो, क्षेम आरोग्य हो, किसान लोगोंके मनके माफिक वर्षा होय ॥ ५ ॥

चौराश्च प्रबलास्त्रीणां दौर्भाग्यं स्वजनाः खलाः ॥
क्वचिद्वृष्टिः क्वचित्सस्यं क्वचिद्वृद्धिश्च फाल्गुने ॥ ६ ॥

फाल्गुन नामक वर्षमें चोर प्रबल हो। स्त्रियोंको दुःख, स्वजनोंमें दुष्टता वर्षा कहीं २ हो खेती थोड़ी निपजे ॥ ६ ॥

चैत्रेब्दे मध्यमा वृष्टिरुत्तमान्नं सुदुर्लभम् ॥
सस्यार्घवृष्टयः स्वल्पा राजानः क्षेमकारिणः ॥ ७ ॥

चैत्रनामक वर्षमें मध्यम वर्षा हो उत्तम अन्न महंगा हो वर्षा थोडी हो राजाओंमें क्षेमकुशल रहे ॥ ७ ॥

वैशाखे धर्मनिरता राजानः सप्रजा भृशम् ॥
निष्पत्तिः सर्वसस्यानामध्वरोद्युक्तचेतसः ॥ ८ ॥

वैशाख वर्षमें राजालोग धर्ममें तत्पर रहें, प्रजामें धर्मकी वृद्धि, सम्पूर्ण खेतियाँ अच्छी निपजें सबके मनका भय निवृत्त हो ॥ ८ ॥

वृक्षगुल्मलतादीनां क्षेमं सस्यविनाशनम् ॥
ज्येष्ठेऽब्दे धर्मतत्त्वज्ञाः सन्नृपाः पीडिताः परैः ॥ ९ ॥

ज्येष्ठ वर्षमें वृक्ष गुच्छ बेल आदिक तथा खेतियोंका नाश हो धर्मतत्त्वको जाननेवाले राजालोग शत्रुओंसे पीडित होवें ॥ ९ ॥

क्वचिद्वृष्टिः क्वचित्सस्यं न तु सस्यं क्वचित्क्वचित् ॥
आषाढेऽब्दे क्षितीशाः स्युरन्योन्यजयकांक्षिणः ॥ १० ॥

आषाढ वर्षमें राजालोग आपसमें युद्धकी इच्छा करें कहीं वर्षा हो कहीं खेती हो कहीं बिलकुल खेती नहीं हो ॥ १० ॥

अनेकसस्यसंपूर्णा सुरार्चनसमाकुला ॥
पापपाखंडहंत्री भूः श्रावणेऽब्दे विराजते ॥ ११ ॥

श्रावणनामक वर्षमें अनेक प्रकारकी खेतियोंसे शोभित तथा देवताओंके पूजनसे समाकुल पाप पाखण्डरहित पृथ्वी होवे ॥ ११ ॥

पूर्वं तु सस्यसंपूर्तिर्नाशं यात्यपरं तु यत् ॥
मध्यवृष्टिर्महत्सस्यं नृपाणां समरं महत् ॥ १२ ॥
अब्दे भाद्रपदे लोके क्षेमाक्षेमं क्वचित्क्वचित् ॥
धनधान्यसमृद्धिश्च सुभिक्षमतिवृष्टयः ॥ १३ ॥

भाद्रपद वर्षमें पहिली खेती (सामणू) अच्छी हो और पिछली खेती (सादू) नष्ट हो मध्यम वर्षा खेती अच्छी राजाओंका महान् युद्ध हो और

कहीं कुशल कहीं दुःख धन धान्यकी वृद्धि अत्यन्त वर्षा यह फल होता है ॥ १२ ॥ १३ ॥

सुवृष्टिः सर्वसस्यानि फलितानि भवंति च ॥
भवंत्याश्वयुजे वर्षे सन्तुष्टाः सर्वजन्तवः ॥ १४ ॥

आश्विननामक वर्षमें सुन्दर वर्षा सम्पूर्ण खेतियोंकी उत्पत्ति फल अच्छा सब प्राणी सुखी यह फल होता है ॥ १४ ॥

सौम्यभागे चरन् भानां क्षेमारोग्यसुभिक्षकृत् ॥
विपरीतं गुरोर्याम्ये मध्ये च प्रतिमध्यमम् ॥ १५ ॥

बृहस्पति अपने योगताराके उत्तरकी तरफ होकर जाय तो प्रजामें क्षमा आरोग्य सुभिक्ष हो, दक्षिणकी तरफ गमन करे तो इससे विपरीत फल हो, मध्यमें रहे तो मध्यम फल हो ॥ १५ ॥

पीताग्निश्यामहारितरक्तवर्णोंगिराः क्रमात् ॥
व्याध्यग्निरणचौरास्त्रभयकृत्प्राणिनां तदा ॥ १६ ॥

बृहस्पतिका तारा पीला, अग्नि समान, श्याम, हरित, लालवर्ण होय तो यथाक्रमसे प्रजामें रोग, अग्निभय, युद्ध, चोर, शस्त्रभय होता है ॥ १६ ॥

अनावृष्टिर्धूमानिभः करोति सुरपूजितः ॥
दिवा दृष्टो नृपवधस्त्वथ वा राज्यनाशनम् ॥ १७ ॥

धूमसरीखा वर्ण होय तो वर्षा नहीं हो, दिनमें दर्शन होय तो राजाका नाश हो अथवा राज्य नष्ट हो ॥ १७ ॥

संवत्सरशरीरः स्यात् कृत्तिकारोहिणी उभे ॥
नाभिस्त्वाषाढद्वितयमार्द्रा हृत्कुसुमं मघा ॥ १८ ॥

कृत्तिका रोहिणी ये दो नक्षत्र संवत्सरका शरीर हैं, पूर्वाषाढा उत्तराषाढा नाभि है, आर्द्रा हृदय, मघा पुष्प है ॥ १८ ॥

दुर्भिक्षाग्निमहद्भीतिः शरीरे क्रूरपीडिते ॥
नाभ्यां तु क्षुद्भयं पुष्पे सम्यक् मूलफलक्षयम् ॥ १९ ॥

शरीरके नक्षत्र अर्थात् कृत्तिका रोहिणी ये नक्षत्र क्रूर ग्रहोंकरके पीडित होवें तो दुर्भिक्ष हो, अग्निभय और महान् भय हो नाभिके नक्षत्र क्रूरग्रहोंसे पीड़ित हों तो दुर्भिक्ष हो पुष्प पीडित हो तो मूल फलोंका नाश हो ॥ १९ ॥

हृदये सस्यनिधनं शुभं स्यात् पीडितः शुभैः ॥
मेषराशिगते जीवे त्वीतिर्मेषविनाशनम् ॥ २० ॥

हृदयके नक्षत्र पीडित होवें तो खेतीका नाश हो और इसी प्रकार ये सब अङ्ग शुभ ग्रहोंसे पीडित होवें तो शुभ फल हो, मेषराशिपर बृहस्पति होय तो टीडीआदि ईतिभय तथा मेंढाओंका नाश हो ॥ २० ॥

सस्यवृद्धिः प्रजारोग्यं वृष्टिः कर्षकसंमता ॥
वृषराशिगते जीवे शिशुस्त्रीपशुनाशनम् ॥
मध्या वृष्टिः सस्यहानिर्नृपाणां समरं महत् ॥ २१ ॥

खेतीकी वृद्धि प्रजामें कुशल रहै किसान लोगोंके मनकी माफिक वर्षा हो वृषराशिपर बृहस्पति होय तो बालक स्त्री पशु इन्होंका नाश हो मध्यम वर्षा हो खेतीकी हानि राजाओंका महान युद्ध हो ॥ २१ ॥

जनानां भीतिरीतिश्च नृपाणां दारुणं रणम् ।
विप्रपीडा मध्यवृष्टिः सस्यवृद्धिस्तृतीयभे ॥ २२ ॥

मिथुनराशिपर बृहस्पति होय तो मनुष्योंको भय हो खेतीमें टीडीआदि-कोंका भय हो राजाओंका दारुण युद्ध हो ब्राह्मणोंको पीडा मध्यमवर्षा खेतीकी वृद्धि हो ॥ २२ ॥

प्रभूतपयसो गावः सुजनाः सुखिनः स्त्रियः ॥
मदोद्धताः कर्कटिज्ये सस्यवृद्धियुता धरा ॥ २३ ॥

कर्कराशिका बृहस्पति होय तो गौ बहुत दूध देवें श्रेष्ठजनोंको सुख स्त्री मदोन्मत्त सुखी होवे पृथ्वीपर खेतीकी वृद्धि हो ॥ २३ ॥

सिंहराशिगते जीवे निःस्वा भूः सुरसत्तमाः ॥
अतिवृष्टिर्व्यालभयं नृपा युद्धे लयं ययुः ॥ २४ ॥

सिंहराशिपर बृहस्पति होय तो पृथ्वीपर ब्राह्मण धनहीन होवें पृथ्वीपर सर्पोका भय हो वर्षा बहुत हो राजालोग युद्धमें मृत्युको प्राप्त होवें ॥ २४ ॥

जीवे कन्यागते वृष्टिः हृष्टाः स्वस्थाः क्षितीश्वराः ॥
महोत्सुकाः क्षितिसुराः स्वस्थाः स्युर्निखिला जनाः ॥ २५ ॥

बृहस्पति कन्याराशिपर आवे तब वर्षा हो राजा प्रसन्न होवें ब्राह्मणलोग बहुत प्रसन्न रहें सब मनुष्य स्वस्थ (प्रसन्न) रहें ॥ २५ ॥

जीवे तुलागते सर्वधातुमूलातुलं जगत् ॥
तथापि धात्री संपूर्णा धनधान्यसुवृष्टिभिः ॥ २६ ॥

तुलाराशिपर बृहस्पति होय तो जगत्में धातु मूल आदि सब द्रव्य बहुत हों पृथ्वीपर धन धान्य, सुंदर वर्षा होवे ॥ २६ ॥

मदोद्धतानां भूपानां युद्धे जनपदक्षयः ॥
अतुष्टा वृष्टिरत्युग्रं डामरं कीटगे गुरौ ॥ २७ ॥

वृश्चिकराशिका बृहस्पति होय तो मदोन्मत्त राजाओंके युद्धमें देशका क्षय हो वर्षा खराब हो दारुण युद्ध हो ॥ २७ ॥

जीवे चापगते भीतिरीतिर्भूपभयं महत् ॥
अतुष्टा वृष्टिरत्युग्रा पीडा निःस्वाः क्षितीश्वराः ॥ २८ ॥

धनराशिपर बृहस्पति होय तब प्रजामें भय टीडी आदि उपद्रवोंका भय राजाओंका महान् भय हो वर्षा अच्छी नहीं हो अत्यंत पीडा हो राजालोग निर्धन होवें ॥ २८ ॥

अशत्रवो जना धात्री पूर्णा सस्यार्घवृष्टिभिः ॥
वीतरोगभयाः सर्वे मकरस्थे सुरार्चिते ॥ २९ ॥

मकरका बहस्पति होय तब पृथ्वीपर सब मनुष्योंको मित्रता रहे वर्षा बहुत हो खेती बहुत निजपे सबलोग कुशलपूर्वक रहें ॥ २९ ॥

सुरस्पर्द्धिजना धात्री फलपुष्पार्घवृष्टिभिः ॥
संपूर्णा कुंभगे जीवे वीतरोगयुता धरा ॥ ३० ॥

कुंभका बृहस्पति होय तब पृथ्वीपर मनुष्य देवताओंकी बराबर रहैं फल पुष्प वर्षा बहुत हो, पृथ्वीपर क्षेम आरोग्य रहैं ॥ ३० ॥

धान्यार्घवृष्टिसंपूर्णा क्वचिद्रोगः क्वचिद्भयम् ॥
न्यायमार्गरता भूपाः सर्वे मीनास्थिते गुरौ ॥ ३१ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां बृहस्पतिचारः ॥

मीनका बृहस्पति होय तब अन्न सस्ता हो, वर्षा बहुत हो, कहीं रोग हो, कहीं भय हो, संपूर्ण राजा न्यायमार्गमें स्थित रहैं ॥ ३१ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां गुरुचारः ।

सौम्यमध्यमयाम्येषु मार्गेषु त्रित्रिवीथयः ॥
शुक्रस्य दस्रभाद्यैश्च पर्यायश्च त्रिभिस्त्रिभिः ॥ १ ॥

उत्तर, मध्यम, दक्षिण इन मार्गोंमें तीन २ वीथी कही हैं तहां अश्विनी आदि तीन २ नक्षत्रोंपर शुक्रके पर्याय करके यथाक्रमसे जानना ॥ १ ॥

नागेभैरावताश्चैव वृषभो गोजरद्गवाः ॥
मृगाजदहनाख्यास्स्युर्याम्यांता वीथयो नव ॥ २ ॥

जैसे कि नाग १ गज २ ऐरावत ३ वृषभ ४ गौ ५ जरद्गव ६ मृग ७ अज ८ दहन ९ ये नव वीथी दक्षिणपर्यंत हैं ॥ २ ॥

सौम्यमार्गेषु तिसृषु चरन् वीथिषु भार्गवः ॥
धान्यार्घवृष्टिसस्यानां परिपूर्तिं करोति सः ॥ ३ ॥

तहां उत्तरमार्गकी तीन वीथियोंमें विचरताहुआ शुक्र अन्न सस्ता वर्षा खेतीकी वृद्धि यह फल करता है ॥ ३ ॥

मध्यमार्गेषु तिसृषु करोत्येषां तु मध्यमः ॥
याम्यमार्गेषु तिसृषु तेषामेवाधमं फलम् ॥ ४ ॥

और मध्यमार्गकी तीन वीथियोंमें विचरे तब सब वस्तु मध्यम फल होता है दक्षिणकी तीन वीथियोंमें विचरे तब अन्नादिक सब वस्तु मँहिगी होवैं॥४॥

पूर्वस्यां दिशि जलदः शुभकृत् पितृपंचके ॥
स्वातित्रये पश्चिमायां सम्यक् शुक्रस्तथाविधः ॥ ५ ॥

मघा आदि पांच नक्षत्रोंपर प्राप्त हुआ शुक्र पूर्वदिशामें उदय हो वा अस्त होय वर्षा अच्छी हो स्वाति आदि तीन नक्षत्रोंपर प्राप्त हुआ पश्चिम दिशामें उदय वा अस्त हो तबभी ऐसा ही शुभफल जानना ॥ ५ ॥

विपरीते त्वनावृष्टिर्वृष्टिकृद्वधसंयुतः ॥
कृष्णाष्टम्यां चतुर्दश्याममावास्यां यदा सितः ॥ ६ ॥
उदयास्तमयं याति तदा जलमयी क्षितिः ॥
मिथः सप्तमराशिस्थौ पश्चात्प्राग्वीथिसंस्थितौ ॥ ७ ॥
गुरुशुक्रावनावृष्टिदुर्भिक्षमरणप्रदौ ॥
कुजज्ञजीवरविजाः शुक्रस्याग्रेसरा यदा ॥ ८ ॥
युद्धातिवायुदुर्भिक्षं जलनाशकरास्तदा ॥
कृष्णरक्तस्तनुः शुक्रो पवनानां विनाशकृत् ॥ ९ ॥

इति नारदीयसंहितायां शुक्रचारः ।

इससे विपरीत हो तो विपरीत फल जानना और बुधसहित शुक्र होय तब वर्षा होती है कृष्णपक्षकी अष्टमी चतुर्दशी तथा अमावास्याको शुक्र उदयहो अथवा अस्त होय तो पृथ्वी पर वर्षा बहुतहो और बृहस्पति तथा शुक्र आपसमें सातवीं राशिपर स्थित होकर प्राग्वीथि और पश्चिमवीथि पर स्थित होवें तो वर्षा नहीं हो दुर्भिक्षा तथा मरणहो और मंगल बुध बृहस्पति शनि ये शुक्र के आगे स्थित होवें तो युद्ध हो पवन बहुत चले दुर्भिक्ष होवे वर्षा नहीं हो शुक्रका तारा काला वर्ण तथा लाल वर्ण होय तो यवनों (म्लेच्छों) का नाश हो ॥ ६–९ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां शुक्रचारः ।

श्रवणानिलहस्तार्द्राभरणीभाग्यभेषु च ॥
चरन्शनैश्चरो नृणां सुभिक्षारोग्यसस्यकृत् ॥ १ ॥

श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी, पूर्वाफाल्गुनी इन नक्षत्रों पर विचरताहुआ शनि मनुष्योंको शुभ है सुभिक्ष कुशल करता है ॥ १ ॥

जलेशसार्पमाहेंद्रनक्षत्रेषु सुभिक्षकृत् ॥
क्षुच्छस्त्रावृष्टिदो मूलेहिर्बुध्न्यान्त्युभयोर्भयम् ॥ २ ॥

शतभिषा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, इनपर होय तबभी सुभिक्षहो मूलपर होय तो दुर्भिक्ष, युद्ध, अनावृष्टि यह फलहो उत्तराभाद्रपदा तथा रेवती पर होय तब प्रजामें भय हो ॥ २ ॥

मूर्ध्नि चैकं मुखे त्रीणि गुह्ये द्वे नयने द्वयम् ॥
हृदये पंच ऋक्षाणि वामहस्ते चतुष्टयम् ॥ ३ ॥

जन्मके नक्षत्रसे शनिके नक्षत्रतक गिनै फिर एक नक्षत्र मस्तकपर धरै, मुखपर तीन, गुदापर दो, नेत्रोंपर दो, हृदयपर पांच और बायें हाथपर चार नक्षत्र रक्खे ॥ ३ ॥

वामपादे तथा त्रीणि देया त्रीणि च दक्षिणे ॥
दक्षहस्ते च चत्वारि जन्मभाद्रविजः स्थितः ॥ ४ ॥

बायें पैरपर तीन दहिने पैरमें तीन दहिने हाथपर चार ऐसे जन्मके नक्षत्रसे शनिके नक्षत्रतक रखना ॥ ४ ॥

रोगो लाभस्तथा हानिर्लाभः सौख्यं च बन्धनम् ॥
आयासं चेष्टयात्रा च ह्यर्थलाभः क्रमात्फलम् ॥ ५ ॥

इनका फल यथाक्रमसे रोग, लाभ, हानि, लाभ, सौख्य, बंधन, दुःख, मनोवांछित यात्रा, द्रव्यप्राप्ति, यह फल जानना ॥ ५ ॥

वक्रकृद्रविजस्येह तद्वक्रफलमीदृशम् ॥
करोत्येवं समः साम्यं शीघ्रगो व्युत्क्रमात्फलम् ॥ ६ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां शनिचारः ॥

शनि वक्री होय तब अशुभ फल जानना, मध्यम गतिपर रहै तब मध्यम फल जानना, शीघ्रगति होय तो शुभ फल जानना ॥ ६ ॥

इति श्रीनारसंहिताभाषाटीकायां शनिचारः ।

अमृतास्वादनाद्राहुः शिरच्छिन्नोपि सोऽमृतः ॥
विष्णुना तेन चक्रेण तथापि ग्रहतां गतः ॥ १ ॥

अमृत चषनेके कारणसे राहुका शिर विष्णु भगवानने सुदर्शनचक्रसे काट-दिया था तो भी अमृत पीकर अमर हो ग्रह होगया ॥ १ ॥

वरेण धातुरर्केंदू ग्रसते सर्वपर्वणि ॥
विक्षेपावननेर्वशाद्राहुर्दूरं गतस्तयोः ॥ २ ॥

फिर ब्रह्माजीके वरसे आमावस्या पूर्णिमा पर्वणीविषे सूर्यचंद्रमाको ग्रसता है तहां विक्षेप होनेसे और हीनवंश (असुर) होनेसे राहु तिन सूर्य चंद्रमासे दूर चलागया है ॥ २ ॥

षण्मासवृद्ध्या ग्रहणं शोधयेद्रविचन्द्रयोः ॥
पर्वेशाः स्युस्तथा सप्त देवाः कल्पादितः क्रमात् ॥ ३ ॥

छह २ महीनोंके अंतरमें सूर्य चंद्रमाका ग्रहण होता है तहां कल्पकी आदिसे इस मर्यादाके ग्रहणोंमें यथाक्रमसे सात देवता अधिपति होते हैं ॥ ३ ॥

ब्रह्मेंद्विंद्रधनाधशिवरुणाग्नियमाह्वयाः ॥
पशुसस्यद्विजातीनां वृद्धिर्ब्राह्मे च पर्वणि ॥ ४ ॥

ब्रह्मा, इंद्र, चंद्रमा, कुबेर, वरुण, अग्नि, यम ये सात हैं तहां ब्राह्मसंज्ञक ग्रहणमें अर्थात् जिसका अधिपति ब्रह्मा हो ऐसे ग्रहणमें पशु, खेती, ब्राह्मण इन्होंकी वृद्धि हो ॥ ४ ॥

तद्वदेव फलं सौम्ये बुधपीडा च पर्वणि ॥
विरोधो भूभुजां दुःखमैंद्रे सस्यविनाशनम् ॥ ५ ॥

चंद्रसंज्ञक ग्रहणमें भी यही फल हो परंतु पंडितजनोंको पीडा हो इंद्रसंज्ञक ग्रहणमें राजाओंका विरोध दुःख हो और खेतीका नाश हो ॥ ५ ॥

अर्थेशानामर्थहानिः कौबेरे धान्यवर्धनम् ॥
नृपाणामशिवं क्षेममितरेषां तु वारुणे ॥ ६ ॥

कुबेर संज्ञक ग्रहणमें साहूकारलोगोंके धनकी हानि हो और प्रजामें धान्यकी वृद्धि हो, वरुणसंज्ञक ग्रहणमें राजाओंको दुःख अन्य प्रजामें सुख हो ॥ ६ ॥

प्रवर्षणं सस्यवृद्धिः क्षेमं हौताशपर्वणि ॥
अनावृष्टिः सस्यहानिर्दुर्भिक्षं याम्यपर्वणि ॥ ७ ॥

अग्निसंज्ञक ग्रहणमें वर्षा अच्छी हो खेतीकी वृद्धि हो प्रजामें कुशल हो याम्य पर्वमें वर्षा नहीं हो खेतीकी हानि, दुर्भिक्ष हो ॥ ७ ॥

वेलाहीने सस्यहानिर्नृपाणां दारुणं रणम् ॥
अतिवेले पुष्पहानिर्भयं सस्यविनाशनम् ॥ ८ ॥

वेलाहीन अर्थात् स्पष्टसमयसे पहले ही ग्रहण होने लगजाय तो खेतीकी हानि, राजाओंका दारुण युद्ध हो अतिवेल उक्तसमयसे पीछे वा ज्यादे ग्रहण हो तो पुष्पोंकी हानि, भय, खेतीका नाश हो ॥ ८ ॥

एकस्मिन्नेव मासे तु चंद्रार्कग्रहणं यदा ॥
विरोधं धरणीशानामर्थवृष्टिविनाशनम् ॥ ९ ॥

जो एक ही महीनेमें चन्द्रमा सूर्य इन दोनोंका ग्रहण होय तो राजाओंका वैर हो धनका और वर्षाका नाश हो ॥ ९ ॥

ग्रस्तोदितावस्तमितौ नृपधान्यविनाशदौ ॥
सर्वग्रस्ताविनेंदूभौ क्षुद्वाय्वग्निभयप्रदौ ॥ १० ॥

ग्रहण होताहुआ उदय हो अथवा अस्त होय तो राजाका तथा धान्यका नाश हो सूर्य चंद्रमा इन दोनोंका सर्व ग्रहण होय तो दुर्भिक्ष, वायु, अग्नि इन्होंका भय हो ॥ १० ॥

द्विजादींश्च क्रमाद्धंति राहुर्दृष्टो दिगादितः ॥
दशैव ग्रासभेदाः स्युर्मोक्षभेदास्तथा दश ॥ ११ ॥

पूर्वआदि दिशाओंमें क्रमसे जिस दिशामें ग्रास दीखे तहां ब्राह्मण आदि चारों वर्णोंको नष्ट करता है जैसे पूर्वमें ब्राह्मण, दक्षिणमें राजा, इत्यादि ग्रासके दश भेद हैं और मोक्षके भी दश भेद हैं ॥ ११ ॥

न शक्या लक्षितुं देवैः किं पुनः प्राकृतैर्जनैः ॥
आनीय खेटान् सिद्धांतात्तेषां चारं विचिंतयेत् ॥ १२ ॥

वे सब भेद अच्छे प्रकारसे तो देवताओंसे भी नहीं देखेजाते हैं फिर साधारण मनुष्योंसे क्या देखेजावेंगे सिद्धान्तशास्त्रसे ग्रहोंको स्पष्टकर तिनके भेद विचारना चाहिये ॥ १२ ॥

शुभाशुभाप्तेः कालस्य ग्रहचारो हि कारणम् ॥
तस्मादन्वेषणीयं तत्कालज्ञानाय धीमता ॥ १३ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां राहुचारः ॥

समयकी शुभ अशुभ प्राप्ति करनेमें ग्रहोंका चारही कारण है इसलिये बुद्धिमान् मनुष्यने कालज्ञानके वास्ते वह कारण देखलेना चाहिये ॥ १३ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां राहुचारः ।

उत्पातरूपाः केतूनामुदयास्तमया नृणाम् ॥
दिव्यंतरिक्षा भौमास्ते शुभाशुभफलप्रदाः ॥ १ ॥

केतुका उदय अस्त होना मनुष्योंको उत्पातरूप कहा है सो स्वर्ग अंतरिक्ष भूमि इनमें शुभ अशुभ फलदायी उत्पात होने कहे हैं ॥ १ ॥

यज्ञध्वजास्त्रभवनरथवृक्षगजोपमाः ॥
स्तंभशूलगदाकारा अंतरिक्षाः प्रकीर्तिताः ॥ २ ॥

जैसे यज्ञध्वजा, अस्त्र, मंदिर, रथ, वृक्ष, हस्ती, शूल, स्तम्भ, गदा इनके आकार चिह्न किसीको आकाशमें दीखपडें वह अन्तरिक्ष उत्पात कहा है॥२॥

नक्षत्रसंस्थिता दिव्या भौमा ये भूमिसंस्थिताः ॥
एकोप्यमित्ररूपः स्याज्जंतूनामशुभाय वै ॥ ३ ॥

नक्षत्रोंमें स्थित कोई उत्पात दीखें वे दिव्य उत्पात कहे हैं भूमिमें जो उत्पात दीखें वे भौम उत्पात कहे हैं इनमेंसे एकभी उत्पात शत्रुरूप है प्राणियोंको अशुभफलदायी जानना ॥ ३ ॥

यावतो दिवसात्केतुर्दृश्यते विविधात्मकः ॥
तावन्मासैः फलं वाच्यं मासैश्चैव तु वत्सराः ॥ ४ ॥

जितने दिनोंतक केतु ग्रह (शिखावाला तारा) उदय रहे उतने ही महीनोंतक फल जानना और जितने महीनोंतक दीखे उतनेही वर्षोंतक शुभ अशुभ फल जानना ॥ ४ ॥

ये दिव्याः केतवस्तेपि शश्वत्तीव्रफलप्रदाः ॥
अन्तरिक्षा मध्यफला भौमा मन्दफलप्रदाः ॥ ५ ॥

जो आकाशमें केतु दीखें वे निरन्तर दारुण फल करते हैं और जो आकाशमें उत्पात दीखते हैं वे मध्यम फलदायी हैं, पृथ्वीके उत्पात मन्दफलदायी हैं ॥ ५ ॥

ह्रस्वः स्निग्धः सुप्रसन्नः श्वेतकेतुः सुभिक्षकृत् ॥
क्षिप्रादस्तमयं याति दीर्घकेतुः सुवृष्टिकृत् ॥ ६ ॥

छोटासा चिकना स्वच्छ सफेद पूँछवाला ऐसा केतु शुभदायक है जो शीघ्रही छिपजाय ऐसा दीर्घ केतु भी शुभदायक है ॥ ६ ॥

अनिष्टदो धूमकेतुः शक्रचापस्य सन्निभः ॥
द्वित्रिचतुःशूलरूपः स च राज्यांतकृत्तदा ॥ ७ ॥

धूमासरीखा तथा इंद्रधनुषके वर्ण सरीखा केतु अशुभ है और दो, तीन, चार शूलोंका रूप होय तो राज्यको नष्ट करै ॥ ७ ॥

मणिहारसुवर्णाभा दीप्तिमंतोर्कसूनवः ॥
केतवोभ्युदिताः पूर्वापरयोर्नृपघातकाः ॥ ८ ॥

मणि, हार, सुवर्ण, इन सरीखी कांतिवाले केतु उदय होयँ तो पहिले और पिछले राजाओंको नष्ट करैं वे सूर्यके पुत्र कहलाते हैं ॥ ८ ॥

बंधूकबिंबक्षतजशुकतुण्डाग्निसन्निभाः ॥
हुताशनप्रदास्तेपि केतवश्चाग्निसूनवः ॥ ९ ॥

बन्धूक याने दुपहरिया नाम फूल सरीखे तथा लालवर्ण तथा तोता सरीखे हरेवर्ण, अग्निसमान वर्ण ये केतु अग्निभय करते हैं ये अग्निके पुत्र कहे हैं ॥ ९ ॥

व्याधिप्रदा मृत्युसुता वक्रास्ते कृष्णकेतवः ॥
भूसुता जलतैलाभा वर्तुलाः क्षुद्भयप्रदाः ॥ १० ॥

टेढे आकारवाले तथा कालेवर्ण केतु मृत्युके पुत्र हैं वे रोगदायक हैं जलके समान तथा तेल समान कांतिवाले गोलवर्ण केतु भूमिके पुत्र कहे हैं वे दुर्भिक्षका भय करते हैं ॥ १० ॥

क्षेमः सुभिक्षदाः श्वेताः केतवः सोमसूनवः ॥
पितामहात्मजः केतुस्त्रिवर्णास्त्रिशिखान्विताः ॥ ११ ॥

सफेद वर्णवाले केतु चन्द्रमाके पुत्र कहे हैं वे क्षेम कुशल और सुभिक्ष करनेवाले हैं, ब्रह्माका पुत्र केतु तीन वर्णोंवाला तथा तीन शिखाओंवाला कहा है ॥ ११ ॥

ब्रह्मदंडाह्वयः केतुः प्रजानामंतकृत्सदा ॥
ऐशान्यां भार्गवसुताः श्वेतरूपास्त्वनिष्टदाः ॥ १२ ॥

वह ब्रह्मदण्ड नामक केतु है सदा प्रजाको नष्ट करनेवाला है सफेद रूपवाले केतु ईशान दिशामें उदय होते हैं वे शुक्रके पुत्र अशुभफलदायी हैं ॥ १२ ॥

अनिष्टदाः पंगुसुता द्विशिखाः कनकाह्वयाः ॥
विकचाख्या गुरुसुता नेष्टा याम्यास्थिता अपि ॥ १३ ॥

दो शिखाओंवाले सुवर्णसरीखे वर्णवाले केतु शनिके पुत्र हैं वे अशुभ कहे हैं । विकच नामक केतु दक्षिण दिशामें उदय होते हैं वे बृहस्पतिके पुत्र अशुभ हैं ॥ १३ ॥

सूक्ष्माः शुक्ला बुधसुता घोराश्चौरभयप्रदाः ॥
कुजात्मजाः कुंकुमाख्या रक्ताः शूलास्त्वनिष्टदाः ॥ १४ ॥

सूक्ष्मरूप, श्वेतवर्ण केतु बुधके पुत्र हैं वे घोर हैं चोरोंका भय करते हैं । लाल वर्णवाले कुंकुम नामक केतु मंगलके पुत्र कहे हैं वे अशुभ फलदायक हैं ॥ १४ ॥

अग्निजा विश्वरूपाख्या अग्निवर्णाः शुभप्रदाः ॥
अरुणाः श्यामलाकाराः पापपुत्राश्च पापदाः ॥ १५ ॥

विश्वरूप नामक केतु अग्निके पुत्र हैं वे अग्निसमान वर्णवाले शुभदायक हैं । लाल तथा श्यामवर्ण केतु पापके पुत्र हैं वे अशुभ फलदायक हैं ॥ १५ ॥

शुक्रजा ऋक्षसदृशाः केतवः शुभदायकाः ॥
कंकाख्यब्राह्मजाः श्वेताः कष्टा वंशलतोपमाः ॥ १६ ॥

नक्षत्र समान आकारवाले साधारण तारासमान केतु शुक्रके पुत्र शुभदायक हैं । कंकनामक श्वेतवर्ण केतु बांस तथा लतासमान आकार उदय होते हैं वे कष्टदायक कहे हैं ॥ १६ ॥

कबंधाख्याः कालसुता भस्मरूपास्त्वनिष्टदाः ॥
विधिपुत्राह्वयाः शुक्लाः केतवो नेष्टदायकाः ॥ १७ ॥

कबंधनामक कालके पुत्र हैं वे भस्मसमान वर्णवाले अशुभ कहे हैं और सफेद वर्णके केतु ब्रह्माके पुत्र हैं वे शुभदायक नहीं हैं ॥ १७ ॥

कृत्तिकासु समुद्भूतो धूमकेतुः प्रजांतकृत् ॥
प्रासादशैलवृक्षेषु जातो राज्ञां विनाशकृत् ॥ १८ ॥

कृत्तिका नक्षत्रोंके पास केतु उदय होय तो प्रजाका नाश करे देवमंदिर पर्वत बड़ावृक्ष इनके ऊपर केतु उदय हो तो राजाओंका नाश करे ॥ १८ ॥

सुभिक्षकृत्कुमुदाख्यः केतुः कुमुदसन्निभः ॥
आवर्तकेतुः शुभदः श्वेतश्चावर्तसन्निभः ॥ १९ ॥

कुमुद नामक केतु कुमोदिनी पुष्पसरीखा होता है वह सुभिक्ष फलदायक है भौंहरीदार सफेद केतु आवर्त्तसंज्ञक कहा है, वह शुभदायक है ॥ १९ ॥

संवर्तकेतुः संध्यायां त्रिशिरा नेष्टदारुणः ॥ २० ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां केतुचारांतर्गतग्रहचाराध्यायो द्वितीयः ॥ २ ॥

सन्ध्यासमयमें तीन शिखाओंवाला उदय हो वह संवर्त्त केतु कहा है सो दारुण अशुभ फलकारक है ॥ २० ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां केतुचारांतर्गतग्रहचाराध्यायो द्वितीयः ॥२॥

ब्राह्मं दैवं मानुषं च पित्र्य सौरं च सावनम् ॥
चांद्रमार्क्षं गुरोर्मानमिति मानानि वै नव ॥ १ ॥

ब्राह्म, दैव, मानुष, पित्र्य, सौर, सावन, चांद्र, नाक्षत्र, गुरुमान ऐसे नव प्रकारके वर्ष मासादि प्रमाण हैं ॥ १ ॥

एषां तु नवमानानां व्यवहारोऽत्र पंचभिः ॥
तेषां पृथक्पृथक्कार्यं वक्ष्यते व्यवहारतः ॥ २ ॥

इन नव भेदोंमें पांच प्रकारोंसे व्यवहार होता है तिनके जुदेजुदे कार्य व्यवहार कहते हैं ॥ २ ॥

ग्रहणं निखिलं कार्यं गृह्यते सौरमानतः ॥
विधेर्विधानं स्त्रीगर्भं सावनेनैव गृह्यते ॥ ३ ॥

ग्रहणके सब कार्य सौर मानसे किये जाते हैं किसी कार्यका विधान स्त्रीका गर्भ सावनमाससे गिनाजाता है ॥ ३ ॥

प्रवर्षणं मेघगर्भो नाक्षत्रेण प्रगृह्यते ॥
यात्रोद्वाहव्रतक्षौरतिथिवर्षादिनिर्णयः ॥ ४ ॥

वर्षाकाल मेघका गर्भ ये नाक्षत्र मासके क्रमसे ग्रहण किये जाते हैं ॥ यात्रा, विवाह, व्रत, क्षौर, तिथि वर्षादिका निर्णय ॥ ४ ॥

पर्ववास्तूपवासादि कृत्स्नं चांद्रेण गृह्यते ॥
गृह्यते गुरुमानेन प्रभवाद्यब्दलक्षणम् ॥ ५ ॥

पर्वणी वास्तुकर्म व्रत नियम यह चांद्रमाससे ग्रहण किये जाते हैं अर्थात् चैत्र शुक्ल पक्षसे जो संवत् लगता है वही क्रम लिया जाता है और प्रभ-वादिक संवत्सरोंका लक्षण गुरुमानसे ग्रहण किया जाता है ॥ ५ ॥

भचक्रगतिरार्क्ष स्यात्सावनं त्रिंशता दिनैः ॥
सौरं संक्रमणं प्रोक्तं चांद्रं प्रतिपदादिकम् ॥ ६ ॥

नक्षत्रोंकी गतिके अनुसार गिना जाय वह आर्क्ष (नक्षत्र मास) कहा है और पूरे तीस दिनका होय वह सावन मास कहा है । सूर्यकी संक्रांतिके क्रमसे हो वह सौर मास है प्रतिपदा आदि क्रमसे चांद्रसंज्ञक मास होता है ६

तत्तन्मासैर्द्वादशभिस्तत्तदब्दो भवेत्ततः ॥
गुरुचारेण संभूताः षष्टचब्दाः प्रभवादयः ॥ ७ ॥

तिन बारह महीनों करिके तिसी २ नामवाला वर्ष होता है तहां बृहस्प-तिकी राशिक्रमसे प्रभव आदि साठ संवत्सर होते हैं ॥ ७ ॥

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोथ प्रजापतिः ॥
अंगिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथेश्वरः ॥ ८ ॥

प्रभव १ विभव २ शुक्ल ३ प्रमोद ४ प्रजापति ५ अंगिरा ६ श्रीमुख ७ भाव ८ युवा ९ धाता १० ईश्वर ११ ॥ ८ ॥

बहुधान्यः प्रमाथी च विक्रमो वृषसंज्ञकः ॥
चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवो व्ययः ॥ ९ ॥

बहुधान्य १२ प्रमाथी १३ विक्रम १४ वृष १५ चित्रभानु १६ सुभानु १७ तारण १८ पार्थिव १९ व्यय २० ॥ ९ ॥

सर्वजित् सर्वधारी च विरोधी विकृतः खरः ॥
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ ॥ १० ॥

सर्वजित् २१ सर्वधारी २२ विरोधी २३ विकृत २४ खर २५ नंदन २६ विजय २७ जय २८ मन्मथ २९ दुर्मुख ३० ॥ १० ॥

हेमलंबो विलंबश्च विकारी शार्वरी प्लवः ॥
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसुपराभवौ ॥ ११ ॥

हेमलंब ३१ विलंब ३२ विकारी ३३ शार्वरी ३४ प्लव ३५ शुभकृत् ३६ शोभन ३७ क्रोधी ३८ विश्वावसु ३९ पराभव ४० ॥ ११ ॥

प्लवंगः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत् ॥
परिधावी प्रमादी च आनंदो राक्षसोनलः ॥ १२ ॥

प्लवंग ४१ कीलक ४२ सौम्य ४३ साधारण ४४ विरोधकृत् ४५ परिधावी ४६ प्रमादी ४७ आनंद ४८ राक्षस ४९ अनल ५० ॥ १२ ॥

पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मती ॥
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षी क्रोधनः क्षयः ॥ १३ ॥

पिंगल ५१ कालयुक्त ५२ सिद्धार्थी ५३ रौद्र ५४ दुर्मति ५५ दुन्दुभि ५६ रुधिरोद्गारी ५७ रक्ताक्षी ५८ क्रोधन ५९ क्षय ६० ऐसे ये ६० वर्ष हैं ॥१३॥

युगं स्यात्पंचभिर्वर्षैर्युगानि द्वादशैव ते ॥
तेषामीशाः क्रमाज्ज्ञेया विष्णुर्देवपुरोहितः ॥ १४ ॥

पांचवर्षोंका युग होता है फिर वे बारह युग होते हैं उन्होंके स्वामी क्रमसे विष्णु १ बृहस्पति २ ॥ १४ ॥

पुरंदरो लोहितश्च त्वष्टाहिर्बुध्नसंज्ञकः ॥
पितरश्च ततो विश्वे शशीन्द्राग्नी भगोऽश्विनौ ॥ १५ ॥
युगस्य पंचवर्षेशा वह्नीनेंद्वब्जजेश्वराः ॥
तेषां फलानि प्रोच्यन्ते वत्सराणां पृथक्पृथक् ॥ १६ ॥

इन्द्र ३ भौम ४ त्वष्टा ५ अहिर्बुध्न्य ६ पितर ७ विश्वेदेवा ८ चन्द्रमा ९ इन्द्राग्नि १० भग ११ अश्विनीकुमार १२ ये बारह देवता कहे हैं। तहां एक युगके पांच वर्षेश कहे हैं । अग्नि १ सूर्य २ चन्द्रमा ३ ब्रह्मा ४ शिव ५ ये पांच जानने ॥ १५ ॥ १६ ॥

क्वचिद्वृद्धिः क्वचिद्धानिः क्वचिद्भीतिः क्वचिद्रुदः ॥
तथापि मोदते लोकः प्रभवाब्दे विमत्सरः ॥ १७ ॥

तिन साठ ६० संवत्सरोंके फल कहते हैं । प्रभवनामक वर्षमें कहीं हानि

हो कहीं वृद्धि हो कहीं भय हो कहीं रोग हो तो भी सम्पूर्ण प्रजा वैर रहित होकर सुखी रहे ॥ १७ ॥

आन्वीक्षिकीसु निरताः सप्रजाः स्युः क्षितीश्वराः ॥
कर्षकाभिमता वृष्टिर्विभवाब्दे विवैरिणः ॥ १८ ॥

विभवनाम वर्षमें राजा प्रजा नीतिमें प्रवृत्त रहें, किसानलोगोंके मनके अनुसार वर्षा हो, लोगोंमें आपसमें प्रीति बढे ॥ १८ ॥

सकलत्रात्मजाञ्छश्वल्लालयंत्यबला जनाः ॥
अमरस्पर्द्धिनः शुक्ले वत्सरे विगतारयः ॥ १९ ॥

शुक्ल नामक वर्षमें पुरुष निरंतर स्त्रीपुत्रोंका सुख भोगें और स्त्रियां पुत्रोंका सुख भोगैं देवताओंके समान आनन्दवृद्धि हो प्रजामें शत्रुता न रहै ॥ १९ ॥

अतिव्याध्यार्दिता लोकाः क्षितीशाः कलहोत्सुकाः ॥
प्रमोदाब्दे प्रमोदन्ते तथापि निखिला जनाः ॥ २० ॥

प्रमोदनाम वर्षमें लोगोंमें अत्यंत बीमारी रहै राजाओंमें कलह रहै तोभी संपूर्ण प्रजा सुख भोगैं ॥ २० ॥

क्लेशः क्वचिन्न प्रेक्ष्यंते स्वजनानामनामयः ॥
एवं वै मोदते लोका प्रजापतिशरद्युतः ॥ २१ ॥

प्रजापतिनामक वर्षमें प्रजामें दुःख कभी नहीं हो स्वजनोंके साथ मित्रता बढे रोग नहीं हो ऐसे प्रजामें आनन्द रहै ॥ २१ ॥

अतिथिस्वजनैस्सार्द्धमन्नं बोभुज्यते मधु ॥
पेपीयन्ते कामिनीभिरंगिराऽब्दे निरंतरम् ॥ २२ ॥

अङ्गिरा नामक वर्षमें अतिथि जन तथा स्वजन मनुष्योंके साथ अन्न मिष्ट पदार्थ भोजन किया जाय स्त्रियाँ अच्छे प्रकारसे रमण करैं ॥ २२ ॥

श्रीमुखेऽब्दे दुग्धपूर्णा गोकर्णवलयेव भूः ॥
सस्यपीता वरावारि गावस्तुंगपयोधराः ॥ २३ ॥

श्रीमुख नामक वर्षमें पृथ्वीपर दूध देनेवाली गौओंकी वृद्धि हो, खेतियोंमें वर्षा बहुत अच्छी हो गौओंके दूधकी वृद्धि हो ॥ २३ ॥

स्युर्भूभुजो प्रभाभाजः प्रभंजनभुजः परे ॥
भावाब्दे भूसुरग्रामभ्रमणं लोभतः सदा ॥ २४ ॥

भाव नामक वर्षमें राजाओंके तेजकी वृद्धि, शत्रुओंको दुःख हो, ब्राह्मण लोगोंके समूह लोभके कारण प्रजामें भ्रमते रहैं ॥ २४ ॥

सदाऽजस्त्रं रमयाति युवाब्दे युवतीजनः ॥
युवानो निखिला लोकाः क्षितिश्चापि फलोत्कटा ॥ ॥ २५ ॥

युवा नामक वर्षमें स्त्रियां निरन्तर रमण करें और पृथ्वी पर फल बहुत उत्पन्न होवें ॥ २५ ॥

धात्री धात्रीव लोकानामभया च फलप्रदा ॥
धात्रब्दे धरणीनाथाः परस्परजयोत्सुकाः ॥ २६ ॥

धाता नामक वर्षमें पृथ्वी लोगोंको माताके समान सुख देनेवाली हो, भय नहीं हो, पृथ्वी पर फल बहुत हों, राजा लोग आपसमें युद्ध करनेकी इच्छा करें ॥ २६ ॥

ईश्वराब्दे स्थिराः क्ष्मेशा जगदानंदिनी मही ॥
अध्वरे निरता विप्राः स्वस्वमार्गे रताः परे ॥ २७ ॥

ईश्वर नामक वर्षमें राजा लोग सुखी रहैं पृथ्वी पर सब मनुष्य बहुत सुखी रहैं, ब्राह्मण लोग यज्ञ करनेमें तत्पर रहैं अन्य लोग अपने अपने कामर्मे तत्पर रहैं ॥ २७ ॥

बहुधान्ये च बहुभिर्धान्यैः पूर्णाखिला धरा ॥
प्रभूतपयसो गावो राजानः स्युर्विवैरिणः ॥ २८ ॥

बहुधान्य नामक वर्षमें पृथ्वी बहुत धान्यसे परिपूर्ण होवे, गौवें बहुत दूध देवें राजाओंमें वैर नहीं रहै ॥ २८ ॥

बलाहका न मुश्चंति कुत्रचित्प्रचुरं पयः ॥
प्रमाथ्यब्दे वीतरागास्तथापि निखिला जनाः ॥ २९ ॥

प्रमाथी नामक वर्षमें मेघ कहीं विशेष वर्षा नहीं करें मनुष्योंमें आपसमें वैर होवे ॥ २९ ॥

प्रवहंति जल स्वच्छं स्त्रवंति प्रचुरं पयः ॥
विक्रमाब्देऽखिलाः क्ष्मेशा विक्रमाक्रांतभूमयः ॥ ३० ॥

विक्रम नामक वर्षमें वर्षा बहुत हो सम्पूर्ण राजा लोग सेनाओंसे भरपूर होके पृथ्वी दबानेका उद्योग करें ॥ ३० ॥

विविधैरन्नपानाद्यैर्हृष्टपुष्टांगचेतसः ॥
मदोन्मत्ताखिला लोका वृषाब्दे वृषसन्निभाः ॥ ३१ ॥

वृष नामक वर्षमें अन्नादिकोंके प्रभावसे सब मनुष्य हृष्टपुष्टशरीवाले मदोन्मत्त होकर वृष (बैल) समान पुष्ट रहैं ॥ ३१ ॥

विचित्रा वसुधा चित्रपुष्पवृष्टिफलादिभिः ॥
चित्रभानुशरद्येषा भाति चित्रांगना यथा ॥ ३२ ॥

चित्रभानु वर्षमें विचित्र पुष्प फलादिकोंके प्रभावसे यह पृथ्वी ऐसी विचित्र शोभित होवे कि जैसे चित्रांगना (सुंदरी नारी) शोभित हो ॥३२॥

नन्दन्तीह जनाः सर्वे भूमिर्भूरिफलान्विता ॥
सुभानुवत्सरे भूमिर्भीमभूपालविग्रहा ॥ ३३ ॥

सुभानु नामक वर्षमें पृथ्वी बहुत फलोंसे भरपूर हो, सब मनुष्य आनंद करैं राजालोगोंका युद्ध हो ॥ ३३ ॥

प्रतरन्त्युडुपोपायैः सरितोर्थाय सन्ततम् ॥
तारणाब्दे त्वतुलिता अर्थवंतो हि जंतवः ॥ ३४ ॥

तारण नामक वर्षमें प्रयोजनके वास्ते निरंतर नौकाके उपायोंकरके सब मनुप्य नदियोंसे पार गमन करैं और बहुत धनका संचय करैं ॥ ३४ ॥

पतन्ति करकोपेताः पयोधारा निरंतरम् ॥
पापादपेतमनसः पार्थिवाब्दे तु पार्थिवाः ॥ ३५ ॥

पार्थिव नामक वर्षमें ओला सहित निरंतर वर्षा हो राजालोग अपने मनमें पापका चिंतवन न करैं ॥ ३५ ॥

दीप्यते वसुधा वीरभटवारणवाजिभिः ॥
व्यपेतव्याधयः सर्वे व्ययाब्दे तु व्ययान्विताः ॥ ३६ ॥

व्ययनाम वर्षमें शूरवीर हस्ती घोडे इन्होंसे पृथ्वी परिपूर्ण, प्रजामें बीमारी नहीं हो सब मनुष्य द्रव्यका खर्च बहुत करैं ॥ ३६ ॥

गीर्वाणपूर्वगीर्वाणान् गर्वनिर्भरचेतसः ॥
सर्वजिद्वत्सरे सर्व उर्वीशान् हंति भूमिपान् ॥ ३७ ॥

सर्वजित् नामक वर्षमें गर्वसे भरपूर हुए संपूर्ण पृथ्वीके राजालोग देवता तथा दैत्योंको नष्ट करैं अथात् पृथ्वीपर बहुत सुख बढै ॥ ३७ ॥

सर्वधारीवत्सरेऽस्मिन् जगदानंदिनी धरा ॥
प्रशांतवैरा राजानः प्रजापालनतत्पराः ॥ ३८ ॥

सर्वधारी नामक वर्षमें पृथ्वीपर सबजगत् आनंद होवे राजालोग आपसमें वैरभाव नहीं करैं अपनी २ प्रजापालनमें तत्पर रहैं ॥ ३८ ॥

विरोधं सततं कुर्वत्यन्योन्यं क्षितिपाः प्रजाः ॥
विरोधिवत्सरे भूमिर्भूरिवारिधरैर्वृता ॥ ३९ ॥

विरोधी नामक वर्षमें राजालोग आपसमें युद्ध करैं पृथ्वीपर वर्षा बहुत हो ॥ ३९ ॥

विकृतिः प्रकृतिं याति प्रकृतिर्विकृतिं तथा ॥
तथापि मोदते लोकस्तस्मिन् विकृतवत्सरे ॥ ४० ॥

विकृत नामक वर्षमें खराब नीच जन उत्तम पदवीको प्राप्त होवें और अच्छे जन निरादरको प्राप्त हों परंतु सबलोग सुखी रहैं ॥ ४० ॥

खराब्दे सततं सम्यग्बध्यन्ते पशवः प्रजाः ॥
राजानो विलयं यांति परस्परविरोधतः ॥ ४१ ॥

खर नामक वर्षमें संपूर्ण प्रजा तथा पशु बंधनमें प्राप्त होवें राजालोग आपसमें युद्ध करके नष्ट हो जायँ ॥ ४१ ॥

आनंददा धराजस्रं प्रजाभ्यः फलसंचयैः ॥
नन्दनाब्दे स्वहानिः स्यात्कोशधान्यविनाशकृत् ॥ ४२ ॥

नंदन नामक वर्षमें प्रजामें धान्य फल आदिकोंसे सब प्रजाको निरंतर आनंद रह और सोना चांदी आदि धनका व खजानेका नाश हो ॥ ४२ ॥

नश्यते वारिधाराभिः पूर्वकृष्यखिलं फलम् ॥
राजभिश्चापरं सर्वं विजयाब्दे जयेप्सुभिः ॥ ४३ ॥

विजय नामक वर्षमें बहुत वर्षा होनेसे पहिली खेती (सामणू) का नाश हो और पिछली खेतीके समय राजाओंके युद्धादिकका उपद्रव होवे ॥ ४३ ॥

शैलोद्यानवनारामफलैरतुलिता मही ॥
जेगीयते वेणुनादैर्जयाब्दे च महाजलम् ॥ ४४ ॥

जय नामक वर्षमें पर्वत फुलवाड़ी वन बगीचा इन्होंमें सर्वत्र बहुत फलोंवाली पृथ्वी होवे और बहुत वर्षा होनेकी अत्यंत प्रशंसा होवे ॥ ४४ ॥

मन्मथाब्देखिला लोकास्तत्केलिपरलोलुपाः ॥
शालीक्षुयवगोधूमैर्नयनाभिनवा धरा ॥ ४५ ॥

मन्मथ नामक वर्षमें सब लोग काम क्रीडा करनेमें तत्पर रहैं, चावल आदि धान्य,ईख,जव, गेहूं इन्होंकरके पृथ्वी बहुत मनोहर शोभित हो ॥४५॥

दुर्मुखाब्देऽग्निरोगाः स्युः प्रचुरान्नं तथा पयः ॥
राजानः सप्रजास्तुष्टा निःस्वाश्च द्विजसत्तमाः ॥ ४६ ॥

दुर्मुख नामक वर्षमें अग्निभय तथा रोग हो अन्न बहुत हो दूधकी वृद्धि हो राजा प्रजामें आनंद रहे ब्राह्मण लोग दरिद्री होवें ॥ ४६ ॥

हेमलंबे नृपाः सर्वे परस्परविरोधिनः ॥
प्रजापीडात्वनर्घत्वं तथापि सुखिनो जनाः ॥ ४७ ॥

हेमलंब नामक वर्षमें सब राजालोग आपसमें वैरभाव करैं, प्रजामें पीडा अन्नादिकका भाव महंगा रहै तौ भी लोगोंमें सुख रहै ॥ ४७ ॥

विलंबवत्सरे राजविग्रहो भूरिवृष्टयः ॥
आतंकपीडिता लोकाः प्रभूतं चापरं फलम् ॥ ४८ ॥

विलंब नामक वर्षमें राजाओंका युद्ध हो वर्षा बहुत हो लोगोंमें रोगवृद्धि हो अन्य सब फल अच्छा हो ॥ ४८ ॥

विकारिणो विकार्यब्दे पित्तरोगादिभिर्नराः ॥
मेघो वर्षति संपूर्णं समुद्रवसनक्षितौ ॥ ४९ ॥

विकारी नामक वर्षमें मनुष्य पित्त आदि रोगोंसे पीडित होवें वर्षा बहुत हो पृथ्वीपर सर्वत्र जल फैल जावे ॥ ४९ ॥

शार्वरीवत्सरे सर्वसस्यवृद्धिरनुत्तमा ॥
चलिताचलसंकाशैः पयोदैरावृतं नभः ॥ ५० ॥

शर्वरीनामक वर्षमें पृथ्वीपर सब खेतियोंकी बहुत अच्छी वृद्धि हो और चलित अचल (पर्वत) समान कांतिवाले मेघोंकरके आकाश आच्छादित रहै ॥ ५० ॥

दीप्यंते सततं भूपाः प्लवाब्दे प्लवगा जनाः ॥
राजते पृथिवी सर्वा सततं विविधोत्सवैः ॥ ५१ ॥

प्लव नामक वर्षमें राजालोग निरंतर विराजमान होवें मनुष्य नौकामें स्थित हो गमन करैं संपूर्ण पृथ्वी अनेक उत्सवों करके शोभित हो ॥ ५१ ॥

शुभकृद्वत्सरे सर्वसस्यानामतिवृद्धयः ॥
नृपाणां स्नेहमन्योन्यं प्रजानां च परस्परम् ॥ ५२ ॥

शुभकृत् नामक वर्षमें संपूर्ण खेतियोंकी अत्यंत वृद्धि हो, राजाओंकी आपसमें मित्रता बढै प्रजामें प्रीति बढै ॥ ५२ ॥

शोभनाख्ये हायने तु शोभनं भूरि वर्त्तते
नृपाश्चैवात्र निर्वैराः सर्वसम्पद्युता धरा ॥ ५३ ॥

शोभन नामक वर्षमें पृथ्वीपर बहुत शोभन हो, और राजा निर्वैर हों, पृथ्वी संपूर्ण संपत्से युक्त हो ॥ ५३ ॥

क्रोध्यब्दे सततं रोगाः सर्वसस्यसमृद्धयः ॥
दंपत्योर्वैरमन्योन्यं प्रजानां च परस्परम् ॥ ५४ ॥

क्रोधी नामक वर्षमें प्रजामें निरंतर रोग होवे और संपूर्ण खेतियोंकी वृद्धि हो, स्त्रीपुरुषोंका आपसमें वैर हो ॥ ५४ ॥

शश्वद्विश्वावसावब्दे मध्यसस्यार्घवृष्टयः ॥
प्रचुराश्चौररोगाश्च नृपा लोभाभिभूतयः ॥ ५५ ॥

विश्वावसु नामक वर्षमें निरंतर मध्यम खेती उत्पन्न हों, मध्यम वर्षा तथा अन्नका भाव महंगा रहै रोग तथा चौरोंकी वृद्धि हो राजालोग लोभी होवें ॥ ५५ ॥

पराभवाब्दे राजानः प्राप्नुवंति पराभवम् ॥
आमयः क्षुद्रधान्यानि प्रभूतानि सुवृष्टयः ॥ ५६ ॥

पराभवनाम वर्षमें राजा लोग तिरस्कारको प्राप्त होवें रोग होवे और मटर मोट आदि तुच्छ धान्य ज्यादे निपजे वर्षा ज्यादे हो ॥ ५६ ॥

प्लवंगाब्दे सस्यहानिश्चौररोगार्दिता जनाः ॥
मध्यवृष्टिः क्षितीशानां विरोधं च परस्परम् ॥ ५७ ॥

प्लवंगनामक वर्षमें खेतीकी हानि चौरोंकी वृद्धि प्रजामें रोग मध्यमवर्षा राजाओंका आपसमें युद्ध होवे ॥ ५७ ॥

प्रचुराः पित्तरोगाः स्युर्मध्या वृष्टिरहेर्भयम् ॥
कीलकाब्दे त्वीतिभयं प्रजाक्षोभः परस्परम् ॥ ५८ ॥

कीलक वर्षमें पित्तके रोग बहुत होवें, मध्यम वर्षा हो, सर्पोंका भय हो, टीडी आदिकोंका भय हो, प्रजामें आपसमें वैर हो ॥ ५८ ॥

प्रचुराः शैत्यरोगाः स्युर्मध्या वृष्टिरहेर्भयम् ॥
सौम्याब्दे चैव सततं शांतवैरा क्षितीश्वराः ॥ ५९ ॥

सौम्य वर्षमें राजालोग आपसमें निरन्तर प्रसन्न रहैं, शरदीके रोग बहुत होवें, वर्षा मध्यम हो, सर्पोंका भय हो ॥ ५९ ॥

साधारणेब्दे राजानः सुखिनो गतमत्सराः ॥
प्रजाश्च पशवः सर्वे वृष्टिः कर्षकसंमता ॥ ६० ॥

साधारण नामक वर्षमें राजा सुखी रहें, आपसमें वैर भाव नहीं करैं, प्रजासें आनन्द, पशुपति और किसान लोगोंके मनके माफिक वर्षा हो ॥६०॥

विरोधकृद्वत्सरे तु परस्परविरोधिनः ॥
राजानो मध्यमा वृष्टिः प्रजा स्वस्था निरंतरम् ॥ ६१ ॥

विरोधकृत् नामक वर्षमें राजालोग आपसमें वैरभाव करें, वर्षा मध्यम हो, प्रजामें निरन्तर आनन्द रहैं ॥ ६१ ॥

अनर्घ्यामयरोगेभ्यो भीतिरीतिर्निरंतरम् ॥
परिधावीवत्सरे तु नृणां वृष्टिस्तु मध्यमा ॥ ६२ ॥

परिधावी नामक वर्षमें अन्नादिकका भाव महँगा, रोग, टीडी आदि उपद्रवका निरन्तर भय हो, मध्यम वर्षा हो ॥ ६२ ॥

नृपसंक्षोभमत्युग्रं प्रजापीडा त्वनर्घता ॥
तथापि दुःखमाप्नोति प्रमादीवत्सरे जनः ॥ ६३ ॥

प्रमादी वर्षमें राजाओंका अत्यन्त वैरभाव, प्रजामें पीडा, भाव महँगा हो, सब जन दुःखको प्राप्त होवें ॥ ६३ ॥

आनंदवत्सरे सर्वजंतवः पशवः सदा ॥
आनंदयंति चान्योन्यमन्यथा तु क्वचित् क्वचित् ॥ ६४ ॥

आनन्दनामक वर्षमें सम्पूर्ण जीव पशु आपसमें आनन्द करें, कहीं दुःख भी रहै ॥ ६४ ॥

प्रजायां मध्यमसुखं तदधीशाहवान्वहम् ॥
निष्क्रिया राक्षसाब्दे तु राक्षसा इव जंतवः ॥ ६५ ॥

राक्षस नामक वर्षमें प्रजामें मध्यम सुख रहै, राजाओंका हमेशः युद्ध होवे, सब जन राक्षसोंकी तरह क्रियारहित होंवे ॥ ६५ ॥

अनलाब्देऽनलभयं मध्यवृष्टिरनर्घता ॥
नृपाः संक्षोभसंभूता भूरिभीकरभूमिपाः ॥ ६६ ॥

अनल वर्षमें अग्निभय, मध्यम वर्षा, भाव महँगा, राजाओंमें परस्पर बहुत भयंकर वैरभाव उत्पन्न हो ॥ ६६ ॥

पिंगलाब्दे तु सततं दिक्पूरितघनस्वनम् ॥
राजानः स्वभुजाक्रांता भुंजते क्ष्मामनुत्तमाम् ॥ ६७ ॥

पिंगल नामक वर्षमें निरन्तर दिशाओंमें मेघ वर्षनेका शब्द होता रहा है, राजालोग अपनी भुजाके बलसे पृथ्वीको भोगें ॥ ६७ ॥

अतिवृष्टिः कालयुक्ते वत्सरे सुखिनो जनाः ॥
सततं सर्वसस्यानि संपूर्णाश्च तथा द्रुमाः ॥ ६८ ॥

कालयुक्त नामक वर्षमें वर्षा बहुत हो सब जन सुखी रहैं, निरन्तर सम्पूर्ण खेती निपजैं और सब वृक्षोंको अच्छा फल लगे ॥ ६८ ॥

सिद्धार्थीवत्सरे भूपाश्चान्योन्यं स्नेहकांक्षिणः ॥
संपूर्णसस्यां वसुधां दुदुहुर्गां यथा तथा ॥ ६९ ॥

सिद्धार्थी नामक वर्षमें राजालोग आपसमें मित्रता बढनेकी इच्छा करें और जैसे गौको दुहते हैं ऐसे सम्पूर्ण खेतियोंसे भरपूर हुई पृथ्वीका दोहन करें (भोग करैं) ॥ ६९ ॥

अन्योन्यं नृपसंक्षोभं चौरव्याघ्रादिभिर्भयम् ॥
मध्यवृष्टिरनर्घत्वं रौद्राब्दे नैव गुर्जरे ॥ ७० ॥

रौद्र नामक वर्षमें राजालोग आपसमें वैरभाव करें और चौर व्याघ्र आदिकोंका भय हो, मध्यम वर्षा हो, अन्नादिकोंका भाव महँगा रहे परन्तु गुर्जर (गुजरात) देशमें यह फल नहीं हो अर्थात् शुभफल हो ॥ ७० ॥

दुर्मत्यब्दे दुर्मतयो भवंत्यखिलभूमिपाः ॥
तथापि सुखिनो लोकाः संग्रामे निर्जितारयः ॥ ७१ ॥

दुर्मति वर्षमें संपूर्ण राजालोगोंकी बुद्धि खराब रहे तो भी सब प्रजाके लोग युद्धमें शत्रुओंको जीतें और सुखी रहैं ॥ ७१ ॥

सर्वसस्यैश्च संपूर्णा धात्री दुंदुभिवत्सरे ॥
राजभिः पाल्यते पूर्वदेशेश्वरविनाशनम् ॥ ७२ ॥

दुन्दुभि नामक वषमें पृथ्वी खेतियोंसे भरपूर हो, राजालोग प्रजाका पालना करैं, पूर्व देशका नाश हो ॥ ७२ ॥

आहवे निहताः सर्वे भूपा रोगैस्तथा जनाः ॥
तथापि तत्र जीवंति रुधिरोद्गारिवत्सरे ॥ ७३ ॥

रुधिरोद्गारी नामक वर्षमें राजालोग युद्धमें मृत्युको प्राप्त हों और प्रजालोग बीमारीसे मरें, कितनेक लोग जीवते रहैं ॥ ७३ ॥

रक्ताक्षिवत्सरे सस्यवृद्धिर्वृष्टिरनुत्तमा ॥
प्रेक्षंते सर्वदान्योन्यं राजानो रक्तलोचनाः ॥ ७४ ॥

रक्ताक्षी नामक वर्षमें खेतीकी वृद्धि हो, वर्षा बहुत अच्छी हो, राजालोग सदा आपसमें क्रूर दृष्टिसे वैरभाव करैं ॥ ७४ ॥

क्रोधनाब्दे मध्यवृष्टिः पूर्वसस्यं न तु क्वचित् ॥
संपूर्णमितरत्सस्यं सर्वे क्रोधपरा जनाः ॥ ७५ ॥

क्रोधन नामक वर्षमें मध्यम वर्षा हो, पहली खेती (सामणू) कहीं निपजे, पिछली खेती अच्छी निपजे, सम्पूर्ण जन क्रोधमें तत्पर रहैं ॥ ७५ ॥

कार्पासगुडतैलेक्षुमधुसस्यविनाशनम् ॥
क्षीयमाणाश्चापि नरा जीवंति क्षयवत्सरे ॥ ७६ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां संवत्सरफलम् ॥

क्षय नामक वर्षमें कपास, गुड, तेल, ईख, शहद, खेती इन्होंका नाश हो, क्षीण होते हुए मनुष्य जीवें ॥ ७६ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां संवत्सरफलं समाप्तम् ।

आद्यब्देशचमूनाथसस्यपानां बलाबलम् ॥
तत्कालग्रहचारं च सम्यग् ज्ञात्वा फलं वदेत् ॥ ७७ ॥

प्रथम वर्षेश, सेनापति सस्यपति इन्होंका बलाबल विचारके तत्काल ग्रहोंका चार विचारके अच्छे प्रकारसे संवत्‌का फल कहै ॥ ७७ ॥

सौम्यायनं मासषट्कं मृगाद्यं भानुभुक्तितः ॥
अहः सुराणां तद्रात्रिः कर्काद्यं दक्षिणायनम् ॥ ७८ ॥

मकर आदि छः राशियोंपर सूर्य रहै तबतक उत्तरायण कहाता है वह देवताओंका दिन और कर्क आदि छह संक्रांतियोंमें जो दक्षिणायन कहा है वह देवताओंकी रात्रि है ॥ ७८ ॥

गृहप्रवेशवैवाहप्रतिष्ठा मौंजिबंधनम् ॥
यज्ञादिमंगलं कर्म कर्तव्यं चोत्तरायणे ॥
याम्यायनेऽशुभं कर्म मासप्राधान्यमेव च ॥ ७९॥

गृहप्रवेश, विवाह, प्रतिष्ठा, मौंजीबंधन, यज्ञादि मंगल ये कर्म उत्तरा-

यण सूर्य हो तब करने चाहियें और दक्षिणायनमें अशुभ कर्म तथा मासप्रा-धान्य महीनाके योगमें होनेवाले कर्म करने चाहियें ॥ ७९ ॥

क्रमाच्छिशिरवासंतग्रीष्माः स्युश्चोत्तरायणे ॥
वर्षा शरच्च हेमंत ऋतवो दक्षिणायने ॥ ८० ॥

उत्तरायण सूर्यमें क्रमसे शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म ये तीन ऋतु होती हैं, दक्षिणायनमें वर्षा, शरद, हेमन्त ये ऋतु होती हैं ॥ ८० ॥

माघादिमासौ द्वौद्वौ च ऋतवः शिशिरादयः ॥
चांद्रो दर्शावधिः सौरः संक्रांत्या सावनो दिनैः ॥ ८१ ॥
त्रिंशद्भिश्चंद्रभगणो मासो नाक्षत्रसंज्ञकः ॥
मधुश्च माधवः शुक्रः शुचिश्चापि नभाह्वयः ॥ ८२ ॥

माघ आदि दो २ महीने ये शिशिर आदि ऋतु यथाक्रमसे जानने । चांद्रमास अमावस्याको समाप्त होता है, सौरमास संक्रातिपर पूरा होता है, सावनमास पूरे तीस दिनमें समाप्त होता है और नाक्षत्रमास चन्द्रमाके नक्षत्रोंका क्रमसे होता है । मधु१ माधव २ शुक्र ३ शुचि ४ नभ५॥८१॥८२॥

नभस्य इष ऊर्जश्च सहाख्यश्च सहस्यकः ॥
तपस्तपस्यः क्रमशश्चैत्रादीनां तु संज्ञकाः ॥ ८३ ॥

नभस्य ६ इष ७ ऊर्ज ८ सह ९ सहस्यक १० तपा ११ तपस्य १२ ये बारह चैत्र आदि महीनोंके नाम जानने ॥ ८३ ॥

यस्मिन्मासे पौर्णमासी येन धिष्ण्येन संयुता ॥
तन्नक्षत्राह्वयो मासः पौर्णमासी तथाह्वया ॥ ८४ ॥

जिस महीनेमें जिस नक्षत्रसे युक्त पौर्णमासी होय उसी नक्षत्रके नामसे महीना होता है और उसी नामसे पूर्णमासी होती है जैसे चित्रानक्षत्र होनेसे चैत्रमास चैत्री पौर्णमासी, विशाखा होनेसे वैशाखमास वैशाखी पौर्णमासी इत्यादि ॥ ८४ ॥

तत्पक्षौ दैवपैत्राख्यौ शुक्लकृष्णौ च तावुभौ ॥
शुभाशुभे कर्मणि च प्रशस्तौ भवतः सदा ॥ ८५ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां संवत्सराध्याथस्तृतीयः ॥

तिसके शुक्ल और कृष्णसे दो पक्ष दैव पैत्रनामसे प्रसिद्ध हैं ये शुभ अशुभ कर्ममें प्रशस्त कहे हैं अर्थात् शुक्ल कृष्ण पक्षमें शुभाशुभ कर्म हैं ॥ ८५ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां संवत्सराध्यायस्तृतीयः ॥ ३ ॥

वह्निर्विरिंचिर्गिरिजा गणेशः फणी विशाखो दिनकृन्महेशः ।
दुर्गान्तको विष्णुहरी स्मरश्च शर्वः शशी चेतिपुराणदृष्टः ॥ १ ॥

अथ प्रतिपदा आदि तिथियोंके स्वामी अग्नि १ ब्रह्मा २ गौरी ३ गणेश ४ सर्प ५ स्कन्द ६ सूर्य ७ शिव ८ दुर्गा ९ यम १० विश्वेदेवा ११ हरि १२ कामदेव १३ शर्व १४ चन्द्रमा १५ ये प्रतिपदा आदि पूर्णिमातक तिथियोंके स्वामी हैं ॥ १ ॥

अमायाः पितरः प्रोक्तास्तिथीनामधिपाः क्रमात् ॥ २ ॥

अमावस्याके स्वामी पितर हैं ऐसे तिथियोंके स्वामी यथाक्रमसे जानने चाहियें ॥ २ ॥

तिथीनामपराः संज्ञाः कथ्यन्ते ता यथाक्रमात् ॥ ३ ॥

तिथियोंकी अन्य भी संज्ञा हैं सो यथाक्रमसे नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता. पूर्णा ऐसे जाननी ॥ ३ ॥

पर्यायत्वेन विज्ञेया नेष्टमध्येष्टदा सिते ॥
कृष्णपक्षेपीष्टमध्यनेष्टदाः क्रमशः सदा ॥ ४ ॥

ये तिथि अर्थात् प्रतिपदासे ५ तक फिर १० तक फिर १५. तक ऐसे शुक्लपक्षमें अशुभ, मध्यम, श्रेष्ठ, ऐसे फलदायी जाननी और कृष्णपक्षमें श्रेष्ठ मध्यम, अशुभ ऐसे क्रमसे जाननी ॥ ४ ॥

चित्रलेख्यासवक्षेत्रतैलशय्यासनादि यत् ॥
वृक्षच्छेदो गृहाश्माथ कर्मप्रतिपदीरितम् ॥ ५ ॥

चित्र लिखना, मदिरा निकालनी, खेतका काम, तेल मालिश, शय्या, आसन, वृक्ष काटना, घर पत्थरका काम ये कर्म प्रतिपदा तिथिविषे करने शुभ हैं ॥ ५ ॥

विवाहमौंजीयात्राश्च सुरस्थापनभूषणम् ॥
गृहं पुष्टयखिलं कर्म द्वितीयायां विधीयते ॥ ६ ॥

विवाह, मौंजीबन्धन, यात्रा, देवस्थापन्न, आभूषण, घर प्रारम्भ, सम्पूर्ण पुष्टिके कर्म ये सब द्वितीया तिथिविषे करने चाहियें ॥ ६ ॥

मौंजी प्रतिष्ठाश्च शिल्पविद्या निखिलमंगलम् ॥
पशिवभोष्ट्रांबुयानोक्तं तृतीयायां विभूषणम् ॥ ७ ॥

मौंजीबन्धन, प्रतिष्ठा, शिल्पविद्या, सम्पूर्ण मङ्गलकार्य, पशु, हाथी, ऊट इनका खरीदना, जलमें गमन करना ये कर्म तृतीया तिथिविषे करने शुभ हैं७

अथर्वविद्याशस्त्राग्निबंधनोच्चाटनादिकम् ॥
मारणाद्यखिलं कर्म रिक्तास्वेव विधीयते ॥ ८ ॥

अथर्वविद्या अर्थात् गायन तथा मन्त्रादिविद्या, शस्त्र विद्या, अग्निबन्धन, उच्चाटन, मारण आदि कर्म रिक्ता ४।९।१४ तिथियोंमें करने चाहियें ॥ ८॥

यानोपनयनोद्वाहग्रहशांतिकपौष्टिकम् ॥
चरस्थिराखिलं कर्म पंचम्यां मंगलोत्सवम् ॥ ९ ॥

सवारी करना, उपनयनकर्म, विवाह, ग्रहशांति, पौष्टिककर्म, चर स्थिर मङ्गलोत्सव, ये कर्म पञ्चमी तिथिमें करने चाहियें ॥ ९ ॥

पशुवास्तुमहीसेवापण्यांबुक्रयविक्रये ॥
भूषणं व्यवहारादि कर्म षष्ठ्यां विधीयते ॥ १० ॥

पशुकर्म, वास्तुकर्म, पृथ्वीके काम, सेवाकर्म, दूकान, जल, खरीदना, बेचना, आभूषण, व्यवहार ये काम षष्ठी तिथिमें करने चाहियें ॥ १० ॥

यानस्थापनवाहादि राजसेवादि कर्म यत् ॥
विवाहवास्तुभूषाद्यं सप्तम्यां चोपनायनम् ॥ ११ ॥

गमन, स्थापन, वाहन, राजसेवा आदिकर्म, विवाह, वास्तु, आभूषण उपनयनकर्म ये सप्तमीमें करने चाहियें ॥ ११ ॥

कृषिवाणिज्यधान्याश्मलोहसंग्रामभूषणम् ॥
शिवस्थापनखाताम्बुकर्माष्टम्यां विधीयते ॥ १२ ॥

खेती, वणिज, धान्य, पत्थर, लोहा, संग्राम, आभूषण, शिवस्थापन, खोदनेका काम, जलकर्म ये अष्टमीविषे करने चाहियें ॥ १२ ॥

प्रासादस्थापनं यानमुद्वाहो व्रतबंधनम् ॥
शांतिपुष्ट्यादिकं कर्म दशम्यां तु प्रशस्यते ॥ १३ ॥

देवमंदिरकी पूजा, गमन, विवाह, व्रतबंधन, शांतिपुष्टि आदिकर्म ये दशमीविषे करने श्रेष्ठ हैं ॥ १३ ॥

व्रतोपवासवैवाहकृषिवाणिज्यभूषणम् ॥
शिल्पनृत्यं गृहं कर्म एकादश्यां विचित्रकम् ॥ १४ ॥

व्रत, उपवास, विवाह, खेती, वणिज, आभूषण, शिल्पकर्म, नृत्य, गृहकर्म, विचित्रकर्म ये एकादशीतिथिमें करने चाहियें ॥ १४ ॥

चरस्थिराखिलं कर्म दानशांतिकपौष्टिकम् ॥
यात्रान्नग्रहणं त्यक्त्वा द्वादश्यां निखिलं हितम् ॥ १५ ॥

चर स्थिर सम्पूर्ण कर्म, दानशांति, पौष्टिककर्म, यात्रा, अन्नसंग्रह इन कर्मोंके बिना अन्यकर्म द्वादशी तिथिमें करने शुभ हैं ॥ १५ ॥

अग्न्याधानं प्रतिष्ठा च विवाहव्रतबंधनम् ॥
निखिलं मंगलं यानं त्रयोदश्यां प्रशस्यते ॥ १६ ॥

अग्निस्थापन, प्रतिष्ठा, विवाह, यज्ञोपवीत, संपूर्ण मंगलकर्म, यात्रा ये त्रयोदशीको करने शुभ हैं ॥ १६ ॥

बंधनाग्निप्रदानोग्रघातव्रणरणक्रिया ॥
शस्त्रास्त्रलोहकर्माणि चतुर्दश्यां विधीयते ॥ १७ ॥

बंधन, अग्नि लाना, उग्रघात, रण, व्रण, शस्त्र, अस्त्र, लोहकर्म ये सब चतुर्दशीको करने शुभ हैं ॥ १७ ॥

तैलस्त्रीसंगमं चैव दंतकाष्ठोपनायनम् ॥
सक्षौरं पौर्णमास्यां च विनान्यदखिलं हितम् ॥ १८ ॥

तेलकी मालिश, स्त्रीसंग, दांतून करना, यज्ञोपवीत क्षौर इनके विना अन्यकर्म पौर्णमासीविषे करने शुभ हैं ॥ १८ ॥

पितृकर्मत्वमावास्यामेकं मुक्त्वा कदाचन ॥
न विदध्यात् प्रयत्नेन यत्किंचिन्मंगलादिकम् ॥ १९ ॥

अमावास्या तिथिविषे एक पितृकर्मविना अन्य कुछ मंगलकर्म कभी नहीं करना चाहिये ॥ १९ ॥

अष्टमी द्वादशी षष्ठी चतुर्थी च चतुर्दशी ॥
तिथयः पक्षरंध्राख्या दुष्टास्ता अतिनिंदिताः ॥ २० ॥

अष्टमी, द्वादशी, षष्ठी, चतुर्थी, चतुर्दशी ये तिथि पक्षरंध्रनामक अर्थात् पक्षमें छिद्ररूप कही हैं ये अशुभ अत्यंत निंदित हैं ॥ २० ॥

चतुर्थमनुरंध्रांकतत्त्वसंज्ञास्तु नाडिकाः ॥
त्याज्या दुष्टासु तिथिषु पंचस्वेतासु सर्वदा ॥ २१ ॥

और ४-१४-७-९-५-इतनी प्रमाण घडी यथाक्रमसे इन आदि दुष्ट पांच तिथियोंमें सदा त्याग देनी चाहिये फिर अशुभ नहीं है ॥ २१ ॥

अमावास्या च नवमी त्यक्त्वा विषमसंज्ञिकाः ॥
तिथयस्ताः प्रशस्ताः स्युर्मध्यमा प्रतिपत्तथा ॥ २२ ॥

फिर अमावस्या नवमीको त्यागकर ये विषमसंज्ञक तिथि भी शुभदायक कही हैं और प्रतिपदा तिथि मध्यम है ॥ २२ ॥

दर्शषष्ठ्यां प्रतिपदि द्वादश्यां प्रतिपर्वसु ॥
नवम्यां च न कुर्वीत कदाचिद्दंतधावनम् ॥ २३ ॥

अमावस्या, षष्ठी, प्रतिपदा, द्वादशी, पूर्णमासी इनमें कभी दांतून नहीं करनी चाहिये ॥ २३ ॥

षष्ठ्यां तैलं तथाष्टम्यां मांसं क्षौरं तथा कले ॥
पूर्णिमादर्शयोर्नारीसेवनं परिवर्जयेत् ॥ २४ ॥

षष्ठीमें तेल, अष्टमीविषे मांस, चतुर्दशीविषे क्षौर,पूर्णमासी वा आमवस्या-विषे स्त्रीरमण वर्जदेना चाहिये ॥ २४ ॥

व्यतीपाते च संक्रांतौ एकादश्यां च पर्वसु ॥
अर्कभौमदिने षष्ठ्यां नाभ्यंगं च न वैधृतौ ॥ २५ ॥

व्यतीपात, संक्रान्ति, एकादशी, पूर्णमासी, अमावस्या, रविवार, मंगल, षष्ठी, वैधृतियोग इन विषे तैल उबटना आदिकी मालिश नहीं करना ॥२५॥

यः करोति दशम्यां च स्नानमामलकैः सह ॥
पुत्रहानिर्भवेत्तस्य त्रयोदश्यां धनक्षयः ॥ २६ ॥

दशमीके दिन जो आवलोंसे स्नान करता है उसके पुत्रकी हानि होती है और त्रयोदशीविषे करे तो धनका क्षय हो ॥ २६ ॥

अर्थपुत्रक्षयं तस्य द्वितीयायां न संशयः ॥
अमायां च नवम्यां च सप्तम्यां च कुलक्षयः ॥ २७ ॥

द्वितीयाविषे धन और पुत्रका नाश हो, अमावस्या, नवमी, सप्तमी इनविषे आंवलोंसे स्नान करे तो कुलका क्षय हो ॥ २७ ॥

या पूर्णमास्यनुमतिर्निशि चंद्रवती यदा ॥
दिवा चंद्रवती राका ह्यमावास्या तथा द्विधा ॥ २८ ॥

जिसमें रात्रिमें चंद्रमा प्राप्त हो अर्थात् चतुर्दशीमें पूर्णिमा आयी हो वह अनुमति कही है और दिनमें भी चंद्रमाकी पूर्ण कलाओंसे युक्त हो वह राकासंज्ञक पूर्णिमा तिथि कही है, तैसे ही अमावस्या भी दो प्रकारकी कही है ॥ २८ ॥

सिनीवाली सेंदुमती कुहूर्नेंदुमती मता ॥
कार्तिके शुक्लनवमी त्वादिः कृतयुगस्य सा ॥ २९ ॥

एक तो सिनीवाली है उसको चन्द्रमा दीखजाता है और कुहूसंज्ञक कही है उसको चन्द्रमाकी सब कला क्षीण हो जाती हैं और कार्त्तिक शुक्ल नवमी तिथी सत्ययुगादि तिथि कही है ॥ २९ ॥

त्रेतादिर्माधवे शुक्ला तृतीया पुण्यसंज्ञिता ॥
कृष्णा पंचदशी माघे द्वापरादिरुदीरिता ॥ ३० ॥

वैशाख शुल्का तृतीया त्रेताकी आदितिथि कही है, यह पवित्र है माघकी अमावस्या द्वापरकी आदितिथि कही है ॥ ३० ॥

कल्पादि स्यात्कृष्णपक्षे नभस्ये च त्रयोदशी ॥
द्वादश्यूर्जे शुक्लपक्षे नवम्याश्वयुजे सिते ॥ ३१ ॥

भाद्रपद कृष्णत्रयोदशी कलियुगादि तिथि कही है और कार्त्तिक शुक्ला द्वादशी आश्विन शुल्का नवमी ॥ ३१ ॥

चैत्रे भाद्रपदे चैव तृतीया शुक्लसंज्ञिता ॥
एकादशी सिता पौषेऽप्याषाढे दशमी सिता ॥ ३२ ॥

चैत्र शुल्का तृतीया, भाद्रपद शुल्का तृतीया, पौष शुल्का एकादशी आषाढ शुल्का दशमी ॥ ३२ ॥

माघे च सप्तमी शुक्ला नभस्येप्यसिताष्टमी ॥
श्रावणे मास्यमावास्या फाल्गुने मासि पूर्णिमा ॥ ३३ ॥

माघ शुल्का सप्तमी, भाद्रपद कृष्णा अष्टमी, श्रावणकी अमावस्या, फाल्गुनकी पूर्णिमा ॥ ३३ ॥

आषाढे कार्तिके मासि चैत्रे ज्येष्ठे च पूर्णिमा ॥
मन्वादयः स्नानदानश्राद्धेष्वानंत्यपुण्यदा ॥ ३४ ॥

आषाढकी पूर्णिमा और कार्त्तिक, चैत्र, ज्येष्ठ इन्होंकी पूर्णिमा ये मन्वादिक तिथि कही हैं ये स्नान दान श्राद्ध इन कर्मोंमें अनंत फलदायक हैं ॥ ३४ ॥

भाद्रकृष्णे त्रयोदश्यां मघास्विदुः करे रविः ॥
गजच्छाया तदा ज्ञेया श्राद्धेत्यंतफलप्रदा ॥ ३५ ॥

भाद्रपद कृष्ण त्रयोदशीविषे मघा नक्षत्रपर चन्द्रमा हो और हस्तपर सूर्य होय तो गजच्छाया योग कहा है श्राद्धमें अत्यंत फलदायक है ॥ ३५ ॥

एकस्मिन्वासरे तिस्रस्तिथयः स्युः क्षयातिथिः ॥
तिथिर्वारत्रयेष्वेका त्वधिकात्यंतनिंदिता ॥ ३६ ॥

एकवार निरंतर एकवाराविषे तीन तिथि क्षय होवें अथवा निरंतर तीन उनही वारोंमें एक तिथि बढी हो वह अत्यंत निंदित कही है ॥ ३६ ॥

सूर्यास्तमनपर्यंतं यस्मिन् वारेऽपि या तिथिः ॥
विद्यते सा त्वखंडा स्याद्दूना चेत्खंडसंज्ञिता ॥ ३७ ॥

सूर्य अस्त हो तबतक एकही तिथि उस वारमें रहे तो वह अखंडा तिथि कहाती है जो ऊन (अधूरी) रह जावे तो वह खंडिता कहलाती है ॥ ३७ ॥

तिथेः पंचदशो भागः क्रमात्प्रतिपदादयः ॥
द्विघटीप्रमितं तत्र मुहूर्त्तं कथितं बुधैः ॥ ३८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां तिथिलक्षणाध्यायश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

तिथिका पंद्रहवां भाग अर्थात् चन्द्रमन्डलका पंद्रहवां भाग प्रतिपदा आदि तिथि कही हैं और दो घडीका एक मुहुर्त्त होता है ॥ ३८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां तिथिलक्षणाध्यायश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

नृपाभिषेकमांगल्यसेवायानास्त्रकर्म यत् ॥
औषधाहवधान्यादि विधेयं रविवासरे ॥ १ ॥

राज्याभिषेक, मंगलकर्म, सेवा, सवारी, अस्त्रकर्म, औषध, युद्ध, धान्य कर्म ये रविवारमें करने चाहियें ॥ १ ॥

शंखमुक्तांबुरजतवृक्षेक्षुस्त्रीविभूषणम् ॥
पुष्पगीतक्रतुक्षीरकृषिकर्मेन्दुवासरे ॥ २ ॥

शंख, मोती, चांदी, वृक्ष, ईख, स्त्रीका आभूषण, पुष्प, गीत, यज्ञ, दूध, खेती ये कर्म सोमवारमें करने चाहियें ॥ २ ॥

विषाग्निबंधनस्तेयं संधिविग्रहमाहवे ॥
धात्वाकरप्रवालास्त्रकर्मभूमिजवासरे ॥ ३ ॥

विष, अग्नि, बंधन, चोरी, युद्धमें संधि या विग्रह, धातु, खजान, मूँगा, शस्त्रकर्म ये मंगलवारमें करने चाहियें ॥ ३ ॥

नृत्यशिल्पकलागीतलिपिभूरससंग्रहम् ॥
विवाहधातुसंग्रामकर्म सौम्यस्य वासरे ॥ ४ ॥

नृत्य, शिल्पकला, गीत, लिखना, पृथ्वीके रसोंका संग्रह, विवाह, धातु, संग्राम ये कर्म बुधवारमें करने चाहियें ॥ ४ ॥

यज्ञपौष्टिकमांगल्यं स्वर्णवस्त्रादिभूषणम् ॥
वृक्षगुल्मलतायानकर्म देवेज्यवासरे ॥ ५ ॥

यज्ञ, पौष्टिक कर्म, मांगल्यकर्म, सुवर्ण, वस्त्र आदिका शृंगार, वृक्ष, गुच्छा, लता, सवारी ये कर्म बृहस्पतिवारमें करने चाहियें ॥ ५ ॥

नृत्यगीतादिवादित्रस्वर्णस्त्रीरत्नभूषणम् ॥
भूपण्योत्सवगोधान्यकर्म भार्गववासरे ॥ ६ ॥

नृत्य, गीत, बाजा, सुवर्ण, स्त्री, रत्न, आभूषण, भूमि, दूकान, उत्सव, गौ, धान्य इन्होंके कार्य शुक्रवारमें करने चाहियें ॥ ६ ॥

त्रपुसीसायसोऽश्मास्त्रविषपापासवानृतम् ॥
स्थिरकर्माखिलं वास्तुसंग्रहं सौरिवासरे ॥ ७ ॥

राँग, सीसा, लोहा, पत्थर, शस्त्र, विष, पाप, मदिरा, झूंठ, स्थिरकर्म, वास्तुकर्म (घरमें प्रवेश) संग्रह ये कर्म शनिवारमें करने शुभ हैं ॥ ७ ॥

रविः स्थिरश्चरश्चंद्रः कुजः क्रूरो बुधोखिलः ॥
लघुरीज्यो मृदुः शुक्रस्तीक्ष्णो दिनकरात्मजः ॥ ८ ॥

सूर्य स्थिर है, चन्द्रमा चर है, मंगल क्रूर और बुध अच्छे प्रकार पूर्ण है, बृहस्पति लघु (अच्छा हलका) है, शुक्र मृदु (कोमल) है, शनि तीक्ष्ण कहा है ॥ ८ ॥

अभ्यक्तो भानुवारे यः स नरः क्लेशवान् भवेत् ॥
ऋक्षेशे कांतिभाग् भौमे व्याधिः सौभाग्यमिंदुजे ॥ ९ ॥

जो मनुष्य रविवारको तेल आदिकी मालिश करै वह दुःखी होवे, चंद्रवारको तेल लगावे तो अच्छी कांति बढे, मंगलको लगावे तो बीमारी हो, बुधको सौभाग्य प्राप्त हो ॥ ९ ॥

जीवे नैःस्वं सिते हानिर्मंदे सर्वसमृद्धयः ॥
उदयादुदयं वार इति पूर्वविनिश्चितम् ॥ १० ॥

बृहस्पतिको दरिद्रता, शुक्रको हानि और शनिवारको तेल लगावे तो सब बातोंकी समृद्धि हो । सूर्यके उदय प्रति वार लगता है यह पहिलेका निश्चय चला आता है ॥ १० ॥

लंकोदयात् स्याद्वारादिस्तस्मादूर्ध्वमधोऽपि वा ॥
देशान्तरचरार्द्धाभिर्नाडीभिरपरो भवेत् ॥ ११ ॥

लंकामें सूर्य उदय हो वह वारादि हैं और लंकासे ऊपरको तथा नीचेको जो देशांतर हैं उनके चर खंडाओंकरके घटियोंके अंतर होते हैं अर्थात् सब जगह सब समयमें एकवक्त वार नहीं लगता है शास्त्रोक्तविधिसे वारप्रवेश देखा जाता है ॥ ११ ॥

बलप्रदस्य खेटस्य वारे सिध्यति यत्कृतम् ॥
तत्कर्म बलहीनस्य दुःखेनापि न सिध्यति ॥ १२ ॥

बलदायक ग्रहके वारमें जा कर्म किया जाय वह सिद्ध होता है और वही काम जो बलहीन ग्रहके वारमें किया जाय तो परिश्रम होकर भी कार्य सिद्ध नहीं होता ॥ १२ ॥

बुधेंदुजीवशुक्राणां वासराः सर्वकर्मसु ॥
सिद्धिदाः क्रूरवारेषु यदुक्तं कर्म सिध्यति ॥ १३ ॥

बुध, चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र ये वार सब कर्मोंमें अच्छे हैं और क्रूरवारोंमें उग्र कर्म कहे हैं वेही सिद्ध होते हैं ॥ १३ ॥

रक्तवर्णो रविश्चन्द्रो गौरो भौमस्तु लोहितः ॥
दूर्वावर्णो बुधो जीवः पीतः श्वेतस्तु भार्गवः ॥ १४ ॥

सूर्य लालवर्ण है, चन्द्रमा गौरवर्ण है, मंगल लालवर्ण है, बुध हरितवर्ण है, बृहस्पतिका पीलावर्ण है, शुक्र सफेद वर्ण है ॥ १४ ॥

कृष्णः शौरिः स्ववारेषु स्वस्ववर्णाः क्रियाः शुभाः ॥ १५ ॥

शनैश्चर कालावर्ण है तहां अपने २ वर्णोंके काम करनेमें शुभ कहे हैं ॥ १५ ॥

आद्रि ७ बाणा ५ ब्धय ४ स्तर्क ६ तोयाकर ४
धराधराः ७ ॥ बाणा ५ ग्नि ३ लोचनानि २ स्यु-
र्वेद ४ बाहु २ शिलीमुखाः ५ ॥ १६ ॥

अब कुलिक आदि योग कहते हैं—रविवारको ७–५–४ इन प्रहरोंमें, चन्द्रवारको ६–४–७ इन प्रहरोंमें, मंगलवारको ५–३–२– इन प्रहरोंमें, और बुधको ४–२–५– इन प्रहरोंमें ॥ १६ ॥

लोके ३ न्दु १ वसवो ८ नेत्र २ शैला ७ ग्नी ३ न्दु १ रसो
६ रसः ६॥ कुलिका यमघंटाख्या अर्धप्रहरसंज्ञकाः ॥ १७ ॥

बृहस्पतिको ३-१-८- इन प्रहरोंमें, शुक्रको २-७-३-इन प्रहरोंमें, शनिको १-६-६- इन प्रहरोंमें यथाक्रमसे कुलिक, यमंघटक, प्रहरार्द्ध अर्थात् वारवेला ये तीन योग होते हैं ॥ १७ ॥

प्रहरार्धप्रमाणास्ते विज्ञेया सूर्यवासरात् ॥
यस्मिन्वारे क्षणो वार इष्टस्तद्वासराधिपः ॥ १८ ॥
आद्यष्षष्ठो द्वितीयोऽस्मात्तस्मात्षष्ठस्तृतीयकः॥
षष्ठषष्ठश्चैतरेषां कालहोराधिपाः स्मृताः ॥ १९ ॥

जिस वारके जो तीन प्रहर दिखाये हैं उनमें यथाक्रमसे आधे २ प्रहरतक ये योग रहते हैं जैसे रविवारमें ७ प्रहरमें आधे प्रहरतक कुलिकयोग, फिर ५ प्रहरमें यमघंटक, फिर ४ प्रहरमें ४ घडी अर्धप्रहर (वारवेला) ऐसे सभीमें जानों ये शुभकर्ममें निंदित हैं। जिस वारमें जिस वक्त जिसकी होरा आती है तब वह वार स्वामी होता है। पहले तो वर्त्तमान वार, फिर उससे छठा वार, फिर तिससे भी छठा वार, फिर तिससे छठा ऐसे छठे छठे वारकी काल होरा होती है ॥ १८ ॥ १९ ॥

सार्धनाडीद्वयेनैवं दिवा रात्रौ यथाक्रमात् ॥
यस्य खेटस्य यत्कर्म वारे प्रोक्तं विधीयते ॥
ग्रहस्य कर्म वारेऽपि तत्क्षणे तस्य सर्वदा ॥ २० ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां वारलक्षणाऽध्यायः पंचमः ॥ ५ ॥

दिनरात्रिमें यथाक्रमसे २॥ अढाई घडीकी काल होरा जाननी जिस ग्रहके वारमें जो काम करना कहा है वही काम उसी वारकी होरामें भी सदा कर-लेना चाहिये जैसे रविवारको चन्द्रमाकी होरा आवे तब चन्द्रवारके कार्य करने योग्य हैं ॥ २० ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां वारलक्षणाध्यायः पञ्चमः ॥ ५ ॥

नक्षत्रेशाः क्रमाद्दस्रयमवह्निपितामहाः ॥
चंद्रेशाऽदितिजीवाहिपितरो भगसंज्ञिताः ॥ १ ॥

दस्र (अश्विनीकुमार) १ यम २ वह्नि ३ ब्रह्मा ४ चन्द्रमा ५ शिवजी ६ अदिति ७ बृहस्पति ८ सर्प ९ पितर १० भग ११ ॥ १ ॥

अर्यमार्कत्वष्ट्रमरुच्छक्राग्निमित्रवासवाः ॥
निर्ऋत्युदग्विश्वविधि-गोविंदवसुतोयपाः ॥ २ ॥

अर्यमा १२ सूर्य १३ त्वष्टा १४ वायु १५ इंद्राग्नि १६ मित्र १७ इन्द्र १८ निर्ऋति १९ जल २० विश्वेदेवा २१ ब्रह्मा २२ विष्णु २३ वसु २४ वरुण २५ ॥ २ ॥

ततोऽजपादहिर्बुध्न्यः पूषा चेति प्रकीर्तिताः ॥
वस्त्रोपनयनं क्षौरः सीमंताभरणक्रिया ॥ ३ ॥

अजैकपाद् २६ अहिर्बुध्न्य २७ पूषा २८ ऐसे ये २७ देवता अश्विनी आदि २७ नक्षत्रोंके स्वामी कहे हैं । अब इन नक्षत्रोंमें करने योग्य कार्योंको कहते हैं । वस्त्र, यज्ञोपवीत, क्षौर, सीमन्त आभूषण कर्म ॥ ३ ॥

स्थापनाश्वादियानं च कृषिविद्यादयोऽश्विभे ॥
वापीकूपतडागादि विषशस्त्रोग्रदारुणम् ॥ ४ ॥

प्रतिष्ठा, घोड़ा, आदि सवारी, खेती, विद्या पढना इत्यादि काम अश्विनी नक्षत्रमें करने शुभ हैं और बावड़ी, कुँवा, तालाब कराना, विष, शस्त्र, उग्र, दारुण काम ॥ ४ ॥

बिलप्रवेशगणितनिक्षेपा याम्यभे शुभाः ॥
अग्न्याधानास्त्रशस्त्रोग्रसन्धिविग्रहदारुणाः ॥ ५ ॥

गुफामें प्रवश होना, गणित विद्या, धरोहर जमा करना ये कार्य भरणी नक्षत्रमें करने शुभ हैं । अग्निस्थापन, अस्त्र, शस्त्र, उग्रकर्म, सन्धि, दारुण विग्रह ॥ ५ ॥

संग्रामौषधवादित्रक्रियाः शस्ताश्च वह्निभे ॥
सीमंतोपनयनोद्वाहवस्त्रभूषास्थिरक्रियाः ॥
गजवास्त्वभिषेकाश्च प्रतिष्ठा ब्रह्मभे शुभाः ॥ ६ ॥

संग्राम, औषध, बाजा ये काम कृत्तिका नक्षत्रमें करने शुभ हैं, और सीमंतकर्म, यज्ञोपवीत, विवाह, वस्त्रपहिनना, आभूषण, स्थिरक्रिया व हाथी लेना, वास्तुकर्म, अभिषेक, प्रतिष्ठा ये कर्म रोहिणी नक्षत्रमें शुभ हैं ॥ ६ ॥

प्रतिष्ठाभूषणोद्वाहसीमंतोपनयनक्रियाः ॥
क्षौरवास्तुगजोष्ट्राश्च यात्रा शस्ता च चंद्रभे ॥ ७ ॥

प्रतिष्ठा, आभूषण, विवाह, सीमंतकर्म, उपनयन, क्षौर, वास्तुकर्म, हाथी, ऊंटका कार्य, यात्रा ये मृगशिर नक्षत्रमें शुभ हैं ॥ ७ ॥

ध्वजतोरणसंग्रामप्राकारास्त्रक्रियाः शुभाः ॥
संधिविग्रहवैतानरसाद्याः शवभे शुभाः ॥ ८ ॥

ध्वजा, तोरण, संग्राम, किला, (कोट), शस्त्रक्रिया, संधि, विग्रह, मंडप, रसक्रिया ये कर्म आर्द्रा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ ८ ॥

प्रतिष्ठा यानसीमंतवस्त्रवास्तूपनायनम् ॥
क्षौरास्त्रकर्मादितिभे विधेयं धान्यभूषणम् ॥ ९ ॥

प्रतिष्ठा, गमन, सीमंतकर्म, वस्त्रकर्म, वास्तु, उपनयन, क्षौरकर्म, अस्त्रकर्म, धान्य, आभूषण ये कार्य पुनर्वसु नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ ९ ॥

यात्राप्रतिष्ठासीमंतव्रतबन्धप्रवेशनम् ॥
करग्रहं विना सर्वं कर्म देवेज्यभे शुभम् ॥ १० ॥

यात्रा, प्रतिष्ठा, सीमंत, यज्ञोपवीत, गृहप्रवेश ये कर्म तथा विवाह कर्म विना अन्य सब कार्य पुष्य नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ १० ॥

अनृतव्यसनद्यूतक्रोधाग्निविषदाहकम् ॥
विवादरसवाणिज्यं कर्म कद्रुजभे शुभम् ॥ ११ ॥

झूठ, व्यसन, जूवा, क्रोध, अग्नि, विष, दाह, विवाद, रस, वाणिज्य ये कर्म आश्लेषा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ ११ ॥

कृषिवाणिज्यगोधान्यरणोपकरणादिकम् ॥
विवाहनृत्यगीताद्यं निखिलं कर्म पैत्रभे ॥ १२ ॥

खेती, वाणिज्य, गौ, धान्य, रण, कोई वस्तुसंचय तैयारी, विवाह, नृत्य, गीत ये सब कर्म मघा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ १२ ॥

विवादविषशस्त्राग्निदारुणोग्राहवादिकम् ॥
पूर्वात्रयेऽखिलं कर्म कर्तव्यं मांसविक्रयम् ॥ १३ ॥

विवाद, विष, शस्त्र, अग्नि, दारुण उग्रकर्म, युद्ध, मांस बेचना इत्यादि कर्म तीनों पूर्वाओंमें करने शुभ हैं ॥ १३ ॥

वस्त्राभिषेकलोहाश्मविवाहव्रतबंधनम् ॥
प्रवेशस्थापनाश्वेभवास्तुकर्मोत्तरात्रये ॥ १४ ॥

वस्त्र, अभिषेक, लोहा, पत्थर, विवाह, यज्ञोपवीत, प्रवेश, प्रतिष्ठा-कर्म, घोडा, हाथी, वास्तुकर्म ये सब कार्य तीनों उत्तराओंमें करने शुभ हैं ॥ १४ ॥

प्रतिष्ठोद्वाहसीमंतयानवस्त्रोपनायनम् ॥
क्षौरवास्त्वभिषेकाश्च भूषणं कर्म भानुभे ॥ १५ ॥

४

प्रतिष्ठा, विवाह, सीमंतकर्म, सवारी, वस्त्र, उपनयनकर्म, क्षौर, वास्तुकर्म, अभिषेक, आभूषण ये कर्म हस्त नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ १५ ॥

प्रवेशवस्त्रसीमंतप्रतिष्ठाव्रतबंधनम् ॥
त्वाष्ट्रभे वास्तुविद्या च क्षौरभूषणकर्म यत् ॥ १६ ॥

प्रवेश, वस्त्र, सीमंत, प्रतिष्ठा, यज्ञोपवीत, वास्तुविद्या, क्षौर, आभूषण ये कर्म चित्रा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ १६ ॥

प्रतिष्ठोपनयोद्वाहवस्त्रसीमंतभूषणम् ॥
प्रवेशाश्वेभकृष्यादिक्षौरकर्म समीरभे ॥ १७ ॥

प्रतिष्ठा, उपनयन, विवाह, वस्त्र, सीमंतकर्म, आभूषण, प्रवेश, घोडा, हाथी खरीदना, खेती, क्षौरकर्म ये स्वाति नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ १७ ॥

वस्त्रभूषणवाणिज्यवस्तुधान्यादिसंग्रहः ॥
इंद्राग्निभे नृत्यगीतशिल्पलोहाश्मलेखनम् ॥ १८ ॥

वस्त्र, आभूषण, वणिज वस्तु व धान्य आदिका संग्रह, नृत्य, गीत, शिल्पकर्म, लोहा, पत्थर, लिखना ये कर्म विशाखा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ १८ ॥

प्रवेशस्थापनोद्वाहव्रतबंधाष्टमंगलाः ॥
वास्तुभूषणवस्त्राश्वा मैत्रभे संधिविग्रहः ॥ १९ ॥

प्रवेश, प्रतिष्ठा, विवाह, व्रतबन्ध, अष्ट प्रकारके मंगल, वास्तुकर्म, आभूषण, वस्त्र, अश्व, संधि, विग्रह ये कार्य अनुराधा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ १९ ॥

क्षौरास्त्रशस्त्रवाणिज्यगोमहिष्यंबुकर्म यत् ॥
इंद्रभे गीतवादित्रशिल्पलोहाश्मलेखनम् ॥ २० ॥

क्षौरकर्म, अस्त्रकर्म, शस्त्रकर्म, वणिज, गौ, महिषी, जल, गीत, बाजा, शिल्प, लोहा, पत्थर, लिखना, ये कर्म ज्येष्ठा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ २० ॥

विवाहकृषिवाणिज्यदारुणाहवभेषजम् ॥
नैर्ऋते नृत्यशिल्पास्त्रशस्त्रलोहाश्मलेखनम् ॥ २१ ॥

विवाह, खेती, वणिज, दारुण, युद्ध, औषध, नृत्य, शिल्प, अस्त्र, शस्त्र, लोहा, पत्थर, लिखना ये कर्म मूल नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ २१ ॥

प्रतिष्ठाक्षौरसीमंतयानोपनयनौषधम् ॥
पुराणैस्तु गृहारंभो विष्णुभे च समीरितम् ॥ २२ ॥

प्रतिष्ठा, क्षौर, सीमंत, सवारी, उपनयन, औषध, पुराना घर चिनना इन कामोंमें श्रवण नक्षत्र शुभ है। तीनों पूर्वा तीनों उत्तराओंका फल एकत्र कह चुके हैं ॥ २२ ॥

वस्त्रोपनयनं क्षौरं मौंजीबंधनभेषजम् ॥
वसुभे वास्तुसीमंतप्रवेशाश्च विभूषणः ॥ २३ ॥

वस्त्र, उपनयनकर्म, क्षौर, मौंजीबंधन, औषध, वास्तुकर्म, सीमंत, गृहप्रवेश, आभूषण ये कर्म धनिष्ठानक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ २३ ॥

प्रवेशस्थापनं क्षौरमौंजीबंधनभेषजम् ॥
अश्वारोहणसीमंतवास्तुकर्म जलेशभे ॥ २४ ॥

गृहप्रवेश, प्रतिष्ठा, क्षौर, मौंजीबंधन, औषध, घोडेकी सवारी करना, सीमंत, वास्तुकर्म ये शतभिषा नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ २४ ॥

विवाहव्रतबंधाश्च प्रतिष्ठायानभूषणम् ॥
प्रवेशवस्त्रसीमंतक्षौरभेषजमंत्यभे ॥ २५ ॥

विवाह, व्रतबंध, प्रतिष्ठा, सवारी, आभूषण, प्रवेश, वस्त्र, सीमंत, क्षौर, औषध ये रेवती नक्षत्रमें करने शुभ हैं ॥ २५ ॥

पूर्वात्रयाग्निमूलाहिद्विदैवत्यमघांतकम् ॥
अधोमुखं तु नवकं भानां तत्र विधीयते ॥ २६ ॥

तीनों पूर्वा, कृत्तिका, मूल, आश्लेषा, विशाखा, मघा, भरणी ये नव नक्षत्र अधोमुख संज्ञक हैं ॥ २६ ॥ इति अधोमुख कर्म ॥

बिलप्रवेशगणितभुतसाधनलेखनम् ॥
शिल्पकर्म लताकूपनिक्षेपोद्धारणादि यत् ॥ २७ ॥

इन अधोमुख नक्षत्रोंमें गुफामें प्रवेश होना, गणित, मंत्र, यंत्र, साधन, लिखना, शिल्पकम, लता (बेल) लगाना, कूँवामें गिरी हुई वस्तु निकालना शुभ है ॥ २७ ॥

मित्रेंदुत्वाष्ट्रहस्तार्द्रादितिभांत्योश्ववायुभम् ॥
तिर्यङ्मुखाख्यं नवकं भानां तत्र विधीयते ॥ २८ ॥

अनुराधा, मृगशिर, चित्रा, हस्त, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, रेवती, अश्विनी, स्वाति ये नव नक्षत्र तिर्यङ्मुख संज्ञक हैं ॥ २८ ॥

हलप्रवाहगमनं गंत्री यंत्रगजोष्ट्रकम् ॥
अजादिग्रहणं चैव हयकर्म यतस्ततः ॥ २९ ॥

इन नक्षत्रोंमें हल जोतना, गमन, गाडी बनाना, हाथी, ऊंट, बकरी आदि खरीदना, घोडा खरीदना ये शुभ हैं ॥ २९ ॥

खरगोरथनौयानं लुलायहयकर्म च ॥
शकटग्रहणं चैव तथा पश्वादिकर्म च ॥ ३० ॥

और गधा, बैल, रथ, नौका इन्होंकी सवारी करना, भैंस, घोडाका कार्य, गाडीका कार्य, ऊंट खरीदना तथा अन्य पशुका कार्य शुभ है ॥ ३० ॥

इति तिर्यक् कर्म ॥

ब्रह्मविष्णुमहेशार्यशततारावसूत्तराः ॥
ऊर्ध्वास्यं नवकं भानां प्रोक्तं चैव विधीयते ॥ ३१ ॥
इत्यूर्ध्वमुखम् ॥

रोहिणी, श्रवण, आर्द्रा, पुष्य, शतभिषा, धनिष्ठा, तीनों उत्तरा ये नव नक्षत्र ऊर्ध्वमुखसंज्ञक कहे हैं ॥ ३१ ॥

पुरहर्म्यगृहारामवारणध्वजकर्म च ॥
प्रासादभित्तिकोद्यानप्राकाराश्चैव मण्डपम् ॥ ३२ ॥

इन नक्षत्रोंमें शहर, हवेली, घर, बगीचा, हाथी, ध्वजा इन्होंके कार्य, देवमंदिर, दीवाल, बाग, कोट, मंडप ये कार्य शुभ हैं ॥ ३२ ॥ इति ऊर्ध्वमुखानि ।

स्थिरं रोहिण्युत्तराभं क्षिप्रं सूर्याश्विपुष्यभम् ॥
साधारणं द्विदैवत्यं वह्निभं चरसंज्ञितम् ॥ ३३ ॥

रोहिणी, तीनों उत्तरा ये स्थिर संज्ञक नक्षत्र हैं । हस्त, अश्विनी, पुष्य ये क्षिप्रसंज्ञक हैं । विशाखा, भरणी, कृत्तिका ये साधारणसंज्ञक नक्षत्र हैं॥३३॥

वस्वादित्यंबुपस्वातिविष्णुभं मृदुसंज्ञितम् ॥
चित्रांत्यमित्रशशिभमुग्रं पूर्वामघांतकम् ॥
मूलेंद्राह्यार्द्रभं तीक्ष्णं स्वनामसदृशं फलम् ॥ ३४ ॥

धनिष्ठा, पुनर्वसु, शतभिषा, स्वाती, श्रवण ये नक्षत्र चरसंज्ञक हैं और चित्रा, रेवती, अनुराधा, मृगशिर ये मृदुसंज्ञक हैं । मूल, ज्येष्ठा, आश्लेषा, आर्द्रा ये तीक्ष्णसंज्ञक नक्षत्र ये अपने नामके सदृश फल देनेवाले हैं । ये संज्ञा मुहूर्त्त देखनेमें काम आती हैं ॥ ३४ ॥

चित्रादित्याश्विविष्ण्वंत्यरावीमित्रवसूड्डुषु ॥
स मृगेषु च बालानां कर्णवेधक्रिया हिता ॥ ३५ ॥
दस्रेंद्वदितितिष्येषु करादित्रितये तथा ॥
गजकर्माखिलं यत्तद्विधेयं स्थिरभेषु च ॥ ३६ ॥

चित्रा, पुनर्वसु, अश्विनी, श्रवण, रेवती, हस्त, अनुराधा, धनिष्ठा, मृगशिर इन नक्षत्रोंमें बालकोंके कान बिंधवाने चाहिये । अश्विनी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाति इन नक्षत्रोंमें हाथीका लेना देना शुभ है । और स्थिरसंज्ञक नक्षत्रोंमें भी लेना देना शुभ है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

अथ अश्वमुहूर्त्तः ।

सुदिने चरभे क्षिप्रे मृदुभे स्थिरभेषु च ॥
वाजिकर्माखिलं कर्म सूर्यवारे विशेषतः ॥ ३७ ॥

चंद्रबल आदिसे शुभवार हो और चरसंज्ञक, क्षिप्र, मृदु और स्थिरसंज्ञक नक्षत्र होवें तब सब प्रकारसे घोडोंका कार्य (बेचना खरीदना आदि) करना रविवार विषे शुभ कहा है ॥ ३७ ॥

चित्राश्रवणवैरिचिन्युत्तरासु गमागमम् ॥
दर्शाष्टम्यां चतुर्दश्यां पशूनां न कदाचन ॥ ३८ ॥

चित्रा, श्रवण, रोहिणी, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें तथा अमावस्या, अष्टमी, चतुर्दशी इन तिथियोंमें गौ, बैल आदि पशुओंको खरीदके घरमें नहीं लावे और घरसे बाहर भी नहीं निकाले ॥ ३८ ॥

अथ हलप्रवाहमुहूर्त्तः ।

मृदुध्रुवक्षिप्रचरविशाखापितृभेषु च ॥
हलप्रवाहं प्रथमं विदध्यान्मूलभे वृषैः ॥ ३९ ॥

मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर इन संज्ञावाले तथा विशाखा और मघा नक्षत्र व मूल नक्षत्रमें खेतमें पहिले बैलोंकरके हल जोतना शुभदायक है ॥ ३९ ॥

हलादौ वृषनाशाय भत्रयं सूर्यभुक्तभात् ॥
अग्रे यत्त्रैव वै लक्ष्म्यै सौम्यं पार्श्वे च पंचकम् ॥ ४० ॥

और हलचक्रकी आदिमें सूर्यके नक्षत्रसे तीन नक्षत्र हैं वे बैलोंका नाश करते हैं फिर ३नक्षत्र अग्रभागमें हैं उनमें लक्ष्मी प्राप्ति हो, बराबरमें ५ नक्षत्र शुभदायक कहे हैं ॥ ४० ॥

शूलत्रयेऽपि नवकं मरणायान्यपंचकम् ॥
श्रियै पुच्छे त्रयं श्रेष्ठं स्याच्चक्रे लांगले शुभम् ॥ ४१ ॥

त्रिशूलके ऊपर नौ नक्षत्र मरणदायक हैं, अन्य पांच नत्रक्ष लक्ष्मीदायक फिर पूँछके ऊपर तीन नक्षत्र श्रेष्ठ हैं ऐसे हलचक्रपर २८ नक्षत्र रखकर शु अशुभ फल विचारना चाहिये ॥ ४१ ॥

मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु पितृवायुवसूडुषु ॥
समूलभेषु बीजोप्तिरत्युत्कृष्टफलप्रदा ॥ ४२ ॥

और मृदुसंज्ञक,ध्रुवसंज्ञक,क्षिप्रसंज्ञक तथा मघा, स्वाति, धनिष्ठा, मूल इ नक्षत्रोंमें बीज बोवना अत्यंत शुभदायक है ॥ ४२ ॥

भवेद्भत्रितयं मूर्ध्नि धान्यनाशाय राहुभात् ॥
गले त्रयं कज्जलाय वृद्ध्यै च द्वादशोदरे ॥ ४३ ॥

राहुके नक्षत्रसे तीन नक्षत्र मस्तकपर धरने वे धान्यका नाश करनेवाले और गलपर तीन नक्षत्र हैं उनमें जल थोड़ा वर्षे अथवा अन्नके कौवा ल जाता है, उदरपर बारह नक्षत्र वृद्धिदायक हैं ॥ ४३ ॥

निस्तंडुलत्वं लांगूले भचतुष्टयमीरितम् ॥
नाभौ वह्निः पंचकं यद्बीजोप्ताविति चिंतयेत् ॥ ४४ ॥

पूंछपर चार नक्षत्र हैं उनमें दाना कमपडता है, फिर पांच नक्षत्र नाभि पर हैं उनमें अग्निका भय हो, ऐसे बीज बोनेमें यह राहुचक्र भी विचा जाता है ॥ ४४ ॥

अथ रोगिस्नानमुहूर्त्तः ।

स्थिरेष्वदितिसर्पान्त्यपितृमारुतभेषु च ॥
न कुर्याद्रोगमुक्तश्च स्नानं वारेंदुशुक्रयोः ॥ ४५ ॥

स्थिरसंज्ञक नक्षत्र और पुनर्वसु, आश्लेषा, रेवती, मघा, स्वाति इन नक्ष त्रोंमें तथा चन्द्र शुक्रवार विषे रोगसे छुटे हुए पुरुषको स्नान नहीं करन चाहिये ॥ ४५ ॥

अथ नृत्यमुहूर्त्तः ।

उत्तरात्रयमित्रेंद्रवसुवारुणभेषु च ॥
पुष्यार्कपौष्णधिष्ण्येषु नृत्यारंभः प्रशस्यते ॥ ४६ ॥

तीनों उत्तरा, अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा, पुष्य, हस्त, रेवती इन नक्षत्रोंमें नाचना प्रारंभ करना शुभ है ॥ ४६ ॥

पूर्वार्धयुंजि षट्कानि पौष्णभाद्रुद्रभात्ततः ॥
मध्ययुंजि द्वादशर्क्षाणीन्द्रभान्नवभानि च ॥ ४७ ॥

रेवती आदि छह नक्षत्र पूर्वार्ध युंजासंज्ञक कहे हैं, फिर आर्द्रा आदि बारह नक्षत्र मध्य युंजासंज्ञक कहे हैं और ज्येष्ठा आदि नव नक्षत्र परार्ध युंजासंज्ञक हैं ॥ ४७ ॥

परार्धयुंजि क्रमशः संप्रीतिर्दंपतेर्मिथः ॥ ४८ ॥ इति युंजा ॥

ये नक्षत्र वरकन्याके विचारने चाहियें, जो एक युंजा होय तो स्त्रीपुरुषोंकी आपसमें प्रीति रहे ॥ ४८ ॥ इति युंजा ।

अथ चन्द्रोदयविचार ।

जघन्यास्तोयमार्द्राहिपावनांतकतारकाः ॥
ध्रुवादितिद्विदैवत्यो बृहत्तारा: परा: समाः ॥ ४९ ॥

शतभिषा, आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाति, रेवती ये जघन्यसंज्ञक तारे हैं और ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र तथा पुनर्वसु, विशाखा ये बृहत् संज्ञक तारे हैं, अन्य सम कहे हैं ॥ ४९ ॥

क्रमादभ्युदिते चंद्रे त्वनर्घार्घसमानि च ॥
अश्व्यग्नींदुभनैर्ऋत्यभाग्यभत्वाष्ट्रत्र्युत्तराः ॥ ५० ॥

तहां क्रमसे अर्थात् जघन्यसंज्ञक नक्षत्रोंमें चन्द्रमा उदय होय तो अन्नादिकका भाव महँगा रहै, बृहत् संज्ञक नक्षत्रोंमें उदय होय तो सस्ताभाव होय, सम नक्षत्रोंमें समानभाव जानना । अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिर, मूल, पूर्वाफाल्गुनी चित्रा तीनों उत्तरा ॥ ५० ॥

अथ राजयात्रा ।

पितृद्विदैवताख्यातास्तारा: स्युः कुलसंज्ञकाः ॥
धातृज्येष्ठाऽदितिस्वाती पौष्णार्कहरिदेवताः ॥ ५१ ॥
अजपांतकभौजंगताराश्चोपकुलाह्वयाः ॥
शेषाः कुलाकुलास्तारास्तासां मध्ये कुलोडुषु ॥ ५२ ॥

गम्यते यदि भूपालैः पराजयमवाप्यते ॥
भेषूपकुलसंज्ञेषु जयं प्राप्नोति भूमिपः ॥ ५३ ॥
संधिर्भवेत्तयोः साम्यं तदा कुलकुलोडुषु ॥
अर्कार्किभौमवारे चेद्भद्राया विषमांघ्रिभे ॥ ५४ ॥

मघा, विशाखा ये कुलसंज्ञक तारा हैं । रोहिणी, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, स्वाति रेवती, हस्त, श्रवण, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी, आश्लेषा ये उपकुलसंज्ञक नक्ष हैं । तिनके मध्यमें कुलसंज्ञक नक्षत्रोंविषे राजालोग युद्धके वास्ते गमन क तो पराजय (हार) होती है और उपकुलसंज्ञक नक्षत्रोंमें जय (जीत) होती है । कुलाकुल नक्षत्रोंमें गमन करें तो दोनों राजा समान रहैं, आपस मिलाप रहै ॥ इति राजयात्रा ॥ रवि, शनि, भौमवारविषे विषमांघ्रि नक्षत्र विषे ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

त्रिपुष्करे त्रिगुणदं द्विगुणं यमलांघ्रिभम् ॥
दद्यात्तद्दोषनाशाय गोत्रयं मूल्यमेव वा ॥ ५५ ॥

त्रिपुष्करयोगका तिगुना फल है और यमलांघ्रियोग दुगुना, दोषक शांतिके वास्ते तीन गौओंका दान करे ॥ ५५ ॥

त्रिपुष्करे द्वयं दद्यान्न दोषो ऋक्षमात्रतः ॥
पुष्यः परकृतं हन्तुं शक्तोऽनिष्टं च यत्कृतम् ॥ ५६ ॥
दोषं परो न शक्तस्तु चन्द्रेप्यष्टमगेऽपि वा ॥
क्रूरो विधुयुतो वापि पुष्यो यदि बलान्वितः ॥ ५७ ॥
विना शनिगृहं सर्वमङ्गलेष्विष्टदः सदा ॥ ५८ ॥

और त्रिपुष्करयोगमें राजा गमन करे तो राजाको उस दोषकी शान्तिके वास्ते दो गौओंका दान करना चाहिये । अथवा गोमूल्य देना चाहिये औ त्रिपुष्करयोगके केवल नक्षत्र मासके दोष नहीं होसकता । पुष्य, नक्षत्रमें ज यात्रा आदि शुभकर्म किया जाय तहां कोई अनिष्ट योग होय तो पुष नक्षत्र उस दोषको दूर करसकता है और जो किसी प्रकारसे पुष्य नक्ष ही अशुभदायक हो तो उसको कोई अन्य शुभयोग नहीं हटा सकता । और जो पुष्य बलयुक्त होय तो आठवें चन्द्रमा हो अथवा चंद्रमा क्रूरग्रहसे युक्त हो तो इत्यादि सब दोषोंको नष्ट करता है । संपूर्ण मङ्गल कार्योंको सि करता है ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

अथ नक्षत्राणां ताराः ।

रामा ३ ग्नि ३ ऋतु ६ बाणा ५ ग्नि ३
भू १ वेदा ४ ग्नि ३ शरे ५ षवः ५ ॥ नेत्र २ बाहु २
शरें ५ द्विं १ दु १ वेद ४ वह्न्य ३ ग्नि ३ शंकराः ११ ॥ ५९ ॥

अश्विनीके ३ तारे हैं भरणीके ३ कृत्तिका० ६ रोहिणी० ५ मृगशिर० ३ आर्द्रा० १ पुनर्वसु० ४ पुष्य० ३ आश्लेषा० ५ मघा० ५ पूर्वा फाल्गुनी० २ उत्तरा फाल्गुनी० २ हस्त० ५ चित्रा० १ स्वाती० १ विशाखा० ४ अनुराधा० ३ ज्येष्ठा० ३ मूलके ११ तारे हैं ॥ ५९ ॥

वेद ४ वेदा ४ ग्नि ३ वह्न्य ३ ब्धि ४ शत-
१०० द्वि २ द्वि २ रदाः ३२ क्रमात् ॥
तारासंख्यास्तु विज्ञेया दस्रादीनां पृथक्पृथक् ॥ ६० ॥
या दृश्यते दीप्ततारा भगणे योगतारका ॥ ६१ ॥

पूर्वाषाढके ४ उत्तराषाढके ४ अभिजित्के ३ श्रवण० ३ धनिष्ठा० ४ शतभिषा० १०० पूर्वाभाद्रपदाके २ तारे उत्तरा भाद्रपदाके ५ रेवतीके ३२ तारे हैं । ऐसे अश्विनी आदि नक्षत्रोंके अलग २ तारे आकाशमें जानने चाहियें । शिशुमार चक्रमें जो प्रकाशमान तारा दीखते हैं वे योगतारा कहे हैं ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ इति तारासंख्या ।

वृषवृक्षोऽश्विभाद्याम्यधिष्ण्यात्पारूषकस्ततः ॥
उदुम्बरो ह्यग्निधिष्ण्याद्रोहिण्या जम्बुकस्तरुः ॥ ६२ ॥

अश्विनी नक्षत्रसे बांसा उत्पन्न हुआ है, भरणी नक्षत्रसे फालसा और कृत्तिकासे गूलर, रोहिणीसे जामन वृक्ष उत्पन्न हुआ ॥ ६२ ॥

इन्दुभात्खदिरो जातः कलिवृक्षश्च रौद्रभात् ॥
सम्भूतो दितिभाद्वंशः पिप्पलः पुष्यसम्भवः ॥ ६३ ॥

मृगशिर नक्षत्रसे खैर उत्पन्न भया, आर्द्रासे बहेडाका वृक्ष उत्पन्न भया है, पुनर्वसुसे बांस उत्पन्न भया, पुष्यसे पीपल उत्पन्न भया है ॥ ६३ ॥

सर्पधिष्ण्यान्नागवृक्षो वटः पितृभसम्भवः ॥
पालाशो भाग्यजातश्च प्लक्षश्चार्यमसम्भवः ॥ ६४ ॥

आश्लेषासे नाग वृक्ष (गंगेरन) उत्पन्न भया है, मघासे बड उत्पन्न भया, पूर्वाफाल्गुनीसे ढाक, उत्तराफाल्गुनीसे पिलखन ॥ ६४ ॥

अरिष्टवृक्षो रविभाच्छ्रीवृक्षस्त्वाष्ट्रसम्भवः ॥
स्वात्यृक्षादर्जुनो वृक्षो द्विदैवात्पाहिकस्ततः ॥ ६५ ॥

हस्तसे रिंठडा वृक्ष, चित्रासे नारियल वृक्ष, स्वातिसे अर्जुन वृक्ष, विशाखासे पाहवृक्ष ॥ ६५ ॥

मित्रभाद्वकुलो जातो विष्टिः पौरंदरर्क्षजः ॥
सर्जवृक्षो मूलभाच्च वंजुलो वारिधिष्ण्यजः ॥ ६६ ॥
पनसो विश्वभाज्जातो ह्यर्कवृक्षस्तु विष्णुभात् ॥
वसुधिष्ण्याच्छमी जाता कदम्बो वारुणर्क्षजः ॥ ६७ ॥
अजैकपाच्चूतवृक्षोऽहिर्बुन्ध्यपिचुमन्दकः ॥
मधुवृक्षः पौष्णधिष्ण्यादेवं वृक्षं प्रपूजयेत् ॥ ६८ ॥
अरियोनिभवो वृक्षो पीडनीयः प्रयत्नतः ॥ ६९ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां नक्षत्रफलाध्यायः षष्ठः ॥ ६९ ॥

अनुराधासे बकुल, ज्येष्ठासे देवदारु वृक्ष उत्पन्न भया है, मूलसे राल वृक्ष, पूर्वाषाढासे जलवेत भया, उत्तराषाढासे फालसा भया, श्रवणसे आ भया, धनिष्ठासे जाँट भया, शतभिषासे कदंब, पूर्वाभाद्रपदासे आम्रवृक्ष उत्तरा भाद्रपदासे नींब वृक्ष, रेवतीसे महुवा वृक्ष उत्पन्न भया है । इस प्रका इन नक्षत्रोंकी शांतिके वास्ते इन वृक्षोंका पूजन करना चाहिये और इ नक्षत्रोंको शत्रु संज्ञक योनिवाला जो नक्षत्र हो उस नक्षत्रके वृक्षको पीडि करै ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां नक्षत्रफलाध्यायः षष्ठः ॥ ६ ॥

योगेशा यमविष्ण्वंदुधातृजीवानिशाकराः ॥
इंद्रतोयाहिवह्न्यर्कभूमरुद्रुतोद्रयपाः ॥ १ ॥

अब योगोंके स्वामी कहते हैं-धर्मराज १ विष्णु २ चंद्रमा ३ ब्रह्मा बृहस्पति ५ चन्द्रमा ६ इंद्र ७ जल ८ सर्प ९ अग्नि १० सूर्य ११ भूमि वायु १३ शिव १४ वरुण १५ ॥ १ ॥

गणेशरुद्रधनदास्त्वष्टृमित्रषडाननाः ॥
सावित्री कमला गौरी नासत्यौ पितरोऽदितिः ॥ २ ॥

गणेश १६ रुद्र १७ कुबर १८ त्वष्टा १९ मित्र २० स्वामिकार्त्तिक

सावित्री २२ लक्ष्मी २३ गौरी २४ अश्विनीकुमार २५ पितर २६ अदिति२७ ऐसे ये २७ देवता विष्कंभ आदि योगोंके स्वामी कहे हैं ॥ २ ॥

सवैधृतौ व्यतीपातो महापातावुभौ सदा ॥
परिघस्य तु पूर्वार्द्धं सर्वकार्येषु गर्हितम् ॥ ३ ॥
विष्कंभवज्रयोस्तिस्रः षट्कं गंडातिगंडयोः ॥
व्याघाते नव शूले तु पंचनाड्यस्तु गर्हिताः ॥ ४ ॥

और वैधृति व्यतीपात ये दोनों महापात हैं, सम्पूर्ण त्याज्य हैं। परिघ योगका पूर्वार्द्ध त्याज्य है, सब कामोंमें निंदित है। विष्कंभ, वज्र, इनके आदिकी तीन २ घडी वर्जित हैं और गण्ड अतिगंडकी छह २ घडी वर्जित हैं, व्याघातकी नव, शूलकी पांच घडी वर्जित हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

आदितीन्दुमघाश्लेषामूलमैत्रेज्यभानि च ॥
ज्ञेयानि सहचित्राणि मूर्ध्निभानि यथाक्रमात् ॥ ५ ॥

और पुनर्वसु, मृगशिर, मघा, आश्लेषा, मूल, अनुराधा, पुष्य, चित्रा ये नक्षत्र यथाक्रमसे मस्तकके क्रमविषे कहे हैं ॥ ५ ॥

लिखेदूर्ध्वगतामेकां तिर्यग्रेखास्त्रयोदश ॥
तत्र खार्जूरिके चक्रे कथितं मूर्ध्नि भं न्यसेत् ॥ ६ ॥
भान्येकरेखागतयोः सूर्याचंद्रमसोर्मिथः ॥
एकार्गलो दृष्टिपातश्चाभिजिद्वर्जितानि वै ॥ ७ ॥

तहां एक रेखा खींचे और तेरह रेखा तिरछी खींचनी चाहिये और तहा खार्जूरिक यन्त्र अर्थात् खजूरवृक्ष सरीखे आकारवाला चक्र बनालेवे फिर सब नक्षत्र लिखचुके पीछे विचारै जो सूर्य चन्द्रमाके नक्षत्र एक रेखापर आजावें तो एकार्गल दृष्टिपात योग होता है। यहां अभिजित् नक्षत्रकी गिनती नहीं करनी ॥ ६ ॥ ७ ॥

लांगले कमठे चक्रे फणिचक्रे त्रिनाडिके ॥
अभिजिद्गणना नास्ति चक्रपाते विशेषतः ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां योगाध्यायः सप्तमः ॥ ७ ॥

हलचक्र, कूर्मचक्र, सर्पाकारचक्र, त्रिनाडीचक्र। इनमें अभिजित् नक्षत्रकी गिनती नहीं करनी और विशेषकरके चक्रपातमें भी गिनती नहीं करनी ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां योगप्रकरणाध्यायः सप्तमः ॥ ७ ॥

अथ करणेशफलम् ।

इन्द्रः प्रजापतिर्मित्रश्चार्यमाभूर्हरिप्रिया ॥
कीनाशः कलिरुक्षाख्यौ तिथ्यर्धे शाख्यहिर्मरुत् ॥ १ ॥

इंद्र, प्रजापति, मित्र, अर्यमा, भूमि, लक्ष्मी, कीनाश, कलि, वृषभ, सर्प, वायु ये देवता क्रमसे बवादिकरणोंके स्वामी कहे हैं ॥ १ ॥

बवादिवणिगन्तानि शुभानि करणानि षट् ॥
परीता विपरीता वा विष्टिर्नेष्टा तु मङ्गले ॥ २ ॥

बवआदि वणिजपर्यंत छह करण तो शुभ हैं और विष्टि अर्थात् भद्राकी सब घडी सर्वदा अशुभ हैं । मंगल कार्यमें वर्ज देनी चाहियें ॥ २ ॥

अथ भद्राया अन्यप्रकारः ।

मुखे पञ्च गले त्वेका वक्षस्येकादश स्मृताः ॥
नाभौ चतस्रः कट्यां तु तिस्रः पुच्छाख्यनाडिकाः ॥ ३ ॥

भद्राकी प्रथम पांच घडी मुखपर रखनी, फिर १ घडी गलापर, फिर छातीपर ग्यारह घडी, नाभिपर चार, कटिपर तीन, पूंछपर तीन घडी ॥३॥

कार्यहानिर्मुखे मृत्युर्गले वक्षसि निःस्वता ॥
कट्यामुद्भ्रमनं नाभौ च्युतः पुच्छ ध्रुवो जयः ॥
स्थिराणि मध्यमान्येषां नेष्टौ नागचतुष्पदौ ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां करणाध्यायोऽष्टमः ॥ ८ ॥

मुखकी घडियोंमें कार्यकी हानि, गलापर मृत्यु, छातीपर दरिद्रता, कटिपर भ्रमण, नाभिपर हानि, पूंछपरकी घटियोंमें कार्यकी सिद्धि होती है । इन्होंके बीचमें स्थिरसंज्ञक करण मध्यम है और नाग चतुष्पद ये दो अशुभ हैं ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां करणाध्यायोऽष्टमः ॥ ८ ॥

अथ शुभाशुभमुहूर्त्ताः ।

दिवा मुहूर्ता रुद्राहिमित्रपित्र्यवसूदकम् ॥
विश्वे विधातृब्रह्मेन्द्रा इन्द्राग्निनिर्ऋतितोयपाः ॥ १ ॥

रुद्र १ सर्प २ मित्र ३ पितर ४ वसु ५ उदक ६ विश्वेदेवा ७ अभिजित् ८ ब्रह्मा ९ इंद्र १० इंद्राग्नी ११ राक्षस १२ वरुण १३ ॥ १ ॥

अर्यमा भगसंज्ञश्च विज्ञेया दश पञ्च च ॥
ईशाजपादहिर्बुन्ध्याः पूषाश्वियमवह्नयः ॥ २ ॥
धातृचन्द्रादितिज्याख्यविष्ण्वर्कत्वाष्ट्रवायवः ॥
अह्नः पञ्चदशो भागस्तथा रात्रिप्रमाणतः ॥ ३ ॥
मुहूर्त्तमानं द्वे नाड्यौ कथिते गणकोत्तमैः ॥
अथाशुभमुहूर्त्तानि वारादिक्रमशो यथा ॥ ४ ॥

अर्यमा १४ भग १५ ये दिवामुहूर्त्त हैं अर्थात् दिनमें दोदो घडी प्रमाणतक यथाक्रमसे रुद्रआदिनामक ये १५ मुहूर्त्त रहते हैं इनके अपने नामसदृश फल जानना और शिव १ अजपात् २ अहिर्बुध्न्य ३ पूषा ४ अश्विनीकुमार ५ धर्मराज ६ अग्नि ७ ब्रह्मा ८ चंद्रमा ९ अदिति १० बृहस्पति ११ विष्णु १२ सूर्य १३ त्वष्टा १४ वायु १५ ये पंदरह मुहूर्त रात्रिके हैं अर्थात् जैसे दिनके पंदरह भाग किये हैं तैसे ही रात्रिके १५ भाग करलेना और २ घड़ीका एक मुहूर्त्त होता है और दिनमान रात्रिमान तीस घडीसे कमज्यादा होवें तो इनमेंसे एक २ मुहूर्त्त भी दो दो घड़ीसे कमज्यादा समझलेना चाहिये । अब इनमें वार आदि क्रमसे जो मुहूर्त्त अशुभ होते हैं उनको कहते हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

अर्यमा राक्षसब्राह्मौ पित्र्याग्नेयौ तथाभिजित् ॥
राक्षसापो ब्रह्मपित्र्यौ भौजंगेशाविनादिषु ॥ ५ ॥
वारेषु वर्जनीयास्ते मुहूर्ताः शुभकर्मसु ॥
अन्यानपि तु वक्ष्यामि योगानत्र शुभाशुभान् ॥ ६ ॥

अर्यमा मुहूर्त्त सूर्यवारमें अशुभ है और सोमवारमें राक्षस, ब्रह्मा ये अशुभ हैं, मंगलमें पितर, अग्नि ये अशुभ हैं, बुधमें अभिजित् मुहूर्त्त अशुभ है, बृहस्पतिको राक्षस और उदक अशुभ, शुक्रको ब्रह्मा, पितर अशुभ, शनिको सर्प, शिव ये मुहूर्त्त अशुभ हैं । रविवार आदिकोंमें ये मुहूर्त्त शुभकर्मोंमें यत्न करके वर्जदेने चाहिये । अब यहां अन्य भी शुभ अशुभ योगोंको कहते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

सूर्यभाद्वेदगोतर्कदिग्विश्वनखसंमिते ॥
चंद्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसंघविनाशकाः ॥ ७ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां मुहूर्ताध्यायो नवमः ॥ ९ ॥

जिस नक्षत्रपर सूर्य हो उस नक्षत्रसे चन्द्रमाका नक्षत्र अर्थात् वर्त्तमान नक्षत्र ४-९-६-१०-१३-२० इन संख्याओंपर होवे तो रवियोग होते हैं वे दोषोंके समूहोंको नष्ट करते हैं अर्थात् वे शुभदायक योग जानने ॥ ७ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां मुहूर्त्ताध्यायो नवमः ॥ ९ ॥

भूकंपः सूर्यभात्सप्तमर्क्षे विद्युच्च पंचमे ॥
शूलोऽष्टमेऽब्धिदिग्भे तु शनिरष्टादशे तथा ॥ १ ॥
केतुः पंचदशे दंड उल्का एकोनविंशतिः ॥
मोहनिर्घातकंपाश्च कुलिशं परिवेषणम् ॥ २ ॥
विज्ञेयमेकविंशर्क्षादारभ्य च यथाक्रमम् ॥
चंद्रयुक्तेषु भेष्वेषु शुभकर्म न कारयेत् ॥ ३ ॥

सूर्यके नक्षत्रसे (वर्त्तमाननक्षत्र) सातवां होय तो भूकंप योग होता है, पांचवां विद्युत्, आठवां शलभ, चौदहवां शनि, अठारहवां नक्षत्र होय तो केतुसंज्ञक योग, पंद्रहवां नक्षत्र होय तो दंड, १९ हो तो उल्का २१-२२-२३-२४-२५-ये होवें तो यथाक्रमसे मोह, निर्घात, कंप, वज्र, परिवेषण ये योग होते हैं। ये नक्षत्र चन्द्रमाके देखे जाते हैं अर्थात् सूर्यके नक्षत्रसे चन्द्रमाका नक्षत्र गिनलेना चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

अथ क्रकचयोगः ।

क्रकचं हि प्रवक्ष्यामि योगं शास्त्रानुसम्मतम् ॥
निंदितं सर्वकार्येषु तस्मिन्नैवाचरेच्छुभम् ॥ ४ ॥

अब सब कामोंमें निंदित शास्त्रोक्त क्रकचनामक योगको कहते हैं तिसमें कुछ भी शुभकर्म नहीं करना चाहिये ॥ ४ ॥

त्रयोदशस्युर्मिलने संख्यया थितिवारयोः ॥
क्रकचो नाम योगोयं मंगलेष्वतिगर्हितः ॥ ५ ॥

तिथि और वारके मिलनेसे तेरह १३ संख्या होजाय तब क्रकच योग होता है जैसे रविवार १ को १२, सोमवार २ को ११ मंगलको दशमी, बुधको नवमी, गुरुको ८, शुक्रको ७, शनिको छठ इनके योगमें क्रकच योग होता है । यह शुभकर्मोंमें अति निंदित है ॥ ५ ॥

सप्तम्यामर्कवारश्चेत्प्रतिपत्सौम्यवासरे ॥
संवर्तयोगो विज्ञेयः शुभकर्मविनाशकृत् ॥ ६ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां संवर्त्तकयोगः ॥

सप्तमी तिथिको रविवार हो और प्रतिपदाको बुधवार होय तब संवर्त्तक योग होता है । यह योग शुभ कर्मको नष्ट करता है ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसं०भाषाटीकायां संवर्त्तकयोगः ।

आनंदः कालदंडश्च धूम्रधातृसुधाकराः ॥
ध्वांक्षध्वजाख्यश्रीवत्सवज्रमुद्गरछत्रकाः ॥ ७ ॥
मित्रमानसपद्माख्यलुंबकोत्पातमृत्यवः ॥
काणः सिद्धिः शुभामृतमुसलांतककुंजराः ॥ ८ ॥
राक्षसाख्यश्चरस्थैर्यवर्धमानाः क्रमादमी ॥
योगाः स्वसंज्ञफलदा अष्टाविंशतिसंख्यकाः ॥ ९ ॥

आनंद १ कालदंड २ धूम्र ३ धाता ४ चन्द्र ५ ध्वांक्ष ६ ध्वज ७ श्रीवत्स ८ वज्र ९ मुद्गर १० छत्र ११ मित्र १२ मानस १३ पद्म १४ लुंबक १५ उत्पात १६ मृत्यु १७ काण १८ सिद्धि १९ शुभ २० अमृत २१ मुसल २२ रोग २३ मातंग २४ राक्षस २५ चर २६ स्थिर २७ वर्द्धमान २८ ऐसे क्रमसे ये अट्ठाईस योग कहे हैं । ये योग अपने नामके अनुसार शुभ अशुभ फल देते हैं ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

रविवारे क्रमादेते दस्रभान्मृगमाद्विधौ ॥
सार्पाद्भौमे बुधे हस्तान्मैत्रभात्सुरमंत्रिणः ॥ ११ ॥
वैश्वदेवे भृगुसुते वारुणाद्भास्करात्मजे ॥
हस्तर्क्षे रविवारेऽब्जे चेंदुभं दस्रभं कुजे ॥ ११ ॥
सौम्ये मित्रं सुराचार्ये तिष्यं पौष्णं भृगोः सुते ॥
रोहिणी मंदवारे तु सिद्धियोगाह्वया अमी ॥ १२ ॥

यत्र स्यादिन्दुनक्षत्रमानन्दादिगणस्ततः ॥
अष्टाविंशतियोगानां क्रमोयं प्रोच्यते बुधैः ॥ १३ ॥
इतिश्रीनारदीयसंहितायां सिद्धियोगाः ॥

इनके देखनेका यह क्रम है कि सूर्यवारको अश्विनी नक्षत्र हो तो आनंद योग होता है, भरणी हो तो कालदंड ऐसा क्रम जानलेना और सोमवारको मृगशिर नक्षत्रसे, मंगलको आश्लेषासे, बुधको हस्तसे, बृहस्पतिको अनुराधासे, शुक्रको उत्तराषाढासे, शनिको शतभिषासे, आनंदादिक योग जानने और हस्त नक्षत्र सूर्य वारमें हो, चन्द्रवारमें मृगशिर, मंगलको अश्विनी और बुधको अनुराधा, बृहस्पतिको पुष्य नक्षत्र होय, शुक्रको शनिको रोहिणी नक्षत्र होय तब ये सिद्धयोग हो जाते हैं ऐसे यह आनंद आदि योगोंका क्रम पंडित जनोंने कहा है। चन्द्रमाका (वर्त्तमान) नक्षत्र जौनसा हो वही आनंदादि योग जानलेना ॥ १० ॥ १३ ॥

आदित्यभौमयोर्नन्दा भद्रा शुक्रशशांकयोः ॥
जया सौम्ये गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा तु नो शुभा ॥ १४ ॥

रवि, मंगलवारको नंदासंज्ञक तिथि होवें, शुक्र व चन्द्रवारको भद्रा तिथि होवें, बुधको जया और बृहस्पतिको रिक्ता, शनिको पूर्णा तिथि होवें तो शुभ नहीं है अर्थात् अशुभ योग जानना ॥ १४ ॥

नन्दा तिथिः शुक्रवारे सौम्ये भद्रा जया कुजे ॥
रिक्ता मन्दे गुरोर्वारे पूर्णा सिद्धाह्वया अमी ॥ १५ ॥

शुक्रवारको नंदातिथि, बुधको भद्रा, मंगलको जया, शनिको रिक्ता, बृहस्पतिवारको पूर्णा तिथि होवे तो ये सिद्धियोग कहे हैं ॥ १५ ॥ इति सिद्धियोगाः ।

अथ दग्धयोगाः ।

एकादश्यामिंदुवारो द्वादश्यामार्किवासरः ॥
षष्ठी बृहस्पतेर्वारे तृतीया बुधवासरे ॥ १६ ॥

एकादशीविषे सोमवार हो, द्वादशीको शनिवार हो, बृहस्पतिवारमें छठ- बुधवारविषे तृतीया हो ॥ १६ ॥

अष्टमी शुक्रवारे तु नवम्यामर्कवासरः ॥
पञ्चमी भौमवारे तु दग्धयोगाः प्रकीर्तिताः ॥ १७ ॥

शुक्रवारको अष्टमी, रविको नवमी, पंचमीको मंगलवार होवे तो ये दग्धयोग कहे हैं ॥ १७ ॥

दग्धयोगाश्च विज्ञेया पंगुयोगाभिधा अमी ॥
यमर्क्षमर्कवारेऽब्जे चित्रा भौमे तु विश्वभम् ॥ १८ ॥
बुधे धनिष्ठार्यमभं गुरौ ज्येष्ठा भृगोर्दिने ॥
रेवती मन्दवारे तु दग्धयोगा भवंत्यमी ॥ १९ ॥

ये जो दग्धयोग हैं इनको पंगुयोग भी कहते हैं। रविवारको भरणी, सोमको चित्रा, मंगलको उत्तराषाढा, बुधको धनिष्ठा, बृहस्पतिको उत्तराफाल्गुनी, शुक्रको ज्येष्ठा, शनिको रेवती हो तो ये दग्धयोग कहे हैं ॥ १८ ॥ १९ ॥

विशाखादिचतुर्वर्गमर्कवारादिषु क्रमात् ॥
उत्पातमृत्युकाणाख्याः सिद्धियोगाः प्रकीर्तिताः ॥ २० ॥

और विशाखा आदि चार नक्षत्रोंका वर्ग सूर्य आदि ७ वारोंमें यथाक्रमसे उत्पात १ मृत्यु २ काण ३ सिद्धि ४ ये चार योग होते हैं; जैसे कि रविवारको विशाखा हो तो उत्पात, अनुराधा मृत्यु, ज्येष्ठा काण, मूल हो तो सिद्धियोग होता है। फिर सोमको पूर्वाषाढामें उत्पात, उत्तराषाढामें मृत्यु ऐसा क्रम जानना। ऐसे यही क्रम सब वारोंमें करलेना। २८ नक्षत्रोंमें ७ वारोंमें ये चारों योग ठीक २ होवेंगे ॥ २० ॥

तिथिवारोद्भवा नेष्टा योगा वारर्क्षसम्भवाः ॥
हूणवङ्गखशेभ्योन्यदेशेष्वतिशुभप्रदाः ॥ २१ ॥
इति नारदीयसंहितायामुपग्रहाध्यायो दशमः ॥ १० ॥

तिथि और वारोंसे उत्पन्न हुए योग अशुभ हैं और वार तथा नक्षत्रसे उत्पन्न हुए योग हूण बंग (बंगाला) खश (नैपाल) इन देशोंके विना अन्य सब देशोंमें शुभ हैं ॥ २१ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायामुपग्रहाध्यायो दशमः ॥ १० ॥

अथ संक्रांतिप्रकरणम् ।

घोराध्वांक्षीमहोदर्यो नन्दा मन्दाकिनी मता ॥
मिश्रा राक्षसिका नाम सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥ १ ॥

घोरा, ध्वांक्षी, महोदरी, मन्दाकिनी, नन्दा, मिश्रा, राक्षसिका इन नामो वाली संक्रांति रविवारादिकोंमें अर्क होनेसे जानना, जैसे रविवारमें संक्रां अर्क होय तो घोरा नामवाली जानना ॥ १ ॥

शूद्रविट्तस्करक्ष्मापभूदेवपशुनीचजाः ॥
अनुक्तानां च सर्वेषां घोराद्याः सुखदाः स्मृताः ॥ २ ॥

घोरा संक्रांति शूद्रोंको सुख देती है, ध्यांक्षी वैश्योंको, महोदरी चोरोंको, मन्दाकिनी राजाओंको, नन्दा ब्राह्मण तथा पण्डितोंको, मिश्रा पशुवोंको, राक्षसी चांडाल आदि संपूर्ण नीचजातियोंको सुख देती है ॥ २ ॥

पूर्वाह्ने नृपतीन्हंति विप्रान्मध्यादिने विशः ॥
अपराह्णेऽस्तगे शूद्रान्प्रदोषे च पिशाचकान् ॥ ३ ॥

दुपहरके पहले संक्रांति अर्क हो तो राजाओंको नष्ट करै, मध्याह्नमें ब्राह्मणोंको, तीसरे प्रहरमें वैश्योंको, सायंकालमें शूद्रोंको प्रदोषसमयमें पिशाचोंको ॥ ३ ॥

निशि रात्रिचरान्नाट्यकारानपररात्रिके ॥
गोमाहिषेति सन्ध्यायां लिंगिनो निशि संक्रमः ॥ ४ ॥

रात्रिमें राक्षसोंको, आधीरात पीछे नाचनेवाले और तमासा करनेवालोंको पीड़ा करे। प्रातःकाल संध्यामें अर्के तो गोमहिष्यादिकोंको और उससे भी पीछे बिलकुल प्रभातसमय अर्के तो संन्यासी आदिकोंको पीडा करै ॥४॥

दिवा चेन्मेषसंक्रांतिरनर्थकलहप्रदा ॥
रात्रौ सुभिक्षमतुलं सन्ध्ययोर्वृष्टिनाशनम् ॥ ५ ॥

दिनमें मेषकी संक्रांति अर्के तो अशुभफल तथा प्रजामें वैरभाव करै, रात्रिमें अर्के तो अत्यंत सुभिक्ष हो, दोनों संध्याओंमें अर्के तो वर्षाका नाश करै ॥ ५ ॥

हरिशार्दूलवाराहखरकुञ्जरमाहिषाः ॥
अश्वश्वाजवृषाः पादायुधाःकरणवाहनाः ॥ ६ ॥

बव आदि जौनसा करण वर्त्तमान हो तिसके क्रमसे सिंह व्याघ्र वाराह गधा हस्ती भैंसा अश्व श्वान बकरा वृष मुरगा ये वाहन कहे हैं। यहां बवमें सिंह वाहन होता है और यह ११ करण यथाक्रमसे देख लेने ॥ ६ ॥

खशबाह्लिकवङ्गेषु संक्रांतिर्धिष्ण्यवाहना ॥
अन्यदेशेषु तिथ्यर्द्धवाहना स्याद्बवादितः ॥ ७ ॥

खश बाह्लिक वंग (बङ्गाला) इन देशोंमें नक्षत्रोंके क्रमसे संक्रांतिका वाहन जानना और अन्य देशोंमें बव आदिकरणोंके क्रमसे संक्रांतिका वाहन होता है ॥ ७ ॥

भुशुंडीभिंदिपालासिदंडकोदंडतोमरान् ॥
कुंतपाशांकुशास्त्रेषून्बिभर्ति करणेष्विनः ॥ ८ ॥

भुशुंडी, भिंदिपाल, खड्ग, दंड, धनुष, तोमर, भाला, फास, अंकुश, अस्त्र (तेगा) बाण ये शस्त्र बव आदि करणोंके क्रमसे संक्रांतिके कहे हैं ॥ ८ ॥

अन्नं च पायसं भैक्ष्यमपूपं च पयो दधि ॥
चित्रान्नं गुडमध्वाज्यशर्करा बवतो हविः ॥ ९ ॥

और अन्न, पायस, भिक्षा, पूड़ी, दूध, दही, चित्रान्न, गुड, मधु, घृत, शर्करा ये संक्रांतिके भोजन, बव आदिकरणोंके यथाक्रमसे जानने चाहिये॥९॥

निविष्टी वणिजे विष्ट्यां बालवे च गरे बवे ॥
कौलवे शकुने भानुः किंस्तुघ्ने चोर्ध्वसंस्थिता ॥ १० ॥

और वणिज, विष्टि, बालव, गर, बव, इन करणोंमें संक्रांति अर्के तो बैठी जानना, कौलव शकुनि किंस्तुघ्न इनमें खडी जानना ॥ १० ॥

चतुष्पात्तैतिले नागे सुप्तक्रांतिं करोति सा ॥
धान्यार्घवृष्टिसु भवेदनिष्टक्रमशस्तदा ॥ ११ ॥

चतुष्पाद, तैतिल, नाग इनमें अर्के तो सूती हुई संक्रांति जानना । बैठी हुई संक्रांतिमें अन्न सस्ता, खडीमें वर्षा और सूतीमें अशुभ फल जानना ॥११

आयुधं वाहनाहारो यज्जातीयजनस्य च ॥
स्वापोपविष्टतिष्ठंतस्ते लोकाः क्षयमाप्नुयुः ॥ १२ ॥

शस्त्र, वाहन, भोजन ये सब संक्रांतिके जिस जातिके जनके होवें, तथा सूती, बैठी, खडी जैसी हो तिसही प्रकारके जनोंका व पदार्थोंका नाश हो ॥ १२ ॥

अन्धको मंदसंज्ञश्च मध्यसंज्ञः सुलोचनः ॥
पर्यायाद्गणयेद्भानि रोहिण्यादि चतुर्विधम् ॥ १३ ॥

अंध, मंदलोचन, मध्यसंज्ञक, सुलोचन इस प्रकार रोहिणी आदि नक्षत्रोंको क्रमसे जानना । तहां चार २ नक्षत्रोंकी ७ आवृत्ति करलेनी, रोहिणी अंधा, मृगशिर मंदलोचन इत्यादि ॥ १३ ॥

स्थिरभेष्वर्कसंक्रांतिर्ज्ञेया विष्णुपदाह्वया ॥
षडशीतिमुखी ज्ञेया द्विस्वभावेषु राशिषु ॥ १४ ॥

वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ इन स्थिर राशियोंपर सूर्य संक्रांति होय तो विष्णुपदानामक संक्रांति जानना और मिथुन आदि द्विःस्वभावराशियों पर अर्क होय तब षडशीतिमुखी संक्रांति जानना ॥ १४ ॥

सौम्ययाम्यायने नूनं भवेतां मृगकर्किणोः ॥
तुलाधराजयोर्ज्ञेयो विषुवत्सूर्यसंक्रमः ॥ १५ ॥

मकरकी संक्रांति अर्के तब उत्तरायण प्रवृत्त होता है और कर्ककी संक्रांति अर्के उस दिन दक्षिणायन प्रवृत्त होता है और तुला तथा मेषकी संक्रांति अर्के उसदिन विषुवत् अर्थात् दिनरात्रिका समान काल होता है १५

अहःसंक्रमणे कृत्स्नं महत्पुण्यं प्रकीर्तितम् ॥
रात्रौ संक्रमणे भानोर्व्यवस्था सर्वसंक्रमे ॥ १६ ॥

दिनमें संक्रांति अर्के तो सारे दिनमें महान् पुण्य कहा है और रात्रिमें संक्रांति अर्के तो सब संक्रांतियोंमें व्यवस्था कही है ॥ १६ ॥

सूर्यस्योदयसंध्यायां यदि याम्यायनं भवेत् ॥
तदोदयादहः पुण्यं पूर्वाहः परतो यदि ॥ १७ ॥

जैसे कि सूर्य उदय होनेकी संधिमें दक्षिणायन अर्थात् कर्ककी संक्रांति अर्के तो उदय होनेवाले दिनमेंही पुण्यकाल जानना और जो उदयकालकी संधिसे पहलेही संक्रांति अर्के तो पहलेही दिन पुण्यकाल है, यह कर्ककी संक्रांतिकी व्यवस्था है ॥ १७ ॥

सूर्यास्तमनवेलायां यदि सौम्यायनं भवेत् ॥
तदोपेयादहः पुण्यं पराह्णः परतो यदि ॥ १८ ॥

और सूर्य अस्त होनेकी संधिमें मकरकी संक्रांति अर्के तो उसी दिन पुण्यकाल जानना, संधिसे पीछे रात्रिमें अगले दिन पुण्यकाल जानना ॥ १८ ॥

अर्धार्कास्तमनात्संध्याघटिकात्रयसंमिता ॥
तथैवार्धोदयात्प्रातर्घटिकात्रयसंमिता ॥ १९ ॥

सूर्यका आधा मण्डल अस्त होनेके बाद तीन घडीतक सायंसंध्या रहती है और आधा मंडल उदय होनेसे पहिले प्रातःकाल तीन घडी प्रभातकी संध्या कही है ॥ १९ ॥

प्रागर्धरात्रात्पूर्वाह्ने पूर्ववद्विष्णुपादयोः ॥
षडशीतिमुखी चैव परतश्चेत्परेऽहनि ॥ २० ॥

कर्क मकरकी संक्रांतिका यह पुण्यकाल जानना । पूर्वोक्त विष्णुपदा नामक संक्रांति षडशीतिमुखी नामवाली संक्रांति आधीरातसे पहिले दिन पुण्यकाल और आधीरात पीछे अर्के तो पिछले दिन पुण्यकाल जानना ॥ २० ॥

पश्चात्पराहः संक्रांतिः षडशीतिर्विपर्ययात् ॥
यादृशेनेंदुना भानोः संक्रांतिस्तादृशं फलम् ॥ २१ ॥
नरः प्राप्नोति तद्राशौ शीतांशोः साध्वसाधु वा ॥
संक्रांतिग्रहणर्क्षे वा पूर्वभाद्गणनाक्रमः ॥ २२ ॥
रवेरयनसंक्रांतिस्तदा तद्राशिसंक्रमः ॥
संक्रांतिग्रहणर्क्षे वा जन्मभावधि गण्यताम् ॥ २३ ॥

और षडशीति नामवाली संक्रांतिका पुण्यकाल इन विष्णुपदा नामवाली संक्रांतियोंसे विपर्यय जानना जैसा चन्द्रमामें संक्रांति अर्के तो वैसाही फल होताहै, संक्रांति अर्कके दिन जिस मनुष्यको अच्छा चन्द्रमा हो उसको श्रेष्ठ फल होता है। संक्रांति अर्के उस दिनसे पहले दिनके नक्षत्रसे गिननेका क्रम होता है। सूर्यके अयनकी संक्रांति वा अन्य राशिकी संक्रांति जिस दिन अर्के उसी दिनके नक्षत्रसे भी जन्मके नक्षत्रतक गिना जाता है अब इन दोनोंका फल कहते हैं ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥

नेष्टं त्रयं षट् च शुभं पर्यायाच्च पुनः पुनः ॥
हानिर्वृद्धिः स्थानहानिस्तत्प्राप्तिर्भानुतः क्रमात् ॥ २४ ॥

पहिले तीन नक्षत्र शुभ नहीं हैं फिर छह नक्षत्र शुभदायक ह, पीछे ३ नक्षत्र हानिकारक, फिर ६ वृद्धि, फिर ३ स्थानहानि, फिर ३ नक्षत्र स्थानप्राप्ति करते हैं ऐसे सूर्यसंक्रांति चन्द्रनक्षत्रसे विचारी जाती है ॥ २४ ॥

तिलोपरि लिखेच्चक्रं त्रिशूलं च त्रिकोणकम् ॥
तत्र हैमं विनिक्षिप्य दद्यात्तद्दोषशांतये ॥ २५ ॥

जो अशुभदायक संक्रांति हो तो उस दोषकी शांतिके वास्ते तिलके ऊपर चक्र लिख त्रिकोण त्रिशूल लिखकर तिसपर सुवर्ण रखकर तिसका दान करे ॥ २५ ॥

तारावलेन शीतांशुर्बलवांस्तद्वशाद्रविः ॥
ससंक्रमणतस्तद्वशात्खेटबलाधिकः ॥ २६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहि० संक्रांतिलक्षणाध्याय एकादशः ॥ ११ ॥

ताराके बलसे चन्द्रमा बलवान् है और चन्द्रमाके बलसे सूर्य बलवान् होता है और वह सूर्य संक्रांतिके बलसे अन्यग्रहोंका बल पाकर बलवान् है ॥ २६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां संक्रांतिलक्षणाध्याय एकादशः ॥ ११ ॥

अथ गोचराध्यायः ।

शुभोऽर्को जन्मतस्त्र्यायदशषट्सु न विध्यते ॥
जन्मतो नवपंचांबुव्ययगैर्व्यर्किभिस्तदा ॥ १ ॥

जन्मराशिसे ३ । ११ । १० । ६ इन स्थानोंपर सूर्य हो तो शुभ है, परन्तु जन्मराशिसे ९ । ५ । ४ । १२ इन स्थानोंमें कोई ग्रह नहीं हो तो वेध नहीं होता अर्थात् ३ सूर्य शुभ है परन्तु ९ स्थानमें अन्य कोई ग्रह होय तो वेध होजाता है । ११ शुभ है परन्तु ५ में कोई ग्रह नहीं होना चाहिये । १० सूर्य हो तब ४ स्थान और ६ सूर्य हो तब जन्मराशिसे १२ स्थानमें कोई ग्रह नहीं होना चाहिये । यदि इन स्थानोंपर शनि विना कोई ग्रह होवेगा तो सूर्यवेध होजायगा फिर शुभफल नहीं रहेगा, ऐसे इन वेधके सबही स्थानोंका यथाक्रम लगा लेना । इसी प्रकार चंद्र आदि ग्रहोंको भी कहते हैं ॥ १ ॥

विध्यते जन्मतो नेंदुर्द्युनाद्यायारिखत्रिषु ॥
खेष्वष्टांत्यांबुधर्मस्थैर्विबुधैर्जन्मतः शुभः ॥ २ ॥

जन्म राशिसे ७ । १ । ११ । ६ । १० । ३ इन स्थानोंपर चंद्रमा वेध नहीं करता है याने शुभ है परन्तु जन्मराशिसे २ । ५ । ८ । १२ । ४ । ९ इन स्थानोंपर बुध विना अन्य कोई ग्रह नहीं होना चाहिये । बुध चंद्रमाका पुत्र है इसलिये वेध नहीं करता है इन वेधके स्थानोंका परस्पर यथाक्रम देखलेना चाहिये ॥ २ ॥

त्र्यायारिषु कुजः श्रेष्ठो जन्मराशेर्न विध्यते ॥
व्ययेष्वर्कग्रहे सौरिरप्यसूर्येण जन्मतः ॥ ३ ॥

और ३ । ११ । ६ । इन स्थानोंपर मंगल श्रेष्ठ है वेध नहीं करता है परन्तु १२ । ५ । ९ इन स्थानोंपर कोई ग्रह नहीं होना चाहिये और मंगलके ही समान शनिका फल जानना परंतु शनिके उक्तस्थानोंमें सूर्य वेध नहीं करता है ॥ ३ ॥

ज्ञोद्व्यब्धर्यष्टखायेषु जन्मतश्च न विध्यते ॥
धीत्र्यंकधाष्टांत्यखैटैर्जन्मतो व्यब्जकैः शुभः ॥ ४ ॥

जन्मराशिसे २ । ४ । ६ । ८ । १० । ११ इन स्थानोंपर बुध शुभ है वेधित नहीं है परन्तु ५ । ३ । ९ । १ । ८ । १२ । इन स्थानोंपर चंद्रमा बिन अन्य कोई ग्रह नहीं होना चाहिये ॥ ४ ॥

जन्मतः स्वायगोक्षास्तेष्वंत्याष्टायजलत्रिगैः ॥
जन्मराशेर्गुरुः श्रेष्ठो ग्रहैर्यदि न विध्यते ॥ ५ ॥

जन्मराशिसे २ । ११ । ९ । ५ । ७ इन स्थानोंपर बृहस्पति श्रेष्ठ है परंतु जन्मराशिसेही १२ । ८ । ११ । ४ । ३ इन स्थानोंपर कोई ग्रह नहीं होना चाहिये ॥ ५ ॥

कुद्व्यग्न्यब्धिसुताष्टांकांत्याये शुक्रो न विध्यते ॥
जन्मभाग्मृत्युसप्ताद्यखांकेष्वायारिपुत्रगैः ॥ ६ ॥

और जन्मराशिसे १ । २ । ३ । ४ । ५ । ८ । ९ । १२ । ११ इन स्थानोंपर शुक्र वेधित नहीं है अर्थात् शुभ है परंतु जन्मराशिसे ८ । ७ । १ । १० । ९ । ५ । ११ । ६ । ५ स्थानोंपर कोई ग्रह नहीं होना चाहिये अर्थात् १ के शुक्रको ८ और २ को ७ । ३ को १ ऐसे सब स्थानोंका यथाक्रम वेध समझना चाहिये ॥ ६ ॥

न ददाति शुभं किंचिद्गोचरे वेधसंयुते ॥
तस्माद्वेधं विचार्याथ कथ्यते तच्छुभाशुभम् ॥ ७ ॥

वेधसे युक्त हुआ ग्रह कुछ भी शुभ फल नहीं देता इसलिये ग्रहका वेध विचारके शुभ अशुभ फल कहना चाहिये ॥ ७ ॥

वामवेधविधानेनाप्यशुभोऽपि ग्रहो शुभः ॥
अतस्तान्विविधान्वेधान्विचार्याथ वदेत्फलम् ॥ ८ ॥

और वामवेधके विधानसे अशुभ ग्रह भी शुभदायक होजाता है अर्थात् जैसे १२ सूर्य अशुभ है तहां जन्मराशिसे छठे स्थानमें स्थित हुए ग्रहोंकरके

वेधको प्राप्त होजाय तो शुभ है इसी प्रकार विपरीततासे वेध होनेको वाम वेध कहते हैं, इसलिये तिन अनेक प्रकारके वेधोंको विचार कर फल कहना चाहिये ॥ ८ ॥

अज्ञात्वा विविधान्वेधान्यो ग्रहज्ञो फलं वदेत् ॥
स मृषावचनाभाषी हास्यं याति नरः सदा ॥ ९ ॥

जो ज्योतिषी अनेकप्रकारके वेधोंको जाने विना फल कहता है वह झूठा वचन कहनेवाला हास्यको प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

सौम्येक्षितो नेष्टफलः शुभदो पापवीक्षितः ॥
निष्फलौ तौ ग्रहौ स्वेन शत्रुणा च विलोकितः ॥ १० ॥

अशुभदायक ग्रह भी शुभग्रहोंकरके देखागया हो तो शुभफल करता है और शुभदायक ग्रह पापग्रहोंसे दृष्ट हो तथा शत्रुग्रहसे देखागया हो तो ये दोनोंही ग्रह निष्फल कहे हैं ॥ १० ॥

नीचराशिगतः स्वस्य शत्रुक्षेत्रगतोपि वा ॥
शुभाशुभफलं नैव दद्यादस्तमितोऽपि वा ॥ ११ ॥

नीचराशिपर स्थित हुआ अथवा अपने शत्रुके घरमें प्राप्त हुआ तथा अस्त- हुआ ग्रह कुछ भी शुभ अशुभ फल नहीं देता है ॥ ११ ॥

ग्रहेषु विषमस्थेषु शांतिं यत्नात्समाचरेत् ॥
हानिर्वृद्धिर्ग्रहाधीना तस्मात्पूज्यतमा ग्रहाः ॥ १२ ॥

विषम कहिये अशुभस्थानमें ग्रह स्थित होवे तो यत्नसे उन्होंकी शांति करानी चाहिये । हानि तथा वृद्धि ग्रहोंके अधीन है इसलिये ग्रह सदा पूजने चाहियें ॥ १२ ॥

मणिमुक्ताफलं विद्रुमाख्यं गारुत्मकाह्वयम् ॥
पुष्परागं त्वथो वज्रं नीलगोमेदसंज्ञकम् ॥
वैडूर्यं भास्करादीनां तुष्ट्यै धार्यं यथाक्रमम् ॥ १३ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां गोचराध्यायो द्वादशः ॥१२॥

माणिक्य, मोती, मूंगा, गारुत्मक (हरीजातका रत्न) पुषराज, हीरा, नीलमणि (लहसुनियां), गोमेद, वैडूर्य ये रत्न यथाक्रमसे धारण करनेसे सूर्य आदि ग्रहोंकी प्रसन्नता होती है ॥ १३ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां गोचराध्यायो द्वादशः ॥१२॥

शुक्लपक्षादिदिवसे चन्द्रो यस्य शुभप्रदः ॥
स पक्षस्तस्य शुभदः कृष्णपक्षोऽन्यथा शुभः ॥ १ ॥

शुक्लपक्षादिदिनोंमें जिसके चन्द्रमा बलवान् होता है वह पक्ष उसको शुभदायक होता है और कृष्णपक्ष अन्यथा शुभ है अर्थात् कृष्णपक्षमें तारा-बल देखना शुभ है ॥ १ ॥

शुक्लपक्षे शुभश्चन्द्रो द्वितीयनवपंचके ॥
रिपुमृत्यंबुसंस्थश्च न विद्धो गगनेचरैः ॥ २ ॥

शुक्लपक्षमें दूसरा नवमां पांचवाँ चन्द्रमा शुभ है परन्तु छठे आठवें चौथे कोई ग्रह नहीं होना चाहिये अर्थात् जन्मराशिसे इन स्थानोंमें बुध विना कोई ग्रह होय तो चन्द्रमाका वेध हो जाता है ॥ २ ॥

अथ ताराः ।

जन्मसंपद्विपत्क्षेमप्रत्यरिस्साधको वधः ॥
मित्रं परममित्रं च जन्मभाच्च पुनः पुनः ॥ ३ ॥

जन्म १ सम्पत् २ विपत् ३ क्षेम ४ प्रत्यरि ५ साधक ६ वध ७ मित्र ८ परममित्र ९ ये नव तारे कहे हैं। तहां यथाक्रमसे जन्मके नक्षत्रसे गिनलेने चाहियें ९ से अधिक होंय तो ९ का भाग देना ॥ ३ ॥

जन्मत्रिपंचसप्ताख्या तारा नेष्टफलप्रदाः ॥
अनिष्टपरिहाराय दद्यादेतद्द्विजातये ॥ ४ ॥

जहां जन्म, तीसरा, पांचवां, सातवां ये तारा शुभ नहीं हैं अशुभ ताराकी शान्तिके वास्ते यह आगे कहे हुए दान ब्राह्मणके वास्ते देना चाहिये४

शाकं गुडं च लवणं सतिलं कांचनं क्रमात् ॥
कृष्णे बलवती तारा शुक्लपक्षे बली शशी ॥ ५ ॥

शाक, गुड, लवण, तिल, सुवर्ण ये यथाक्रमसे देने योग्य हैं, कृष्णपक्षमें तारा बलवान् होता है और शुक्लपक्षमें चन्द्रमा बलवान् होता है ॥ ५ ॥

चन्द्रस्य द्वादशावस्था दिवा रात्रौ यथाक्रमात् ॥
यत्रोद्वाहादिकार्येषु संज्ञा तुल्यफलप्रदा ॥ ६ ॥

दिनरात्रिमें यथाक्रमसे चन्द्रमाकी बारह अवस्था कही हैं तहां विवाह-आदि कार्योंमें संज्ञाके तुल्य फल जानना ॥ ६ ॥

षष्टिघ्नं चन्द्रनक्षत्रं तत्कालघटिकान्वितम् ॥
वेदघ्नमिषुवेदाप्तमवस्थाभानुभाजिताः ॥ ७ ॥

अश्विनीआदि गत नक्षत्रोंको साठसे गुनाकर लेवे फिर वर्त्तमान नक्षत्रकी घटी मिलादेवे फिर उनको चारगुना करके तिसमें पैंतालीस ४५ का भाग देना तहां १२ से ज्यादे बचें तो बारहका भाग देना ॥ ७ ॥

प्रवासनष्टारुयमृता जया हास्यारतिर्मुदा ॥
सुप्तिर्भुक्तिज्वराकंपसुस्थितिर्नामसंनिभाः ॥ ८ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां चंद्रबलाध्यायस्त्रयोदशः ॥ १३ ॥

फिर प्रवास १ नष्ट २ मरण ३ जया ४ हास्या ५ रति ६ मुदा ७ सुप्ति ८ भुक्ति ९ ज्वर १० कंप ११ सुस्थिति १२ ये बारह अवस्था नामके सदृश फल-दायक जानने । तहां मेषराशिवाले पुरुषको प्रवासआदि संज्ञा, वृषराशिवालेको नष्टआदि संज्ञा और मिथुनराशिवालेको मरणादि ऐसे गिनना चाहिये ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां चंद्रबलाध्यायस्त्रयोदशः ॥ १३ ॥

अथ लग्नफलम् ।

पट्टबंधनयानोग्रसंधिविग्रहभूषणम् ॥
धात्वाकराहवं कर्म मेषलग्ने प्रसिध्यति ॥ १ ॥ इति मेषलग्नम् ॥

पट्टाबंधन, सवारी, उग्रसंधि (मिलाप), विग्रह, आभूषण, धातु, खजाना, युद्ध ये कर्म मेषलग्नमें सिद्ध होते हैं ॥ १ ॥ इति मेषलग्न ॥

मंगलानि स्थिराण्येव वेश्मकर्मप्रवर्तनम् ॥
कृषिवाणिज्यपश्वादि वृषलग्ने प्रसिध्यति ॥ २ ॥ वृ० ल०

मंगल, स्थिरकाम, घरप्रवेश आदि कर्म, खेती, वाणिज्य, पशु आदि कर्म ये वृषलग्नमें सिद्ध होते हैं ॥ २ ॥ इति वृषलग्न ॥

कलाविज्ञानसिद्धिश्च भूषणाहवसंश्रयम् ॥
गजोद्वाहाभिषेकाद्यं कर्तव्यं मिथुनोदये ॥ ३ ॥ मि० ल०

कला, विज्ञान, सिद्धि, आभूषण, युद्ध, आश्रय होना, हाथी लेना देना, विवाह, अभिषेक इत्यादि कर्म मिथुनलग्नमें करने चाहिये ॥ ३ ॥ इति मिथुनलग्न ॥

वापीकूपतडागादिवारिबन्धनमोक्षणे ॥
पौष्टिकं लिपिलेखादि कर्तव्यं कर्कटोदये ॥ ४ ॥ कर्क० ल०

बावड़ी, कुवा, तालाब, पुल बांधना, नहर चलाना, पुष्टिके काम, लेखक कर्म, लेखाहिसाब ये कर्म कर्कलग्नमें करने शुभ हैं ॥ ४ ॥ इति कर्कलग्न ॥

इक्षुधान्यवणिक्पण्यकृषिसेवादि यत्स्थिरम् ॥
साहसावहभूपाद्यं सिंहलग्ने प्रसिध्यति ॥ ५ ॥ सि० ल०

ईख, धान्य, वाणिज्य, दूकान, खेती, सेवा आदि स्थिर काम, साहस (बलहठका) काम, युद्ध, राजकार्य ये काम सिंहलग्नमें करने शुभ हैं ॥ ॥ ५ ॥ इति सिंहलग्न ॥

विद्याशिल्पौषधीकर्म भूषणं च चरं स्थिरम् ॥
कन्यालग्नविधेयं तत् पौष्टिकाखिलमंगलम् ॥ ६ ॥ क० ल०

विद्या, शिल्प, औषध, आभूषण, चर स्थिर काम, पौष्टिक तथा मांगलिक कर्म कन्यालग्नमें करने चाहिये ॥ ६ ॥ इति कन्यालग्न ॥

कृषिवाणिज्ययानाश्च पशूद्वाहव्रतादिकम् ॥
तुलायामखिलं कर्म तुलाभांडाश्रितं च यत् ॥ ७ ॥ तु० ल०

खेती, वाणिज्य, सवारी, पशु, विवाह, व्रतादिक, बरतन, तखडी बाट इत्यादि कर्म तुलालग्नमें करने चाहिये ॥ ७ ॥ इति तुलाल०

स्थिरकर्माखिलं कार्यं राजसेवाभिषेचनम् ॥
चौर्यकर्म स्थिरारंभाः कर्तव्या वृश्चिकोदये ॥ ८ ॥ वृ० ल०

संपूर्ण स्थिर काम, राजसेवा, अभिषेक, चोरीके काम, स्थिरकार्य प्रारंभ ये कार्य वृश्चिकलग्नमें करने चाहिये ॥ ८ ॥ इति वृश्चिकलग्न ॥

व्रतोद्वाहप्रयाणश्च ह्यंगाशिल्पकलादिकम् ॥
चरं स्थिरं सशस्त्रास्त्रं कर्त्तव्यं कार्मुकोदये ॥ ९ ॥ ध० ल०

व्रत नियम लेना, विवाह, तीर्थादिकपर मरना, अंग, शिल्प, कलाचार, स्थिरकार्य, शस्त्र, अस्त्र ये काम धनुर्लग्नमें करने चाहिये ॥ ९ ॥ इति धनलग्न ॥

तोयबंधनमोक्षास्त्रकृष्यं चोष्ट्रादिकर्म यत् ॥
प्रस्थानं पशु दासादि कर्तव्यं मकरोदये ॥ १० ॥ म० ल०

पुल बांधना, नहर चलाना, शस्त्रकर्म, खेती, ऊंट आदि पशुके कार्य, गमन, पशुकर्म, दासादिकर्म ये सब मकरलग्नमें करने चाहिये ॥ १० ॥ इति मकरलग्न० ॥

कृषिवाणिज्यपश्वंबु शिल्पकर्म कलादिकम् ॥
जलयात्रास्त्रशस्त्रादि कर्तव्यं कलशोदये ॥ ११ ॥ कुं० ल०

खेती, वाणिज्य, पशु, जलकर्म, शिल्पकर्म, कलादिकर्म, जलमें यात्रा, अस्त्र शस्त्र कर्म ये सब कुंभलग्नमें करने चाहिये ॥ ११ ॥ इति कुंभल० ॥

व्रतोद्वाहाभिषेकांबुस्थापनं सन्निवेशनम् ॥
भूषणं जलपात्रं च कर्म मीनोदये शुभम् ॥ १२ ॥ मी० ल०

व्रत, विवाह, अभिषेक,जलस्थापन, प्रवेशकर्म, आभूषण, जलपात्र ये कर्म मीनलग्नमें करने शुभ हैं ॥ १२ ॥ इति मीनलग्न ॥

गोयुग्मकर्ककन्यांत्यतुलाचापधराः शुभाः ॥
शुभग्रहास्पदत्वात्स्युरितरे पापराशयः ॥ १३ ॥

और वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, मीन, तुला, धनुष ये लग्न शुभदायक हैं, क्योंकि ये शुभग्रहोंके स्थान हैं और अन्य लग्न पापग्रहोंकी राशि हैं ॥१३॥

क्षीणेंद्वर्कार्किभूपुत्राः पापाः स्युः संयुतो बुधः ॥
पूर्णचंद्रबुधाचार्यशुक्रास्ते स्युः शुभग्रहाः ॥ १४ ॥

क्षीणचन्द्रमा, सूर्य, शनि, मंगल ये पापग्रह हैं और इनके साथ होनेसे बुध भी अशुभ है और पूर्ण चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र ये शुभ ग्रह हैं ॥ १४ ॥

सौम्योग्र तेषां राशीनां प्रकृत्येव फलं भवेत् ॥
योगेन सौम्यपापैश्च खचरैर्वीक्षितेन वा ॥ १५ ॥

तिन राशियोंका योग होनेसे शुभ अशुभ फल स्वभावसे ही हो जाता है और शुभ अशुभ ग्रहोंकी दृष्टि होनेसे भी शुभाऽशुभ फल होता है ॥ १५ ॥

सौम्याश्रितत्वात्क्रूरो वा स राशिः शोभनः स्मृतः ॥
सौम्योपि राशिः क्रूरः स्यात्क्रूरग्रहयुतो यदि ॥ १६ ॥

जिसपर शुभ ग्रह स्थित होय वह क्रूरराशि होय तो भी शुभदायक जाननी और क्रूरग्रहसे युक्त होय तो शुभराशि भी क्रूर जाननी ॥ १६ ॥

ग्रहयोगावलोकाभ्यां शशी धत्ते ग्रहोद्भवम् ॥
फलं ताभ्यां विहीनोसौ स्वं भावमुपसर्पति ॥ १७ ॥

ग्रहका योग तथा दृष्टिकरके चन्द्रमा उस ग्रहके शुभ अशुभ फलको धारण करता है और उन दोनोंसे हीन होय तब चन्द्रमा केवल अपना ही फल करता है ॥ १७ ॥

आदौ संपूर्णफलदं मध्ये मध्यफलप्रदम् ॥
अन्ते तुच्छफलं लग्नं सर्वस्मिन्नेवमेव हि ॥ १८ ॥

लग्न आदिमें संपूर्ण फल करता है, मध्यमें मध्यफल और अंतमें लग्न बहुत थोड़ा फल करता है ॥ १८ ॥

सर्वत्र प्रथमं लग्नं कर्तुश्चंद्रबलं ततः ॥
कन्यान्य इंदौ बलिनि संत्यन्ये बलिनो ग्रहाः ॥ १९ ॥

सब जगह पहले लग्नबल देखना फिर कर्त्ताको चन्द्रबल देखना, कन्याके विना अन्यराशिका चन्द्रमा बलवान् होय तो सभी ग्रह बलवान जानने १९॥

चंद्रस्य बलमाधारआधेयं चान्यखेटजम् ॥
आधारभूतेनाधेयं दीयते परिनिष्ठितम् ॥ २० ॥

चन्द्रमाका बल आधार है और अन्य ग्रहका बल आधेय है अर्थात् चन्द्रमाके बलके आश्रय है, आधाररूप चन्द्रबलसे आधेय की रक्षा की जाती है ॥ २० ॥

स चेंदुः शुभदः सर्वग्रहाः शुभफलप्रदाः ॥
अशुभश्चेदशुभदो वर्जयित्वा दिनाधिपम् ॥ २१ ॥

चन्द्रमा शुभदायक हो तो सब ग्रह शुभ फलदायक जानने और अशुभ हो तो अशुभही, परंतु सूर्यकी यह व्यवस्था नहीं है ॥ २१ ॥

लग्ने ह्यभ्युदयो येषां तेष्वंशेषु स्थिता ग्रहाः ॥
लग्नोद्भवं फलं धत्ते चैवमेवं प्रकल्पयेत् ॥ २२ ॥

जिन ग्रहोंका लग्नोंमें शुभ फल है वे ग्रह उन लग्नोंके नवांशकमें भी लग्नके अनुसार शुभ फल देते हैं ऐसे जानना ॥ २२ ॥

लग्नं सर्वगुणोपेतं लभ्यते यदि तेन हि ॥
दोषाल्पत्वं गुणाधिक्यं बहुसंततमिष्यते ॥ २३ ॥

जो सबगुणोंसे संयुक्त लग्न मिलजाय तो दोषका योग थोड़ा रहता है और गुण (शुभ) बहुत विस्तृत होता है ॥ २३ ॥

दोषदुष्टोहि कालः स परिहार्यः पितामह ॥
अथ शक्त्या गुणाधिक्यं दोषाल्पत्वं ततो हितम् ॥ २४ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां सर्वलग्नाध्यायश्चतुर्दशः ॥ १४ ॥

दोषसे दुष्ट हुआ वह काल सबसे बड़ा है इस लिये त्याग देना चाहिये और जो शक्ति करके लग्नमें अधिक गुण होय तो अन्य दोष थोड़े रहते हैं ॥ २४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां सर्वलग्नाध्यायश्चतुर्दशः ॥ १४ ॥

अथ रजस्वलाविचारः ।

अमारिक्ताष्टमीषष्ठीद्वादशीप्रतिपत्स्वपि ॥
परिघस्य तु पूर्वार्धे व्यतीपाते च वैधृतौ ॥ १ ॥
संध्यासूपप्लवे विष्टयामशुभं प्रथमार्तवम् ॥
रुग्णा पतिव्रता दुःखी पुत्रिणी भोगभागिनी ॥
पतिप्रिया क्लेशयुक्ता सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥ २ ॥

अमावस्या, रिक्ता, अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी, प्रतिपदा ये तिथि, परिघयोगका पूर्वार्ध, व्यतीपात, वैधृति, सायंकाल, दिग्दाह, भद्रा ऐसे समयमें प्रथम रजस्वला होय तो अशुभ फल जानना और रविवार आदि जिस वारमें पहिले रजस्वला होय उसका फल यथाक्रमसे ऐसे जानना कि रोगवाली १ पतिव्रता २ दुःखिनी ३ पुत्रिणी ४ भोगभोगिनी ५ पतिप्रिया ६ क्लेशसे संयुक्त ७ ऐसे ये फल सूर्यादिवारोंके जानने ॥ १ ॥ २ ॥

श्रीयुक्ता सुभगा पुत्रवती सौख्यान्विता स्थिरा ॥
मानी कुलाधिका नारी चाश्विन्यां प्रथमार्तवा ॥ ३ ॥

अश्विनी नक्षत्रमें प्रथम रजस्वला होय तो श्रीयुक्ता,सुभगा,पुत्रवती सौख्यसे युक्त, स्थिर, मानवाली कुलमें अधिक पूज्य होती है॥ ३ ॥

दुःशीला स्वैरिणी वंध्या गर्भपातनतत्परा ॥
परप्रेष्या काकवंध्या भरण्यां प्रथमार्तवा ॥ ४ ॥

और दुष्टस्वभाववाली, व्यभिचारिणी, वंध्या, गर्भपात करनेमें तत्पर, दासी, काकवंध्या यह भरणी नक्षत्रमें प्रथम रजस्वलाके फल हैं ॥ ४ ॥

अन्यथा पुंश्चली वंध्या गर्भपातनतत्परा ॥
वेश्या मृतप्रजा चापि वह्निभे प्रथमार्तवा ॥ ५ ॥

व्यभिचारिणी, वंध्या, गर्भपातमें तत्पर, वेश्या, मृतवत्सा यह फल कृत्तिका नक्षत्रमें जानना ॥ ५ ॥

सुशीला सुप्रजा चान्या पतिभक्ता दृढव्रता ॥
गृहार्चनरता नित्यं धातृभे प्रथमार्तवा ॥ ६ ॥

सुन्दरस्वभाववाली, सुन्दरसन्तानवाली, पतिमें भक्तिरखनेवाली, दृढनियमवाली, हमेशः गृहपूजनमें तत्पर यह फल रोहिणी नक्षत्रमें प्रथमरजस्वला हो तब जानना ॥ ६ ॥

गुणान्विता धर्मरता नारी सर्वसहा सती ॥
पतिप्रिया सुपुत्रा या चंद्रभे प्रथमार्तवा ॥ ७ ॥

गुणयुक्त, धर्ममें तत्पर, सब कुछ सहनेवाली, पतिव्रता, पतिसे प्यार रखनेवाली, अच्छे पुत्रोंवाली यह फल मृगशिर नक्षत्रमें प्रथम रजस्वला होवे तब होता है ॥ ७ ॥

कुलटा दुर्भगा दुष्टा मृतपुत्रा खला जडा ॥
दुष्टव्रतपरिभ्रष्टा रौद्रभे प्रथमार्तवा ॥ ८ ॥

व्यभिचारिणी, दुर्भगा, दुष्टा, मृतवत्सा, क्रूरा, मूर्खा, दुष्ट आचरणवाली, परिभ्रष्टा यह फल आर्द्रा नक्षत्रमें प्रथमरजस्वला होनेका है ॥ ८ ॥

पतिभक्ता पुत्रवती परसंतानमोदिनी ॥
कलाचारानुरक्ता या दितिभे प्रथमार्तवा ॥ ९ ॥

पतिमें भक्ति रखनेवाली, पुत्रवती, पराई सन्तानको भी आनन्द देनेवाली, सब कलाओंवाली, प्रियहितमें रहनेवाली यह फल पुनर्वसु नक्षत्रमें प्रथम रजस्वला होनेका है ॥ ९ ॥

पतिप्रिया पुत्रवती मानभोगवती शुभा ॥
सुकर्मनिरता दक्षा तिष्यर्क्षे प्रथमार्तवा ॥ १० ॥

पतिसे प्यार रखनेवाली, पुत्रवती, मान भोगवाली, शुभसुन्दर कर्ममें तत्पर रहनेवाली, चतुर यह फल पुष्य नक्षत्रमें प्रथम रजस्वला होनेका है १०

परभर्तृरता प्रेष्या कोपिनी निर्घृणालसा ॥
मृषावादी च दुष्पुत्रा भौजंगे प्रथमार्तवा ॥ ११ ॥

जो स्त्री पहली बार आश्लेषा नक्षत्रमें रजस्वला होय वह परपुरुषसे रमण करनेवाली, दासी, क्रोधवाली, दयारहित, आलस्यसहित, झूठ बोलनेवाली, दुष्ट सन्तानवाली होती है ॥ ११ ॥

निर्द्वेष्या रोगसंयुक्ता सर्वदाज्ञा च लोलुपा ॥
पितृवेश्मरता मान्या पैतृभे प्रथमार्तवा ॥ १२ ॥

वैररहित, रोगवाली, सदा अज्ञानवाली, लोभसे संयुक्त, पिताके घरमें मोहरखनेवाली, मानवती यह फल मघा नक्षत्रमें प्रथम रजस्वला होनेका है १२

परकार्यरता दीना दुष्पुत्रा क्लेशभागिनी ॥
मालिनी कर्कशा क्रुद्धा भाग्यभे प्रथमार्तवा ॥ १३ ॥

पराये काममें रत, दीन, दुष्टपुत्रोंवाली, क्लेशभागिनी, मलिन, कर्कशा, क्रोधवाली, यह फल पूर्वाफाल्गुनीमें प्रथम रजस्वला होनेका है ॥ १३ ॥

प्रजावती धर्मरता निर्वैरा मित्रपूजिता ॥
सती मित्रगृहे सक्तार्यमर्क्षे तु रजस्वला ॥ १४ ॥

सन्तानवाली, धर्ममें तत्पर, वैररहित, सम्बन्धीमित्रजनोंसे पूजित, पतिव्रता, प्यार हितवालेके घरमें आसक्त यह फल प्रथम उत्तराफाल्गुनीमें रजस्वला होनेका है ॥ १४ ॥

निर्द्वेष्या भूरिविभवा पुत्राढ्या भोगभोगिनी ॥
प्रधाना दानकुशला हस्तर्क्षे प्रथमार्तवा ॥ १५ ॥

वैररहित, बहुत ऐश्वर्यवाली, पुत्रोंवाली, भोगोंको भोगनेवाली, मुख्य, दानकरनेमें निपुण, ऐसी स्त्री प्रथम हस्तनक्षत्रमें रजस्वला होनेवाली होती है १५

चित्रकर्मा भोगिनी च कुशला क्रयविक्रये ॥
विकीर्णकामा सुश्लक्ष्णा त्वाष्ट्रभे प्रथमार्तवा ॥ १६ ॥

विचित्र काम करनेवाली, भोग भोगनेवाली, खरीदने बेचनेके व्यवहारमें चतुर, विस्तृत कामवाली, सुन्दर, चतुर ऐसी स्त्री चित्रा नक्षत्रमें प्रथम रजस्वला होनेसे होती है ॥ १६ ॥

बहुवित्तवती न स्यात्कुशला शिल्पकर्मणि ॥
पुत्रपौत्रवती साध्वी वायुभे प्रथमार्तवा ॥ १७ ॥

स्वाति नक्षत्रमें प्रथम रजस्वला होय तो बहुत धनवाली नहीं हो और शिल्पकर्ममें चतुर, पुत्र पौत्रोंवाली तथा पतिव्रता होती है ॥ १७ ॥

नीचकर्मरता दुष्टा परसक्ता परप्रिया ॥
विपुत्रा मलिना क्रूद्धा द्विदैवे प्रथमार्तवा ॥ १८ ॥

नीचकर्ममें रत, दुष्टा, परसक्ता, परप्रिया, पुत्ररहित, मलिनी, क्रोधिनी ऐसी विशाखा नक्षत्रमें जाननी ॥ १८ ॥

स्वामिपक्षार्चिता सौख्यगुणैः सम्यग्विभूषिता ॥
सुपुत्रा शुभदा कांता मित्रर्क्षे प्रथमार्तवा ॥ १९ ॥

पतिके कुलसे पूजित, सुखदायक, गुणोंकरके, विभूषित, सुन्दर पुत्र पतिवाली यह अनुराधा नक्षत्रका फल जानना ॥ १९ ॥

दुश्चरित्ररता क्लेशिन्यार्तवा पुंश्चली व्यसुः ॥
दुःसंतानवती ज्येष्ठा नक्षत्रे प्रथमार्तवा ॥ २० ॥

दुष्ट चरित्रमें रत, दुःखी, पैराकी बीमारीवाली, व्यभिचारिणी, बलरहित, दुष्ट सन्तानवाली, ऐसी स्त्री प्रथम ज्येष्ठा नक्षत्रमें रजस्वला होनेसे होती है२०

संतानार्थगुणैरन्यैर्युक्तान्यक्लेशमोचिनी ॥
स्वकर्मनिरता नित्यं मूलभे प्रथमार्त्तवा ॥ २१ ॥

सन्तान धन गुणसे युक्त तथा अन्य गुणोंसे युक्त, और अन्यजनोंके दुःखको दूर करनेवाली, अपने कर्ममें तत्पर, यह मूलनक्षत्रका फल जानना२१

प्रच्छन्नपापा दुष्पुत्रा प्राणिहिंसनतत्परा ॥
अजस्रव्यसनासक्ता तोयभे प्रथमार्तवा ॥ २२ ॥

गुप्त पाप करनेवाली, दुष्ट सन्तानवाली, प्राणियोंकी हिंसा करनेवाली, निरन्तर व्यसनमें आसक्त, ऐसी स्त्री पूर्वाषाढमें प्रथम रजस्वला होनेसे होती है ॥ २२ ॥

कार्याकार्येषु कुशला सदा धर्मानुवर्तिनी ॥
गुणाश्रया भोगवती विश्वभे प्रथमार्तवा ॥ २३ ॥

कार्य अकार्यमें निपुण, सदा धर्ममें रहनेवाली, गुणोंकी खानि, भोगवती यह उत्तराषाढका फल है ॥ २३ ॥

धनधान्यवती भोगपुत्रपौत्रसमन्विता ॥
कुलानुमोदिनी मान्या विष्णुभे प्रथमार्तवा ॥ २४ ॥

धन धान्यवती, भोग पुत्र पौत्र इन्होंके सुखवाली, कुलको प्रसन्न रखनेवाली, मान्य यह फल श्रवण नक्षत्रका है ॥ २४ ॥

पुत्रपौत्रान्विता भोगधनधान्यवती सती ॥
स्वकर्मनिरता मान्या वसुभे प्रथमार्तवा ॥ २५ ॥

पुत्र पौत्रोंवाली, भोग धन धान्यवाली, अपने कार्यमें निपुण, मान्य यह फल धनिष्ठा नक्षत्रका है ॥ २५ ॥

बहुपुत्रा धनवती स्वकर्मनिरता सती ॥
कुलानुमोदिनी मान्या वारुणे प्रथमार्तवा ॥ २६ ॥

बहुत पुत्रोंवाली, धनवती, अपने काममें निपुण, पतिव्रता, कुलको प्रसन्न करनेवाली, मान्य यह फल प्रथम शतभिषा नक्षत्रमें रजस्वला होनेका है २६

बंधकी बंधुविद्वेष्या नित्यं दुष्टरता खला ॥
शिल्पकार्येषु कुशलाऽजांघ्रिभे प्रथमार्तवा ॥ २७ ॥

व्यभिचारिणी, बन्धुओंसे विद्वेष करनेवाली, हमेश दुष्टजनोंमें रत, दुष्टा, शिल्पकार्यमें निपुण यह फल पूर्वाभाद्रपदमें जानने ॥ २७ ॥

आढ्या पुत्रवती मान्या सुप्रसन्ना पतिप्रिया ॥
बंधुपूज्या धर्मवत्यहिर्बुध्न्ये प्रथमार्तवा ॥ २८ ॥

धनाढ्या, पुत्रवती, मान्या, सुन्दर, प्रसन्न, पतिसे प्यार रखनेवाली, बंधुओंसे पूज्या, धर्मवाली यह उत्तराभाद्रपदका फल है ॥ २८ ॥

दृढव्रता धर्मवती पुत्रसौख्यार्थसंयुता ॥
विशाखागुणसंपन्ना पौष्णभे प्रथमार्तवा ॥ २९ ॥

और जो स्त्री प्रथम रेवती नक्षत्रमें रजस्वला होवे वह दृढव्रतवाली, धर्मवती, पुत्र धन सुख इन्होंसे युक्त और विशाखा नक्षत्रमें कहेहुए गुणोंसे युक्त होती है ॥ २९ ॥

कुलीरवृषचापांत्यनृयुक्कन्यातुलाधराः ॥
राशयः शुभदा ज्ञेया नारीणां प्रथमार्तवे ॥ ३० ॥

स्त्रियोंके प्रथम रजस्वला होनेमें कर्क, वृष, धन, मीन, मिथुन, कन्या, तुला ये राशि अर्थात् लग्न शुभ कहे हैं ॥ ३० ॥

तिथ्यर्क्षवारनिंद्याश्चेत्सेककर्म न कारयेत् ॥
दोषाधिक्ये गुणाल्पत्वे तथापि न च कारयेत् ॥ ३१ ॥

जो तिथि वार नक्षत्र निंदित होवें और दोष अधिक तथा गुण अल्प होवें तो अभिषेक कर्म नहीं करना चाहिये ॥ ३१ ॥

दोषाल्पत्वे गुणाधिक्ये सेककर्म समापयेत् ॥
निंद्यर्क्षे तिथिवारेषु यत्र पुष्पं प्रदृश्यते ॥ ३२ ॥
तत्र शांतिः प्रकर्तव्या घृतदूर्वातिलाक्षतैः ॥
प्रत्येकमष्टशतं च गायत्र्या जुहुयात्ततः ॥ ३३ ॥

और दोष थोडे हों गुण अधिक होवें तब अभिषेक कर्म करना चाहिये । निंदित नक्षत्र और निंदित तिथि वार होवें तो घृत, दूब, तिल, अक्षत इन्हों करके अष्टोत्तरशत १०८ गायत्री मंत्रसे होम करे और पहिले जपकरवाके शांति करे ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

स्वर्णगोभूतिलान्दद्यात्सर्वदोषापनुत्तये ॥
भर्ता तस्यापि गमनं वर्जयेद्रक्तदर्शनात् ॥ ३४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां प्रथमार्तवाध्यायः पञ्चदशः ॥१५॥

सुवर्ण, गौ, भूमि, तिल इन्होंका दान करे तब सब दोष शांत होते हैं। रजस्वला होवे तब तिसके पतिने भी स्त्रीत्याग करना चाहिये ॥ ३४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां प्रथमार्त्तवाध्यायः पञ्चदशः ॥१५॥

रजोदर्शनतोऽस्पृष्टा नार्यो दिनचतुष्टयम् ॥
ततः शुद्धक्रियाश्चैताः सर्ववर्णेष्वयं विधिः ॥ १ ॥

रजस्वला होनेके बाद चार दिन स्त्री स्पर्श करने योग्य नहीं रहती है फिर शुद्ध होती है, सब वर्णोंमें यही विधि है ॥ १ ॥

ओजराश्यंशगे चन्द्रे लग्ने पुंग्रहवीक्षिते ॥
उपवीती युग्मतिथौ सुस्नातां कामयेत्स्त्रियम् ॥ २ ॥

चंद्रमा, मेष, मिथुन आदि विषमराशिके नवांशकमें स्थित हो और लग्न भी विषम राशिके नवांशकमें स्थित हो और पुरुष ग्रहोंकी दृष्टिसे युक्त हो तब युग्मतिथिविषे शुद्ध स्नान करचुकी हुई स्त्रीको सव्य हुआ पुरुष प्राप्त होवै॥२॥

पुत्रार्थी पुरुषं त्यक्त्वा पौष्णमूलाहिपैतृभम् ॥
युग्मभेषु शशांके च लग्नेऽस्त्रीग्रहवीक्षिते ॥ ३ ॥

और पुत्रकी इच्छावाली स्त्री रेवती, मूल, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रोंमं तथा युग्म राशिपर चंद्रमा होवे और लग्न स्त्रीग्रहोंकरके दृष्ट होय तब पति-संग त्याग देवे ॥ ३ ॥

अयुग्मे दिवसे भार्या कयनार्थी कामयेत्पतिः ॥
निर्बीजानामिमे योगाः सर्वदा निष्फलप्रदाः ॥ ४ ॥

और रजस्वलाके दिनसे विषम दिनोंमें स्त्रीको प्राप्त होवे तो कन्याजन्म हो, ये सब योग निर्बीज पुरुषोंके हैं, सदा निष्फल अर्थात् इनमें स्त्रीसंग करनेसे पुत्रकी संतान नहीं होसकती ॥ ४ ॥

पुंग्रहाः सूर्यभौमार्याः स्त्रीग्रहौ शशिभार्गवौ ॥
नपुंसकौ सौम्यसौरी शिरोमात्रं विधुंतुदः ॥ ५ ॥

इति श्रीनारदसंहितायामाधानाध्यायः षोडशः ॥ १६ ॥

सूर्य, मंगल, गुरु ये पुरुष ग्रह हैं । चंद्रमा शुक्र स्त्रीग्रह हैं । बुध, शनि, नपुंसक हैं, राहुका शिरमात्र नपुंसक है ॥ ५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायामाधानाध्यायः षोडशः ॥ १६ ॥

प्रसिद्धविषमे गर्भे तृतीये वाथ मासि च ॥
कुर्यात्पुंसवनं कर्म सीमंतं च यथा तथा ॥ १ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां पुंसवनाध्यायः सप्तदशः ॥ १७ ॥

गर्भसे विषम मासमें अथवा तीसरे महीनेमें पुंसवनकर्म तथा सीमंतकर्म करना चाहिये ॥ १ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां पुंसवनाध्यायः सप्तदशः ॥ १७ ॥

चतुर्थे मासि षष्ठे वाप्यष्टमे वा तदीश्वरे ॥
बलसंपन्नदंपत्योश्चंद्रताराबलान्विते ॥ १ ॥

चौथे महीनेमें, अथवा छठे महीनेमें, तथा आठवें महीनेमें अष्टम मासपति ग्रह बलयुक्त होय और स्त्रीपुरुषोंको चन्द्रताराका पूर्ण बल होय तब ॥१॥

अरिक्तापर्वदिवसे कुजजीवार्कवासरे ॥
तीक्ष्णमिश्रोग्रवर्जेषु पुंसंज्ञभांशके शशी ॥ २ ॥

रिक्ता, अमावस्या, पूर्णिमा, मंगल, बृहस्पति, रवि, तीक्ष्ण, मिश्र, उग्र इन संज्ञावाले नक्षत्र, इन सबको वर्जकर पुरुषसंज्ञक राशिके नवांशकपर चन्द्रमा स्थित होय ॥ २ ॥

शुद्धेऽष्टमे जन्मलग्नात्तयार्लग्ने नैधने ॥
शुभग्रहयुते दृष्टे पापखेटयुतेक्षिते ॥ ३ ॥

लग्नकी तथा अष्टमस्थानकी शुद्धि होवे, इन दोनों स्थानोंपर शुभग्रहोंकी दृष्टि हो और पापग्रहोंकी दृष्टि नहीं होवे ॥ ३ ॥

मासेऽष्टके चतुर्भिर्वा दृष्टेऽर्के बीजपूरकैः ॥
स्त्रीणां तु प्रथमे गर्भे सीमंतोन्नयनं शुभम् ॥ ४ ॥

आठवां महीना हो तथा बलवीर्यको पूरण करनेवाले चार ग्रहों करके सूर्य दृष्ट होवे तब स्त्रियोंका प्रथम गर्भविषे सीमंतकर्म करना शुभ है ॥ ४ ॥

शुभग्रहेषु धीधर्मकेंद्रेष्वरिभवे त्रिषु ॥
पापेषु सत्सु चंद्रेंत्यनिधनाद्यारिवर्जिते ॥ ५ ॥

शुभग्रह पांचवें, नवमें तथा केंद्रस्थानमें होवें और पापग्रह छठे, ग्यारहवें, तीसरे होवें तब और बारहवें, आठवें लग्नमें चन्द्रमा नहीं हो तब सीमंतकर्म करना चाहिये ॥ ५ ॥

क्रूरग्रहाणामेकोऽपि लग्नादंत्यात्मजाष्टगाः ॥
सीमंतिनीनां सद्गर्भं बली हंति न संशयः ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां सीमंतोन्नयनाध्यायोऽष्टादशः ॥ १८ ॥

और क्रूरग्रहोंके मध्यमें एक भी ग्रह लग्नसे बारहवें, पांचवें, आठवें स्थानमें होय तो स्त्रियोंके उत्तम गर्भको नष्ट करता है वह ग्रह बली है इसमें संदेह नहीं ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां सीमंतोन्ननयनाध्यायोऽष्टादशः॥१८॥

अथ जातकर्म ।

तस्मिञ्जन्ममुहूर्तेऽपि सूतकांतेऽपि वा शिशोः ॥
जातकर्म प्रकर्तव्यं पितृपूजनपूर्वकम् ॥ १ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां जातकर्माध्याय एकोनविंशतितमः ॥ १९ ॥

बालकका जन्म हो उसी घडी अथवा सूतकके अंतमें पितरोंका पूजन कर (नांदीमुखश्राद्ध कर) जातकर्म करना चाहिये ॥ १ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषा०जातकर्माध्याय एकोनविंशतितमः ॥१९॥

सूतकांते नामकर्म विधेयं स्वकुलोचितम् ॥
नामपूर्वं प्रशस्तं स्यान्मंगलैश्च शुभाक्षरैः ॥ १ ॥

सूतकके अंतमें अपने कुलके योग्य नामकर्म करना चाहिये और नामके आदिमें शुभमांगलीक अक्षर होवे वह नाम श्रेष्ठ कहा है ॥ १ ॥

देशकालोपयाताद्यैः कालातिक्रमणं यदि ॥
अनस्तगे भृगावीज्ये तत्कार्यं चोत्तरायणे ॥ २ ॥

देशकालकी व्यवस्थाके अतिक्रमणसे सूतकके अंतमें बारहवें दिन नामकरण नहीं हो सके तो गुरु शुक्रका अस्त नहीं हो और उत्तरायण सूर्य हो ॥ २ ॥

चरस्थिरमृदुक्षिप्रनक्षत्रे शुभवासरे ॥
चंद्रताराबलोपेते दिवसे च शिशोः पिता ॥ ३ ॥

चर, स्थिर, मृदु, क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्र हो, शुभ वार होवे और चन्द्रमा तथा ताराबलसे युक्त दिन हो तब बालकका पिता ॥ ३ ॥

शुभलग्ने शुभांशे च नैधने शुद्धिसंयुते ॥
लग्नेंत्यनैधने सौम्यै संयुते वा निरीक्षिते ॥ ४ ॥

इति श्रीनार० संहितायां नामकरणाध्यायो विंशतितमः ॥ २० ॥

शुभ लग्नमें, शुभ राशिके नवांशकमें अष्टम स्थान शुद्ध होय और लग्न, द्वादश, अष्टमस्थानमें शुभग्रह स्थित हों अथवा शुभग्रहोंकी दृष्टि होवे तब नामकरण कर्म करना योग्य है ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषा० नामकरणाध्यायो विंशतितमः ॥ २० ॥

अथ नवान्नप्राशनम् ।

षष्ठमास्यष्टमे वापि पुंसां स्त्रीणां तु पंचमे ॥
सप्तमे मासि वा कार्यं नवान्नप्राशनं शुभम् ॥ १ ॥

छठे महीनेमें अथवा आठवें महीनेमें पुरुषोंको (पुत्रोंको) प्रथम अन्न खिलाना प्रारंभ करै और कन्याओंको प्रथम पांचवें तथा सातवें महीनेमें अन्न खिलाना चाहिये ॥ १ ॥

रिक्तां दिनक्षयं नंदां द्वादशीमष्टमीममाम् ॥
त्यक्त्वान्यास्तिथयः श्रेष्ठाः प्राशने शुभवासरे ॥ २ ॥

रिक्तातिथि, तिथिक्षय, नंदातिथि, द्वादशी, अष्टमी, अमावस्या इनको त्यागकर अन्यतिथि और शुभवार अन्न प्राशनमें शुभदायक हैं ॥ २ ॥

चरस्थिरमृदुक्षिप्रनक्षत्रे शुभनैधने ॥
दशमे शुद्धिसंयुक्ते शुभलग्ने शुभांशके ॥ ३ ॥

चर, स्थिर, मृदु, क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रोंमें और लग्नसे अष्टमस्थान तथा दशमस्थानकी शुद्धि होनेमें शुभलग्न और शुभराशिका नवांशक होनेमें ॥३॥

पूर्वाह्णे सौम्यखेटेन संयुक्ते वीक्षितेऽपि वा ॥
त्रिषष्ठलाभगैः क्रूरैः केन्द्रधीधर्मगैः शुभैः ॥ ४ ॥

पूर्वाह्ण (दुपहरा पहिले) लग्न शुभग्रहसे दृष्ट हो अथवा युक्त हो ३ । ६ । ११ इन स्थानोंमें क्रूरग्रह होवें और केंद्र, पांचवें, नवमें स्थानमें शुभग्रह होवें तब ॥ ४ ॥

व्ययारिनिधनस्थेन चंद्रेण प्राशनं शुभम् ॥
अन्नप्राशनलग्नस्थे क्षीणेंदौ मासर्नाशके ॥ ५ ॥

और १२ । ६ । ८ इन स्थानोंमें चन्द्रमा नहीं होवे तब अन्नप्राशन शुभ है और लग्नमें क्षीण चन्द्रमा नहीं हो, चन्द्रमा अस्त नहीं हो तथा नीचका नहीं हो ॥ ५ ॥

नित्यं भोक्तुश्च दारिद्र्यं रिष्फषष्ठाष्टगेऽपि वा ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायामन्नप्राशनाध्याय एकविंशातितमः ॥ २१ ॥

जो १२ । ६ । ८ इन स्थानोंमें चन्द्रमा हो ऐसे लग्नमें अन्नप्राशन कराया जाय तो भोजन करनेवाला जन दरिद्री हो ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायामन्नप्राशनाध्याय एकविंशतिमः ॥ २१ ॥

अथ चौलकम ।

तृतीये पंचमाब्दे वा स्वकुलाचारतोऽपि वा ॥
बालानां जन्मतः कार्यं चौलमावत्सरत्रयात् ॥ १ ॥

तीसरे वा पांचवें वर्षमें अथवा अपने कुलाचारके अनुसार बालकोंका चौलकर्म (बालउतराने चाहियें) शुभ है । विशेष करके तीन वर्षका बालक हुए पहिले करना ॥ १ ॥

सौम्यायनेनास्तगयोरसुरासुरमंत्रिणोः ॥
अपर्वरिक्ततिथिषु शुक्रे ज्ञे ज्येंदुवासरे ॥ २ ॥

उत्तरायण सूर्य हो, गुरु, शुक्रका अस्त नहीं होवे, पूर्णमासी, रिक्ता तिथि इनको त्याग दे, शुक्र, बुध, बृहस्पति, चन्द्रवार ये शुभ हैं ॥ २ ॥

दस्रादितीज्यचंद्रेंद्रपूषाभानि शुभान्यतः ॥
चौलकर्मणि हस्तर्क्षात्त्रीणित्रिणि च विष्णुभात् ॥ ३ ॥
पट्टबंधनचौलान्नप्राशने चोपनायने ॥
शुभदं जन्मनक्षत्रमशुभं त्वन्यकर्मणि ॥ ४ ॥

अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, मृगशिर, ज्येष्ठा, रेवती ये नक्षत्र शुभ हैं और चौलकर्ममें हस्त नक्षत्रसे तीन नक्षत्र अथवा श्रवणसे तीन नक्षत्रों तक जन्मनक्षत्र होय तो चौल कर्म, पट्टाबंधन, अन्नप्राशन, उपनयन कर्म इनमें शुभदायक है अन्यकर्ममें जन्मनक्षत्र अशुभ जानना ॥ ३ ॥ ४ ॥

अष्टमे शुद्धिसंयुक्ते शुभलग्ने शुभांशके ॥
न नैधने भे शीतांशौ षष्ठेऽन्त्ये तु विवर्जयेत् ॥ ५ ॥

शुभलग्न, शुभ नवांशक, अष्टमस्थान शुद्ध अर्थात् ८ वें स्थानमें कोई ग्रह नहीं हो और ६ । ८ । १२ चन्द्रमा नहीं हो ॥ ५ ॥

धनत्रिकोणकेंद्रस्थैः शुभैस्त्र्यायारिगैः परैः ॥
अभ्यक्ते संध्ययोर्नाते निशिभोक्तुर्न चाहवे ॥ ६ ॥

शुभग्रह २ । ९ । ५ । १ । ४ । ७ । १० इन घरोंमें हों और क्रूर ग्रह ३ । ११ । ६ घरोंमें हों तब तेल आदिकी मालिश करके क्षौरकर्म कराना शुभ है तथा संध्यासमय, भोजनका अंत, रात्रि, युद्ध इन्होंमें क्षौर नहीं कराना ॥ ६ ॥

नोत्कटे भूषिते नैव न याने नवमेऽह्नि च ॥
क्षौरकर्म महीशानां पंचमे पंचमेऽहनि ॥ ७ ॥
कर्त्तव्यं क्षौरनक्षत्रे ह्ययवास्योदयेऽष्टदम् ॥
नृपविप्राज्ञया यज्ञे मरणे बादमोक्षणे ॥
उद्वाहेऽखिलवारक्षतियिषु क्षौरमिष्टदम् ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां चौलाध्यायो द्वाविंशतितमः ॥ २२ ॥

अत्यंत विकराल होकर आभूषण धारण करके तथा सवारीपर बैठके क्षौर नहीं कराना, राजाओंको नवमें २ दिन तथा पांचवें २ दिन भी क्षौर नहीं कराना चाहिये । क्षौर करानेके योग्य नक्षत्रोंमें क्षौर कराना और मांगलीक जन्मोत्सवादिकमें कराना, राजा तथा ब्राह्मणकी आज्ञासे, यज्ञ, मरण, कैदसे छूटना, विवाह इन्होंविषे संपूर्ण तिथि वारोंमें क्षौर करालेवे कुछ मुहूर्त्त नही देखै ॥ ७ ॥ ८

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां चौलाध्यायो द्वाविंशतितमः ॥ २२ ॥

कर्त्तव्यं मंगलेष्वादौ मंगलेष्वंकुरार्पणम् ॥
नवमे सप्तमे मासि पंचमे दिवसेऽपि वा ॥ १ ॥

मंगल कर्मामें पहिले दूब आदि मंगलांकुर अर्पण करने चाहियें । नवमें अथवा सातवें महीनेमें अथवा पांचवें दिन ॥ १ ॥

तृतीये बीजनक्षत्रे शुभवारे शुभोदये ॥
सभ्यागृहाण्यलंकृत्य वितानध्वजतोरणैः ॥ २ ॥

तथा तीसरे महीनेमें गर्भाधानके नक्षत्रविषे शुभवार और शुभनक्षत्र विषे, अच्छे लग्नविषे, अच्छे प्रकारसे घरोंको मंडप, ध्वजा, तोरणआदिकोंसे विभूषित कर ॥ २ ॥

आशिषो वाचनं कार्यं पुण्यं पण्यांगनादिभिः ॥
महावादित्रनृत्याद्यैर्गताः प्रागुत्तरां दिशम् ॥ ३ ॥

स्वस्तिवाचन करवाना, सौभाग्यवती स्त्रियोंसे अच्छे प्रकार मंगल गायन करवाना, महान् बाजे नृत्य आदिकोंकी शोभासे युक्त होकर ईशान कोणमें जावे ॥ ३ ॥

तत्र मृत्सिकतां श्लक्ष्णां गृहीत्वा पुनरागतः ।
मृन्मयेष्वथवा वैणवेषु पात्रेषु पूरयेत् ॥
अनेकबीजसंयुक्तं तोयं पुष्पोपशोभितम् ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां मंगलांकुरार्पणं नामाध्यायस्त्रयो-
विंशतितमः ॥ २३ ॥

तहांसे बालूरेतको लाकर मृत्तिकाके पात्रमें अथवा बांस आदिके पात्रोंमें भरदेना चाहिये फिर तिसमें सब प्रकारके वीजोंको बोवे और जल छिडक देवे तथा सुंदर पुष्प डालकर शोभित करदेवे ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां मंगलांकुरार्पणं
नामाध्यायस्त्रयोविंशतितमः ॥ २३ ॥

आधानादष्टमे वर्षे जन्मतो वाग्रजन्मनाम् ॥
राज्ञामेकादशे मौंजीबंधनं द्वादशे विशाम् ॥ १ ॥

गर्भाधानसे आठवें वर्षमें अथवा जन्मसे आठवें वर्षमें ब्राह्मणोंको उपनयन कर्म करना और क्षत्रियोंके ग्यारहवें वर्षमें, वैश्योंके बारहवें वर्षमें यज्ञोपवीत संस्कार कराना चाहिये ॥ १ ॥

आजनेः पंचमे वर्षे वेदशास्त्रविशारदः ॥
उपनीतो यतः श्रीमान् कार्यं तत्रोपनायनम् ॥ २ ॥

जो ब्राह्मण वेदशास्त्रमें निपुण होनेकी इच्छा करे वह जन्मसे पांचवेंही वर्षमें उपनयन संस्कार करवावे । क्यों कि, पांचवें वर्षमें संस्कार करानेवाला द्विज श्रीमान् वेदपाठी होता है ॥ २ ॥

बालस्य बलहीनोऽपि शांत्या जीवो बलप्रदः ॥
यथोक्तवत्सरे कार्यमनुक्तेनोपनायनम् ॥ ३ ॥

बालकके बलहीन भी बृहस्पति शांति करवानेसे बलदायक हो जाता है यथोक्त वर्षमें यज्ञोपवीत कराना । अनुक्त कालमें यज्ञोपवीत नहीं करना॥३॥

दृश्यमाने गुरौ शुक्रे दिनेशे चोत्तरायणे ॥
वेदानामधिपा जीवशुक्रभौमबुधाः क्रमात् ॥ ४ ॥

बृहस्पति तथा शुक्रका उदय हो, सूर्य उत्तरायण हो तब उपनयन करावे। बृहस्पति, शुक्र, मंगल, बुध ये ग्रह क्रमसे, ऋग, यजु, साम, अथर्व इनके अधिपति हैं ॥ ४ ॥

शरद्ग्रीष्मवसंतेषु व्युत्क्रमात्तु द्विजन्मनाम् ॥
मुख्यं साधारणं तेषां तपोमासादि पंचसु ॥ ५ ॥

शरद्, ग्रीष्म, वसन्त इन ऋतुओंमें यथाक्रमसे द्विजातियोंने यज्ञोपवीत संस्कार कराना योग्य है ये ऋतु मुख्य हैं और साधारणता करके सब ही द्विजातियोंको माघ आदि पांच महीनोंमें यज्ञोपवीत संस्कार करवाना ॥५॥

स्वकुलाचारधर्मज्ञो माघमासे तु फाल्गुने ॥
विधिज्ञो ह्यर्थवांश्चैत्रे वेदवेदांगपारगः ॥ ६ ॥

धर्मज्ञ पुरुष अपने कुलाचारके अनुसार माघ महीनेमें उपनयन करवानेवाला होता है। फाल्गुनमें यज्ञोपवीत संस्कार करावे तो विधिको जाननेवाला धनाढ्य होवे, चैत्रमें वेदवेदांगको जाननेवाला पंडित हो ॥ ६ ॥

वैशाखे धनवान्वेदशास्त्रविद्याविशारदः ॥
उपनीतो बलाढ्यश्च ज्येष्ठे विधिविदांवरः ॥ ७ ॥

वैशाखमें धनवान् वेदशास्त्रको जाननेवाला पंडित हो, ज्येष्ठमें यज्ञोपवीत करानेसे बलवान् तथा सब विधियोंको जाननेवाला होता है ॥ ७ ॥

शुक्लपक्षे द्वितीया च तृतीया पंचमी तथा ॥
त्रयोदशी च दशमी सप्तमी व्रतबंधने ॥ ८ ॥
श्रेष्ठा त्वेकादशी षष्ठी द्वादश्येतास्तु मध्यमाः ॥
एका चतुर्थी संत्याज्या कृष्णपक्षे च मध्यमा ॥ ९ ॥
आपंचम्यास्तु तिथयः पराः स्युरतिनिंदिताः ॥
श्रेष्ठान्यर्कत्रयांत्येज्यरुद्रादित्युत्तराणि च ॥ १० ॥

शुक्लपक्षमें द्वितीया, तृतीया, पञ्चमी, त्रयोदशी, दशमी, सप्तमी ये तिथि यज्ञोपवीत करानेमें शुभ कहीं हैं आर एकादशी, षष्ठी, द्वादशी ये मध्यम तिथि कही हैं। कृष्णपक्षमें एक चतुर्थी तो त्याज्य है आंर तिथि पञ्चमीतक मध्यम हैं। पञ्चमीसे आगे अन्य तिथि अत्यन्त निंदित जाननी। हस्त आदि तीन नक्षत्र, रेवती, पुष्य, आर्द्रा, पुनर्वसु, तीनों उत्तरा ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

विष्णुत्रयाश्वमित्राजयोनिभान्युपनायने ॥
जन्मभाद्दशमं कर्म संघातर्क्षं च षोडशम् ॥ ११ ॥

श्रवण आदि तीन नक्षत्र, अश्विनी, अनुराधा, पूर्वाभाद्रपदा ये नक्षत्र उपनयन संस्कारमें शुभ कहे हैं। जन्म नक्षत्रसे दशवाँ व सोलहवाँ नक्षत्र कर्मसंघात ऋक्ष कहा है ॥ ११ ॥

अष्टादशं सामुदायं त्रयोविंशं विनाशनम् ॥
मानसं पंचविंशर्क्षे नाचरेच्छुभमेव तु ॥ १२ ॥

अठारहवाँ नक्षत्र सामुदाय है, तेईसवाँ विनाशन है, पचीसवाँ नक्षत्र मानस संज्ञक है इन नक्षत्रोंमें किञ्चित् भी शुभकर्म नहीं करना चाहिये ॥१२॥

आचार्यसौम्यकाव्यानां वाराः शस्ताः शशीनयोः ॥
वारौ तौ मध्यफलदावितरौ निंदितौ व्रते ॥ १३ ॥

गुरु, बुध, शुक्र ये वार शुभदायक हैं, चन्द्र, रविवार मध्यम हैं अन्य वार उपनयन संस्कारमें निंदित कहे हैं ॥ १३ ॥

त्रिधा विभज्य दिवसं तत्रादौ कर्म दैविकम् ॥
द्वितीये मानुषं कार्यं तृतीयांशे च पैतृकम् ॥ १४ ॥

दिनमानके तीन विभाग करके तहां पहिले भागमें देवकर्म, दूसरे विभागमें मानुषकर्म, तीसरे विभागमें पितृकर्म करना योग्य है ॥ १४ ॥

स्वनीचगे तदंशे वा स्वारिभे वा तदंशके ॥
गुरौ भृगौ च शाखेशे कुलशीलविवर्जितः ॥ १५ ॥
स्वाधिशत्रुगृहस्थे वा तदंशस्थेऽथवा व्रती ॥
शाखेशे वा गुरौ शुक्रे महापातककृद्भवेत् ॥ १६ ॥

बृहस्पति, व शुक्र तथा शाखेश अर्थात् ऋग्वेद आदिकोंके आधिपति, बृहस्पति आदि ४ वार कहे हैं उनमेंसे जिस वेदका मत हो वही शाखेश है; जैसे ऋग्वेदियोंका गुरु, यजुर्वेदियोंका शुक्र, सामवेदियोंका मंगल, अथर्ववेदियोंका बुध जानना ऐसे इन ग्रहोंमेंसे यथाक्रमसे अपनी नीचराशिपर हो वा नीचांश अथवा शत्रुके घरमें वा शत्रुराशिके नवांशकमें होवे तब उपयनसंस्कार करावे तो अपने पूर्ण शत्रुके घरमें स्थित अथवा शत्रुकी राशिके नवांशकमें स्थित शाखेश तथा गुरु, शुक्र होय तब उपनयन करावे तो महाघातकी पुरुष हो ॥ १५ ॥ १६ ॥

स्वोच्चसंस्थे तदंशे वा स्वराशौ राशिगे गणे ॥
शाखेशे वा गुरौ शुक्रे केंद्रगे वा त्रिकोणगे ॥ १७ ॥

अपनी उच्चराशिमें स्थित अथवा उच्चराशिके नवांशकमें अथवा अपनी राशिमें स्थित शाखेश होवे तथा बृहस्पति, शुक्र भी इसी प्रकार स्थित होवे अथवा लग्नसे केंद्रमें तथा त्रिकोणमें (९ । १) गुरु शुक्र होवे तब उपनयन संस्कार करावे तो ॥ १७ ॥

अतीव बलवांश्चैव वेदवेदांगपारगः ॥
परमोच्चगते जीवे शाखेशे वाथवा सिते ॥ १८ ॥
व्रती शिशुर्धनाढ्यश्च वेदशास्त्रविशारदः ॥
मित्रराशिगते जीवे तदंशे वा स्वराशिगे ॥ १९ ॥

अत्यन्त बलवान् वेदवेदांगके पारको जाननेवाला पुरुष हो, बृहस्पति, शुक्र, शाखेश इनमेंसे कोई परम उच्च अंशोंमें प्राप्त होवे तो व्रती बालक धनाढ्य तथा वेदपाठी होवे, बृहस्पति मित्रराशिपर हो अथवा तिस राशिके नवांशकमें हो अथवा अपनी राशिपर होय ॥ १८ ॥ १९ ॥

शुक्रे वाचार्यसंयुक्ते तदा तत्र व्रती शिशुः ॥
स्वस्वमित्रगृहस्थे वा तस्योच्चस्थे तदंशके ॥ २० ॥

शुक्र, बृहस्पति एक राशिपर स्थित होवें तब उपनयन कराना शुभ है. बृहस्पति, शुक्र, शाखेश ये ग्रह अपने २ मित्रोंके घरमें स्थित हों अथवा मित्र-ग्रहकी उच्चराशिपर स्थित होवें अथवा उच्चराशिके नवांशकमें स्थित होवें तब उपनयन करवावे तो विद्या धन धान्यसे संयुक्त होवे ॥ २० ॥

गुरौ भृगौ वा शाखेशे विद्याधनसमन्वितः
शाखाधिपतिवारश्च शाखाधिपबलं शिशोः ॥
शाखाधिपतिलग्नं च दुर्लभं त्रितयं व्रते ॥ २१ ॥

शाखाधिपति ग्रहका वार, बालकको शाखाधिपतिका बल और शाखा-धिपतिके राशिका लग्न ये तीन वस्तु उपनयन कर्ममें दुर्लभ हैं अर्थात् बडी उत्तम हैं ॥ २१ ॥

तस्माच्छुभांशगे चंद्रे व्रती विद्याविशारदः ॥
पापेऽष्टगे स्वांशगे वा दरिद्रो नित्यदुःखितः ॥ २२ ॥

इसीलिये शुभराशिके नवांशकमें चंद्रमा होवे तो व्रतीजन विद्यामें निपुण हो और पापग्रह अष्टमस्थानमें हो तथा अपनी राशिके नवांशकमें हो तो दरिद्री नित्य दुःखी होवे ॥ २२ ॥

श्रवणादितिनक्षत्रे कर्क्यंशस्थे निशाकरे ॥
सदा व्रती वेदशास्त्रधनधान्यसमृद्धिमान् ॥ २३ ॥

श्रवण तथा पुष्य नक्षत्र हो, कर्क राशिके नवांशकपर चन्द्रमा स्थित हो तब उपनयन संस्कार करानेवाला बालक वेदशास्त्र धनधान्यकी समृद्धिवाला होता है ॥ २३ ॥

शुभलग्ने शुभांशे च नैधने शुद्धिसंयुते ॥
लग्ने त्वनैधने सौम्यैः संयुक्ते वा निरीक्षिते ॥ २४ ॥

शुभलग्न शुभराशिका नवांशक हो, आठवे घर कोई लग्नमें शुभग्रह स्थित हो अथवा शुभग्रहोंकी दृष्टि हो ॥ २४ ॥

दृष्टैर्जीवार्कचंद्राद्यैः पंचभिर्बलिभिर्ग्रहैः ॥
स्थानादिबलसंपूर्णैश्चतुर्भिर्वा समान्वितैः ॥ २५ ॥

बृहस्पति, सूर्य, चंद्रमा इत्यादि पांच ग्रहोंसे दृष्ट शुभस्थान अथवा पञ्चम आदि स्थानोंमें चार बली शुभग्रह स्थित होवें ॥ २५ ॥

ईक्षिते वा चैकविंशन्महादोषविवर्जिते ॥
राशयः सकलाः श्रेष्ठाः शुभग्रहयुतेक्षिताः ॥ २६ ॥

अथवा शुभ चार ग्रहोंसे दृष्ट लग्न होवे और २१ इकीस महादोष जो ग्रन्थांतरोंमें तथा इसी ग्रन्थमें आगे कहे हैं । पंचागशुद्धिका अभाव १, उदयास्त शुद्धिका अभाव २, सूर्य संक्रांति ३, पाप षड्वर्ग ४, गंडांत ५, कर्त्तरीयोग ६ इत्यादि हैं ये नहीं होने चाहियें और शुभग्रहोंसे युक्त तथा दृष्ट संपूर्ण राशि श्रेष्ठ कही हैं ॥ २६ ॥

शुभा नवांशाश्च तथा गृह्यास्ते शुभराशयः ॥
पापग्रहस्य लग्नांशः शुभेक्षितयुतोऽपि वा ॥ २७ ॥

और जिनमें शुभराशिके नवांशक आगये हों वे राशि ग्रहण करने योग्य शुभ हैं और पाप ग्रहके लग्नका नवांशक शुभग्रहसे दृष्ट तथा युक्त होय तो शुभ है ॥ २७ ॥

तस्माद्गोमिथुनांत्याश्च तुलाकन्यांशकाः शुभाः ॥
एवंविधे लग्नगते नवांशे व्रतमीरितम् ॥ २८ ॥

इसलिये वृष, मिथुन, मीन, तुला, कन्या इन राशियोंके नवांशक शुभ हैं ऐसे लग्नमें अथवा नवांशकमें यज्ञोपवीत कराना शुभ है ॥ २८ ॥

त्रिषडायगतैः पापैः षडष्टांत्यविवर्जितैः ॥
शुभैः षष्ठाष्टलग्नांत्यवर्जितेन हिमांशुना ॥ २९ ॥

पापग्रह ३ । ६ । ११ घरमें हों और शुभग्रह ६ । ८ । १२ । इन घरोंमें नहीं हों और ६ । ८ लग्नमें चंद्रमा नहीं हो ॥ २९ ॥

स्वोच्चसंस्थोऽपि शीतांशुर्व्रतिनो यदि लग्नगः ॥
तं करोति शिशुं निःस्वं सततं क्षयरोगिणम् ॥ ३० ॥

उच्चराशिका भी चंद्रमा लग्नमें होय तो उपनयन संस्कारवाले बालकको निरन्तर दरिद्री और क्षयी रोगयुक्त करता है ॥ ३० ॥

स्फूर्जितं केंद्रगे भानौ व्रतिनो वंशनाशनम् ॥
कूजितं केंद्रगे भौमे शिष्याचार्यविनाशनम् ॥ ३१ ॥

केंद्रमें सूर्य होवे तब उपनयन संस्कार होनेसमय मेघ गज पडे तो वंशका नाश होता है और मंगल केंद्रमें होय ऐसे लग्नमें उपनयनसमय पक्षियोंके कूजनेका शब्द होय तो शिष्य और आचार्यका नाश हो ॥ ३१ ॥

करोति रुदितं केंद्रसंस्थे मंद्रेऽतुलान् गदान् ॥
लग्नात्केंद्रगते राहौ रंध्रे मातृविनाशनम् ॥ ३२ ॥
उग्रकेंद्रगते केतौ तातवित्तविनाशनम् ॥
पंचदोषैर्युतं लग्नं शुभदं नोपनायने ॥ ३३ ॥

और केंद्रमें शनि होवे ऐसे समयमें रोनेका शब्द सुनजाय तो अत्यंत रोग होवे । लग्नसे केंद्रमें विशेष करके ७ में राहु होय तो माताको नष्ट करे, उग्र केंद्रमें केतु होय तो पिताको और धनको नष्ट करै,इन पांच दोषोंसे युक्त लग्न उपनयन संस्कारमें शुभ नहीं है ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

विना वसंतऋतुना कृष्णपक्षे गलग्रहे ॥
अनाध्यायोपनीतश्च पुनः संस्कारमर्हति ॥ ३४ ॥

वसंतऋतुके विना कृष्णपक्षमें तथा गलग्रह योगमें उपनयन किया जाय तो फिर संस्कार करनेके योग्य है अर्थात् इन योगोंमें संस्कार नहीं कराना ॥ ३४ ॥

त्रयोदश्यादिचत्वारि सप्तम्यादिदिनत्रयम् ॥
चतुर्थी चैकतः प्रोक्ता ह्यष्टावेते गलग्रहाः ॥ ३५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायामुपनयनाध्यायश्चतुर्विंशतितमः ॥ २४ ॥

त्रयोदशी आदि चार तिथि और सप्तमी आदि ३ दिन, एक चतुर्थी ऐसे ये तिथि गलग्रह योगसंज्ञक हैं ॥ ३५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायामुपनयनाध्यायश्चतुर्विंशतितमः ॥२४॥

छुरिकाबंधनं वक्ष्ये नृपाणां प्राक्करग्रहात् ॥
विवाहोक्तेषु मासेषु शुक्लपक्षेऽप्यनस्तगे ॥ १ ॥
शुक्रे जीवे च भूपुत्रे चन्द्रतारावलान्विते ॥
मौंजीबन्धर्क्षतिथिषु कुजवर्जितवासरे ॥ २ ॥

अब छुरिकाबंधन मुहूर्त्तको कहते हैं। राजाओंको विवाहसे पहिले छुरिका (कटारी) बांधनी चाहिये। सो विवाह कर्ममें कहे हुए महीनोंमें और शुक्लपक्षमें तथा गुरु शुक्रके उदयमें और मंगलके उदयमें और चंद्रमा तथा ताराका बल होय, यज्ञोपवीतमें कहे हुए नक्षत्र तिथि वार हों, मंगल विना अन्यवार होवें ॥ १ ॥ २ ॥

तेषां लग्नोदये कर्तुरष्टमोदयवर्जिते ॥
शुद्धेऽष्टमे तिथौ लग्नात्षडष्टांत्यविवर्जिते ॥ ३ ॥

तिन शुभ ग्रहोंकी राशिका लग्न हो और कर्त्ताकी जन्मराशिसे आठवें कोई ग्रह नहीं हो तथा वर्तमान लग्नसे आठवें कोई ग्रह नहीं हो, लग्नसे ६। ८। १२ इन घरोंमें चंद्रमा नहीं हो ॥ ३ ॥

धनात्रिकोणकेंद्रस्थैः शुभैस्त्र्यायारिगैः परैः ॥
छुरिकाबन्धनं कार्यमर्चयित्वामरान्पितॄन् ॥ ४ ॥

धन, त्रिकोण (९। ५) केंद्र इन स्थानोंमें शुभ ग्रह होवे और ३। ११। ६ इनमें पाप ग्रह होवे ऐसे मुहूर्त्तमें देवता तथा पितरोंका पूजन कर छुरिकाबंधन (कटारी बांधनी) शुभ है ॥ ४ ॥

अर्चयच्छुरिकां सम्यग्देवतानां च सन्निधौ ॥
ततः सुलग्ने बध्नीयात्कट्यां लक्षणसंयुताम् ॥ ५ ॥

देवताओंकी मूर्तियोंके सन्मुख छुरिका (कटारी) का पूजन करें फिर अच्छे लग्नमें लक्षणवाली छुरिका (खड्ग) को कटिमें बांधना चाहिये ॥ ५ ॥

तस्यास्तु लक्षणं वक्ष्ये यदुक्तं ब्रह्मणा पुरा ॥
संमितं छुरिकायामविस्तारेणैव ताडयेत् ॥ ६ ॥

अब जो पहिले ब्रह्माजीने कहा है ऐसा खड्गका लक्षण कहते हैं खड्गकी लंबाईके बराबरके निशानेको उस नवीन खड्गसे ताड़ित करे ॥ ६ ॥

भाजितं गजसंख्यैश्च ह्यंगुलीः परिकल्पयेत् ॥
आयामार्द्धाग्रविस्तारप्रमाणेनैव छेदयेत् ॥ ७ ॥

फिर उस लम्बे चिह्नमें आठका भाग दे अंगुल कल्पित करै अर्थात् अंगुलोंसे नापकर आठसे कम तक रहैं इतने चिह्नको ग्रहण कर पीछे खड्गकी लंबाईके आधे विस्तारके अग्रभागसे उस चिह्नित वस्तुको काट देवे ॥ ७ ॥

तच्छेदखंडान्यायाः स्युर्ध्वजाये रिपुनाशनम् ॥
धूम्राये मरणं सिंहे जयश्वाये निरोगिता ॥
धनलाभो वृषेत्यंतं दुःखी भवति गर्दभे ॥ ८ ॥

फिर उस कटेहुए टुकडेके आय होते हैं अर्थात् जितनी अंगुलका होय उसका फल कहते हैं । एक अंगुलका होय तो ध्वज आय जाने वह शत्रुको नष्ट करता है । और २ अंगुल धूम्रआय होय तो मरण, ३ सिंह हो तो जय (जीत) हो, चौथा श्वास आय होय तो आरोग्यता हो, फिर ५ वृष आय हो तो धनका लाभ, ६ गर्दभ आयमें अत्यंत दुःखी होवे ॥ ८ ॥

गजायेऽत्यंतसंप्रीतिर्ध्वांक्षे वित्तविनाशनम् ॥
खड्गपुत्रिकयोर्मानं गणयेत्स्वांगुलेन तु ॥ ९ ॥
मानांगुले तु पर्यायानेकादशमितांस्त्यजेत् ॥
शेषाणामंगुलानां च फलानि स्युर्यथाक्रमात् ॥ १० ॥
पुत्रलाभः शत्रुवृद्धिः स्त्रीलाभो गमनं शुभम् ॥
अर्थहानिश्चार्थवृद्धिः प्रीतिः सिद्धिर्जयः स्तुतिः ॥ ११ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां छुरिकाबंधनाध्यायः पंचविंशतितमः ॥२५॥

सातवाँ गजआयमें सम्यक् प्रीति हो और आठवाँ ध्वांक्ष आयमें धनका नाश हो, खड्गके मानको और छुरिकाके मानको अपनी अंगुलोंसे नाप करे फिर उनमें ११ अंगुल प्रमाण त्याग देवे अर्थात् ग्यारहका भाग देकर बाकी रखलेवे, तलवारकी अंगुल और मर्तिमें जितने अंगुलतक घात भया हो उनको अंगुल करके जोडकर ११ का भाग देना, फिर १ बँचे तो पुत्रलाभ, २ बँचे तो शत्रुवृद्धि, ३ बँचे तो स्त्रीलाभ, ४ बँचे तो गमन, ५ बँचे तो शुभ फल, ६ बँचे तो द्रव्यहानि, ७ बँचे तो द्रव्यवृद्धि, ८ बँचे तो प्रीति, ९ बँचे तो सिद्धि, १० बँचे तो विजय, ११ बँचे तो स्तुति (यश) ऐसा फल जानना ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां छुरिकाबंधनाध्यायःपंचविंशतितमः ॥२५॥

अथोत्तरायणे शुक्रजीवयोर्दृश्यमानयोः ॥
द्विजातीनां गुरोर्गेहान्निवृत्तानां यतात्मनाम् ॥ १ ॥

उत्तरायण सूर्य हो, बृहस्पति तथा शुक्रका उदय हो तब नियम रखनेवाले अर्थात् ब्रह्मचर्यमें रहनेवाले द्विजातियोंने गुरुके घरसे निवृत्त होना चाहिये॥१॥

चित्रोत्तरादितीज्यांत्यहरिमैत्रेंदुभात्रिषु ॥
भेष्वर्केंद्विज्यशुक्रज्ञवारलग्नांशकेषु च ॥ २ ॥
अथवावस्थानक्षत्रवारलग्नांशकेष्वपि ॥
प्रतिपत्सर्वरिक्तामा सप्तमीतो दिनत्रयम् ॥ ३ ॥
हित्वान्यदिवसे कार्यं समावर्तनमंडनम् ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां समावर्तनाध्यायः षड्विंशतितमः ॥ २६ ॥

चित्रा, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, पुष्य, रेवती, श्रवण, अनुराधा, मृगशिर आदि तीन नक्षत्र, रवि, चन्द्र, बृहस्पति, शुक्र, बुध इन वारोंविषे और इनहीकी राशियोंके लग्न तथा नवांशकों विषे अथवा यात्राके नक्षत्र वार लग्न नवांशकों विषे समावर्त्तन कर्म करना चाहिये और प्रतिपदा, सपूर्ण रिक्ता-तिथि, अमावस्या, सप्तमी आदि तीन दिनको त्यागकर समावर्त्तन कर्म करना चाहिये (गृहस्थाश्रममें प्राप्त होना चाहिये) ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां समावर्त्तना-ध्यायः षड्विंशतितमः ॥ २६ ॥

सर्वाश्रमाणामाश्रेयो गृहस्थाश्रम उत्तमः ॥
यतः सोऽपि च योषायां शीलवत्यां स्थितस्ततः ॥ १ ॥

संपूर्ण आश्रमोंका आश्रयरूप गृहस्थाश्रम कहा है वह गृहस्थाश्रम भी अच्छी शीलवतीस्त्रीके आश्रयस्थित रहता है ॥ १ ॥

तस्यास्तच्छीललब्धिस्तु सुलग्नवशतः खलु ॥
पितामहोक्तां संवीक्ष्य लग्नशुद्धिं प्रवच्म्यहम् ॥ २ ॥

और तिस स्त्रीके शील स्वभावकी प्राप्ति अच्छे लग्नके प्रभावसे होती है इसीलिये मैं ब्रह्माजीसे कही हुई लग्नशुद्धिको कहता हूं ॥ २ ॥

पुण्येऽह्नि लक्षणोपेतं सुखासीनं सुचेतसम् ॥
प्रणम्य देववत्पृच्छेद्दैवज्ञं भक्तिपूर्वकम् ॥ ३ ॥

पवित्र शुभ दिनविषे सुंदर लक्षणोंसे युक्त, सुखपूर्वक स्वस्थ चित्तसे बैठे हुए जोतिषीको भक्तिपूर्वक प्रणाम कर देवताकी तरह सत्कार करके पूंछे ॥ ३ ॥

तांबूलफलपुष्पाद्यैः पूर्णांजलिरुपाग्रतः ॥
कर्ता निवेद्य दंपत्योर्जन्मराशिं स जन्मभम् ॥ ४ ॥

तांबूल, फल, पुष्प आदिकोंसे हाथोंको पूर्णकर (भेंट चढाकर) वह पृच्छक वरकन्याओंके जन्मके नक्षत्रको और जन्मकी राशिको उस ज्योतिषीके आगे बतलादेवे ॥ ४ ॥

पृच्छकस्य भवेल्लग्नादिंदुः षष्ठाष्टकोऽपि वा ॥
दंपत्योर्मरणं वाच्यमष्टमर्क्षांतरे यदि ॥ ५ ॥

तहां प्रश्नसमयके लग्नसे छठे आठवें स्थानपर चंद्रमा हो अथवा लग्नके नक्षत्रसे आठवें नक्षत्रपर होय तो स्त्रीपुरुषोंका (वरकन्याओंका) मरण होना ऐसा कहना चाहिये ॥ ५ ॥

यदि लग्नगतश्चंद्रस्तस्मात्सप्तमगः कुजः ॥
विज्ञेयं भर्तृमरणं त्वष्टमेऽब्दे न संशयः ॥ ६ ॥

जो चंद्रमा प्रश्नलग्नमें हो और तिस चंद्रमासे सातवें स्थानपर मङ्गल हो तो आठवें वर्षमें निश्चय पतिका मरण होता है ॥ ६ ॥

लग्नात्पंचमगः पापः शत्रुदृष्टः स्वनीचगः ॥
मृतपुत्रा तु सा कन्या कुलटा न तु संशयः ॥ ७ ॥

लग्नसे पांचवे स्थान पापग्रह शत्रुग्रहसे दृष्ट तथा अपनी नीचराशिपर स्थित होवे तो वह कन्या मृतवत्सा हो और व्यभिचारिणी हो इसमें संदेह नहीं॥७॥

तृतीयपंचसप्तायकर्मगश्च निशाकरः ॥
लग्नात्करोति संबंधं दंपत्योर्गुरुवीक्षितः ॥ ८ ॥

तीसरे, पांचवें, सातवें, ग्यारहवें तथा दशवें स्थानपर चंद्रमा हो और बृहस्पतिकरके दृष्ट हो तो स्त्री पुरुषका सम्बन्ध (मेल) करता है ॥ ८ ॥

तुलागो कर्कटे लग्ने संस्थाः शुक्रेंदुसंयुताः ॥
वीक्षिताः स्त्रीग्रहा नृणां कन्यालाभो भवेत्तदा ॥ ९ ॥

प्रश्नसमय तुला, वृष, कर्क, लग्नमें स्त्रीग्रह स्थित होवें और शुक्र चंद्रमासे युक्त होवें तो तथा दृष्ट होवें तो मनुष्योंको कन्याका लाभ जरूर कहना ॥ ९ ॥

शुक्रेंदू युग्मराशिस्थौ युग्मांशकगतौ तदा ॥
बलिनौ पश्यतो लग्नं कन्यालाभो भवेत्तदा ॥ १० ॥

प्रश्नसमय शुक्र और चंद्रमा युग्मराशिपर स्थित होवें अथवा युग्मराशिके नवांशकपर स्थित बली होकर लग्नको देखते होवें तो वरको कन्याका लाभ कहना ॥ १० ॥

अयुग्मराशिगौ चेत्तौ शुक्रेंदू बलिनौ तथा ॥
पश्यतो लग्नमेतौ चेद्वरलाभो भवेत्तदा ॥ ११ ॥

जो वे दोनों चंद्रमा शुक्र बली होकर लग्नको देखते हों और विषम राशि-पर स्थित होवें तो कन्याको अच्छे वरका लाभ कहना ॥ ११ ॥

एवं स्त्रीणां भर्तृलब्धिः पुंग्रहैरवलोकिते ॥
कृष्णपक्षे प्रश्नलग्नाद्युग्मराशौ शशी यदि ॥
पापदृष्टेऽथ वा रंध्रे न संबंधो भवेत्तदा ॥ १२ ॥

ऐसेही पुरुष ग्रहोंकरके लग्न दृष्ट होय तो भी कन्याओंको वरकी प्राप्ति कहना, कृष्णपक्षमें प्रश्नलग्नसे युग्मराशिपर चंद्रमा स्थित हो, पापग्रहासे दृष्ट अथवा सातवें स्थान होवे तो संबंध नहीं हो अर्थात् विवाह नहीं होगा ॥१२॥

पुण्यैर्निमित्तशकुनैः प्रश्नकाले तु मंगलम् ॥
दंपत्योरशुभरेतैरशुभं सर्वतो भवेत ॥ १३ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां विवाहप्रश्नलग्नाध्यायः सप्तविंशतितमः ॥२७॥

प्रश्नसमय शुभशकुन होवे तो मङ्गल जानना और अशुभ शकुन होवे तो वरकन्याओंको अशुभ फल होगा ऐसा कहना ॥ १३ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां विवाहप्रश्नलग्नाध्यायः सप्तविंशतितमः ॥ २७ ॥

पंचांगशुद्धिदिवसे चंद्रताराबलान्विते ॥
विवाहभस्योदये वा कन्यावरणमिष्यते ॥ १ ॥

पञ्चांगशुद्धिके दिन, चंद्रताराका बल होनेके दिन विवाहके नक्षत्र और लग्नविषे कन्यावरण (संबंध) करना चाहिये ॥ १ ॥

भूषणैः पुष्पतांबूलैः फलगंधाक्षतादिभिः ॥
शुक्लांबरैर्गीतवाद्यैर्विप्राशीर्वचनैः सह ॥ २ ॥

कारयेत्कन्यकागेहे वरणं प्रीतिपूर्वकम् ॥
तदा कुर्यात् पिता तस्याः प्रदानं प्रीतिपूर्वकम् ॥ ३ ॥

आभूषण, पुष्प, तांबूल, फल, गन्ध, अक्षत, श्वेतवस्त्र इन्होंसे युक्त हो गीत बाजा आदि मङ्गल तथा ब्राह्मणोंके आशीर्वादोंसे युक्त कन्याके घरमें उत्सव कर कन्याका पिता वरण करै, तब पीछे तिस कन्याका पिता प्रीतिपूर्वक कन्याका प्रदान (वाग्दान) करै ॥ २ ॥ ३ ॥

कुलशीलवयोरूपवित्तविद्यायुताय च ॥
वराय रूपसंपन्नां कन्यां दद्याद्यवीयसीम् ॥ ४ ॥

कुल, शील, अवस्था, रूप, धन, विद्या इन्होंसे युक्त करके वरके वास्ते वरसे छोटी उमरवाली सुरूपवती कन्याको देवे ॥ ४ ॥

संपूज्य प्रार्थयित्वा तां शचीं देवीं गुणाश्रयाम् ॥
त्रैलोक्यसुंदरीं दिव्यां गन्धमाल्यांबरावृताम् ॥ ५ ॥

गुणोंकी आधाररूप, इंद्राणी देवीको पूजकर तिसकी प्रार्थना कर त्रैलोक्य-सुंदरि, दिव्य गन्ध मालाओंवाली, सुंदरवस्त्रोंको धारण किये हुए ॥ ५ ॥

सर्वलक्षणसंयुक्तां सर्वाभरणभूषिताम् ॥
अनर्घ्यमणिमालाभिर्भासयंतीं दिगन्तरान् ॥ ६ ॥

संपूर्ण लक्षणोंसे युक्त,संपूर्ण आभूषणोंसे विभूषित बहुत उत्तम मणियोंकी मालाओंसे दिशाओंको प्रकाशित करती हुई ॥ ६ ॥

विलासिनीसहस्राद्यैः सेव्यमानामहर्निशम् ॥
एवंविधां कुमारीं तां पूजांते प्रार्थयेदिति ॥ ७ ॥

हजारों स्त्रियोंसे सेवित ऐसी कुमारी इंद्राणी देवीको पूजिके अंतमें ऐसी प्रार्थना करै ॥ ७ ॥

देवींद्राणि नमस्तुभ्यं देवेंद्रप्रियभाषिणि ॥
विवाहं भाग्यमारोग्यं पुत्रलाभं च देहि मे ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसं० कन्यावरणाध्यायोऽष्टाविंशतितमः ॥ २८ ॥

हे देवि ! हे इंद्राणि ! हे देवेंद्रप्रियभाषिणी ! तुमको नमस्कार है विवाह, सौभाग्य, आरोग्य, पुत्रलाभ ये मुझको देवो ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां कन्यावर-णाध्यायोऽष्टाविंशतितमः ॥ २८ ॥

अथ विवाहप्रकरणम् ।

युग्मेऽब्दे जन्मतः स्त्रीणां प्रीतिदं पाणिपीडनम् ॥
एतत्पुंसामयुग्मेऽब्दे व्यत्यये नाशनं तयोः ॥ १ ॥

जन्मसे पूरे सम वर्षमें कन्याका विवाह करना शुभ है और वरको अयुग्म (ऊरा)वर्ष होना चाहिये इससे विपरीत होवे तो तिन्होंका नाश होता है॥१॥

माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासाः शुभप्रदाः ॥
मध्यमः कार्तिको मार्गशीर्षो वै निंदिताः परे ॥ २ ॥

माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ इन महीनोंमें विवाह करना शुभ है और कार्त्तिक, मार्गशिर मध्यम हैं अन्यमहीने विवाहमें अशुभ हैं ॥ २ ॥

न कदाचिद्दशर्क्षेषु भानोरार्द्राप्रवेशनात् ॥
विवाहं देवतानां च प्रतिष्ठां चोपनायनम् ॥ ३ ॥

आर्द्रा आदि दश नक्षत्रोंपर सूर्य प्रवेश होवे तब (चातुर्मासमें) कभी विवाह, देवताओंकी प्रतिष्ठा, यज्ञोपवीत ये नहीं करने चाहिये ॥ ३ ॥

नास्तंगते सिते जीवे न तयोर्बालवृद्धयोः ॥
न गुरौ सिंहराशिस्थे सिंहांशकगतेऽपि वा ॥ ४ ॥

बृहस्पति व शुक्रके अस्त होनेमें तथा तिन्होंकी बाल और वृद्ध अवस्था होनेके समय और सिंहके बृहस्पतिविषे अथवा सिंहराशिके नवांशमें बृहस्पति होवे तब भी ये विवाहादिक नहीं करने चाहिये ॥ ४ ॥

पश्चात् प्रागुदितः शुक्रः पंचसप्तदिनं शिशुः ॥
अस्तकाले तु वृद्धत्वं तद्वद्देवगुरोरपि ॥ ५ ॥

पूर्वमें तथा पश्चिममें शुक्र उदय हो तब सात दिन तथा पांच दिन बाल संज्ञक रहता है और अस्त कालसे पांच सात दिन पहले वृद्ध संज्ञा होजाती है, तैसेही बृहस्पतिकी भी संज्ञा जाननी चाहिये ॥ ५ ॥

अप्रबुद्धो हृषीकेशो यावत्तावन्न मंगलम् ॥
उत्सवे वासुदेवस्य दिवसे नान्यमंगलम् ॥ ६ ॥

जबतक देव नहीं उठें तबतक मङ्गल कार्य नहीं करना और देव उठनी एकादशीको विवाहादि मङ्गल करना शुभदायक नहीं है ॥ ६ ॥

न जन्ममासे जन्मर्क्षे न जन्मादिवसेपि च ॥
नाद्यगर्भसुतस्याथ दुहितुर्वा करग्रहम् ॥ ७ ॥

प्रथम संतान (जेठी संतान) का विवाह जन्ममास तथा जन्मनक्षत्र तथा जन्मातिथि विषे नहीं करना चाहिये ॥ ७ ॥

नैवोद्वाहो ज्येष्ठपुत्रीपुत्रयोश्च परस्परम् ।
ज्येष्ठमासजयोरेकज्ज्येष्ठे मासे हि नान्यथा ॥ ८ ॥

ज्येष्ठ वर और जेठी संतानकी कन्या इन दोनोंका तथा ज्येष्ठमासमें उत्पन्न हुए वरकन्याओंका विवाह ज्येष्ठमासमें नहीं करना चाहिये ॥ ८ ॥

उत्पातग्रहणादूर्ध्वं सप्ताहमखिलग्रहे ॥
नाखिले त्रिदिनं चर्क्षं तथा नेष्टमृतुत्रयम् ॥ ९ ॥

वज्रपात आदि उत्पात सर्व ग्रहणके अनंतर सात दिन तक विवाहादि मङ्गलकार्य करना शुभ नहीं है। सर्व ग्रहण नहीं हो तो तीन दिन पीछेतक और ऋतुकालके उत्पातमें भी तीन दिन पीछेतक शुभ कार्य नहीं करना ॥ ९॥

ग्रस्तास्ते त्रिदिनं पूर्वं पश्चात् ग्रस्तोदये तथा ॥
संध्याकाले त्रित्रिदिनं निःशेषे सप्तसप्त च ॥ १० ॥

ग्रस्ताग्रस्त ग्रहणसे पहिले तीन दिन और ग्रस्तोदय ग्रहणसे पीछे तीन दिन और संध्याकालमें उत्पात होय तो तीन २ दिन, बाकी सर्व दिनमें सात २ दिन वर्जित जानो ॥ १० ॥

मासांते पंचदिवसांस्त्यजेद्रिक्तां तथाष्टमीम् ॥
षष्ठीं च परिघाद्यर्द्धं व्यतीपातं सवैधृतिम् ॥ ११ ॥

मासांतमें पांच दिन, रिक्ता तिथि, अष्टमी, षष्ठी, परिघ योगके आदिका आधा भाग, वैधृति, व्यतीपात संपूर्ण, इनको विवाहदिक संपूर्ण कार्योंमें वर्ज देवे ॥ ११ ॥

पौष्णभत्र्युत्तरामैत्रमरुच्चंद्रार्कपैतृभम् ॥
समूलभं विधेर्भं च स्त्रीकरग्रह इष्यते ॥ १२ ॥

रेवती, तीनों उत्तरा, अनुराधा, स्वाति, मृगशिर, हस्त, मघा, रोहिणी, मूल इन नक्षत्रोंमें विवाह करना चाहिये ॥ १२ ॥

विवाहे बलमावश्यं दंपत्योर्गुरुसूर्ययोः ॥
तत्पूजा यत्नतः कार्या दुष्फलप्रदयोस्तयोः ॥ १३ ॥

विवाहमें वर कन्याको सूर्य बृहस्पतिका बल अवश्य देखना चाहिये और जो ये अशुभ फलदायक हों तो यत्न करके इन्होंकी पूजा अवश्य करनी चाहिये ॥ १३ ॥

गोचरं वा वेधजं चाष्टवर्गरूपजं बलम् ॥
यथोत्तरं बलाधिक्यं स्थूलं गोचरमार्गजम् ॥ १४ ॥

गोचर बल, वेधरहितका बल, अष्टवर्गबल ये सब बल यथोत्तर क्रमसे बलाधिक्य हैं और गोचर मार्गसे स्थूल बल है ॥ १४ ॥

चन्द्रताराबलं वीक्ष्य ग्रहपश्वांगजं बलम् ॥
तिथिरेकगुणा वारो द्विगुणस्त्रिगुणं च भम् ॥ १५ ॥

चन्द्र ताराबल, ग्रहबल, पशुके शकुनका बल तथा अंगस्फुरणका भी बल कहा है। तिथि एकगुणा बल करती है, वार दुगुना बल और नक्षत्र तिगुना बल करता है ॥ १५ ॥

योगश्चतुर्गुणः पंचगुणं तिथ्यर्धसंज्ञकम् ॥
ततो मुहूर्त्तो बलवाँस्ततो लग्नं बलाधिकम् ॥ १६ ॥

योग चार गुना, तिथ्यर्द्ध (करण) पांचगुना बल करता है, तिससे अधिक दुघड़िया मुहूर्त्त, तिससे अधिक बली लग्न है ॥ १६ ॥

ततोऽतिबलिनी होरा द्रेष्काणोतिबली ततः ॥
ततो नवांशो बलवान् द्वादशांशो बली ततः ॥ १७ ॥

तिससे बली होरा, तिससे बली द्रेष्काण है, द्रेष्काणसे बली नवांशक है, नवांशकसे बली द्वादशांश है ॥ १७ ॥

त्रिंशांशो बलवांस्तस्माद्वीक्ष्यते तद्बलाबलम् ॥
शुभयुक्तेक्षिताः शस्ता विवाहेऽखिलराशयः ॥ १८ ॥

द्वादशांशसे बली त्रिंशांश है, ऐसे बलाबल विचारना चाहिये, विवाहमें संपूर्ण राशि शुभग्रहोंसे युक्त और दृष्ट होनेसे शुभदायक होती हैं ॥ १८ ॥

चंद्रार्केज्यादयः पंच यस्य राशेस्तु खेचराः ॥
इष्टास्तच्छुभदं लग्नं चत्वारोऽपि बलान्विताः ॥ १९ ॥

चंद्रमा, सूर्य, बृहस्पति आदि पांच ग्रह जिस राशिके स्वामी हैं, वह लग्न शुभदायक है, और बलान्वित हुए चार ग्रह शुभ होवें वह भी लग्न शुभदायक है ॥ १९ ॥

जामित्रशुद्ध्येकविंशन्महादोषविवर्जितम् ॥
एकविंशतिदोषाणां नामरूपफलानि च ॥ २० ॥
पितामहोक्तान्यावीक्ष्य वक्ष्ये तानि समासतः ॥
पंचांगशुद्धिरहितो दोषस्त्वाद्यः प्रकीर्तितः ॥ २१ ॥

यामित्र दोषकी शुद्धि करना और इक्कीस महादोषोंको वर्ज देवे तिन इक्कीस दोषोंके नाम रूप फलको ब्रह्माजीसे कहे हुएको यहां संक्षेपमात्रसे कहते हैं। पंचांगशुद्धि नहीं होना यह प्रथम दोष है ॥ २० ॥ २१ ॥

उदयास्तशुद्धिहीनो द्वितीयः सूर्यसंक्रमः ॥
तृतीयः पापषड्वर्गो भृगुः षष्ठे कुजोऽष्टमे ॥ २२ ॥
गडांतकर्मरीरिःफषडष्टेंदुश्च संग्रहः ॥
दंपत्योरष्टमं लग्नं राशिर्विषघटीभवः ॥ २३ ॥
दुर्मुहूर्तो वारदोषः खार्जुरीकः समांघ्रिजः ॥
ग्रहणोत्पातभं क्रूरविद्धर्क्षं क्रूरसंयुतम् ॥ २४ ॥
कुनवांशो महापातो वैधृतिश्चैकविंशतिः ॥
तिथिवारर्क्षयोगानां करणस्य च मेलनम् ॥ २५ ॥
पंचांगमस्य संशुद्धिः पंचांगं समुदाहृतम् ॥
यस्मिन्पंचांगदोषोस्ति तस्मिल्लँग्नं निरर्थकम् ॥ २६ ॥

उदयास्तशुद्धिहीन यह दूसरा दोष है, सूर्यसंक्रम ३, पाप षड्वर्ग ४, छठे घर शुक्र हो यह ५ दोष हैं। आठवें मंगल हो यह ६ दोष है, गंडांत दोष ७, कर्त्तरी योग ८, और १२।६।८ इन घरोंमें चंद्रमा हो यह ९, दोष है और स्त्रीपुरुषका अष्टमलग्न १०, संग्रह दोष ११, राशिदोष १२, विषघटी १३, दुष्ट मुहूर्त १४, वारदोष १५, खार्जुरीक समांघ्रिज अर्थात् एकार्गल दोष १६, ग्रहणनक्षत्र तथा उत्पातका नक्षत्र १७, पापग्रहवेध १८, पापग्रहयुक्त १९, दुष्टनवांशक २०, वैधृति तथा व्यतीपात ये २१ इक्कीस महादोष कहे हैं। तहां तिथि १ वार २ नक्षत्र ३ योग ४ करण ५ इन्होंका मेल करना इन्होंकी शुद्धि देखना यह पंचांग कहाता है। जिसमें पंचांगदोष हो उस दिन विवाह लग्न करना निरर्थक है " यह एक पंचांग दोषका लक्षण कहा और बाकी रहे २० दोषोंके लक्षण कहते हैं " ॥ २२-२६ ॥

लग्नलग्नांशकौ स्वस्वपतिना वीक्षितौ शुभौ ॥
न चेद्वान्योन्यपतिना शुभमित्रेण वा तथा ॥ २७ ॥
वरस्य मृत्युः परमो लग्नद्यूननवांशकौ ॥
नैवं तैर्वीक्षितयुतौ मृत्युर्वध्वाः करग्रहे ॥ २८ ॥

लग्न और लग्नका नवांशक ये दोनों अपने २ स्वामीसे दृष्ट होवें तथा युक्त होवें तो शुभ है अथवा आपसमें परस्पर पतिसे तथा शुभ मित्र ग्रहसे दृष्टयुक्त

होवें तोभी शुभ है, और लग्न तथा लग्नसे सप्तम घर तथा इन घरोंके नवांशकोंके स्वामी लग्न तथा सप्तम घरको देखते नहीं हों और दृष्टिभी नहीं करते हों तथा इनके शुभ मित्रभी दृष्टि नहीं करते होवें तो उस लग्नमें विवाह किया जाय तो वरकी तथा कन्याकी मृत्यु होती है । लग्नकी शुद्धि नहीं होनेसे वरकी मृत्यु और सप्तमकी शुद्धि नहीं होनेसे कन्याकी मृत्यु होती है, ऐसे यह उदयास्त शुद्धि रहित दोषका लक्षण है ॥ २७ ॥ २८ ॥

त्याज्या सूर्यस्य संक्रांतिः पूर्वतः परतः सदा ॥
विवाहादिषु कार्येषु नाड्यः षोडशषोडश ॥ २९ ॥

सूर्यकी संक्रांति अक उससे १६ घडी पहली और १६ घडी पीछेकी त्याग देनी चाहिये यह विवाहादिकोंमें अशुभ कही हैं, यह संक्रांति दोषका लक्षण है॥२९

त्रिंशद्भागात्मकं लग्नं होरा तस्यार्धमुच्यते ॥
लग्नत्रिभागो द्रेष्काणो नवमांशो नवांशकः ॥ ३० ॥

लग्न तीस अंशका होता है तिसका आधा भाग, (अंश) को होरा कहते हैं। लग्नके तीसरे भागकी द्रेष्काण संज्ञा है, लग्नके नवमांशको नवांशक कहते हैं ॥ ३० ॥

द्वादशांशो द्वादशांशस्त्रिशांशस्त्रिंशदंशकः ॥
सिंहस्याधिपतिर्भानुश्चंद्रः कर्कटकेश्वरः ॥ ३१ ॥

बारहवें अंश करलेनेको द्वादशांश त्रिंशांश तीसवेही अंशका होता है इनके देखनेकी विधि आगे चक्रमें स्पष्ट लिखते हैं। सिंहका स्वामी सूर्य और कर्कका स्वामी चंद्रमा है ॥ ३१ ॥

मेषवृश्चिकयोर्भौमः कन्यामिथुनयोर्बुधः ॥
धनुर्मीनद्वयोर्मंत्री शुक्रो वृषतुलेश्वरः ॥ ३२ ॥

मेष और वृश्चिकका मालिक मंगल है, कन्या और मिथुनका बुध, धनु और मीनका स्वामी बृहस्पति, वृष और तुलाका स्वामी शुक्र है ॥ ३२ ॥

शनिर्मकरकुंभेश इत्येते राशिनायकाः ॥
होरेनविध्वोरोजराशौ समभे चन्द्रसूर्ययोः ॥ ३३ ॥

मकर कुंभका स्वामी शनि है ऐसे ये राशियोंके स्वामी कहे हैं तहां विषम राशिमें पहले १५ अंशतक सूर्यकी होरा, पीछे चंद्रमाकी होरा और समराशिमें पहले चंद्रमाकी पीछे सूर्यकी होरा होनी है ॥ ३३ ॥

होराचक्रम् ।

विषमराशिः	मे.	मि.	सिं.	तु.	ध.	कुं.
	१५ र.	१५ र.	१५ र.	१५ र.	१५ र.	१५ र.
	३० चं.	३० चं.	३० चं.	३० चं.	३० चं.	३० चं.
समराशिः	वृ.	कर्क	कन्या	वृश्चि.	म.	मी.
	१५ च.	१५ चं.	१५ चं.	१५ चं.	१५ चं.	१५ चं
	३० सू.	३० सू.	३० सू.	३० सू.	३० सू.	३० सू.

स्युर्द्रेष्काणे लग्नपंचनंदाराशीश्वराः क्रमात् ॥
आरभ्य लग्नराशेस्तु द्वादशांशेश्वराः क्रमात् ॥ ३४ ॥

राशिके १० अंशतक लग्नस्वामी फिर २० अंशतक लग्नसे ५ घरका स्वामी फिर ३० अंशतक लग्नसे ९ घरके स्वामीका द्रेष्काण होता है ऐसा क्रम जानना और लग्न राशिसे लेकर द्वादशांश अर्थात् २ ॥ अंशका पति ग्रह यथाक्रमसे जानना जैसे मेषमें २॥ अंशतक मंगलका, फिर ५ अंशतक शुक्रका द्वादशांश है ॥ ३४ ॥

अथ द्रेष्काणचक्रम्।

ल.	मे.	वृ.	मि.	कर्क.	सिं.	कन्या	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
१०अं.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१०श.	१२श.	१२गु.
१०अं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१०श.	११श.	१२गु.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.
१०अं.	९ गु.	१०श.	११श.	१२गु.	१ मं.	२ शु.	३ बु	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.

कुजार्कीज्यज्ञशुक्राणां बाणेष्वष्टाद्रिमार्गणाः ॥
भागाः स्युर्विषमे ते तु समराशौ विपर्ययात् ॥ ३५ ॥

राशिके ५ अंशों तक मङ्गल, फिर ५ अंशोंतक शनि, फिर ८ अंशोंतक बृहस्पति, फिर ७ अंशोंतक बुध,फिर ५ अंशोतक शुक्र ये विषमराशिमें त्रिंशांशपति होते हैं और समराशिमें इतनेही अंशोंके क्रमसे विपर्यय होते हैं अर्थात् शुक्र, बुध, गुरु, शनि, मंगल ये त्रिंशांशपति होते हैं ॥ ३५ ॥

अथ त्रिंशांशचक्रम् ।

अंश विषमराशित्रिंशांशः						समराशित्रिंशांशः					
मे	मि.	सिं.	तु.	ध.	कुं.	वृ.	कर्क.	कन्या	वृश्चि	म.	मी.
५ मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	५ शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.
५ श.	श.	श.	श.	श.	श.	७ बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.
८ गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	८ गु.	गु.	गु.	गु.	गु.	गु.
७ बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	बु.	५ श.	श.	श.	श.	श.	श.
५ शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	शु.	५ मं.	मं.	मं.	मं.	मं.	मं.

भृगुः षष्ठाह्वयो दोषो लग्नात्षष्ठगते सिते ॥
उच्चगे शुभसंयुक्ते तल्लग्नं सर्वदा त्यजेत् ॥ ३६ ॥

लग्नसे छठे स्थान राहु होवे वह भृगु षष्ठाह्वयनामक दोष होता है वह लग्न उच्चग्रहसे युक्त तथा शुभग्रहसे युक्त हो तो भी सर्वथा त्याग देना चाहिये ३६

कुजाष्टमे महादोषो लग्नादष्टमगे कुजे ॥
शुभत्रययुतं लग्नं त्यजेत्तुंगगते यदि ॥ ३७ ॥

लग्नसे आठवें स्थान मंगल हो वह भी महादोष कहा है वह लग्न तीन शुभग्रहोंसे युक्त तथा उच्चग्रहसे युक्त हो तो भी त्याग देना चाहिये ॥ ३७ ॥

पूर्णानंदाख्ययोस्तिथ्योः संधिर्नाडीद्वयं सदा ॥
गंडांतं मृत्युदं जन्म यात्रोद्वाहव्रतादिषु ॥ ३८ ॥

पूर्णा नन्दा इन तिथियोंकी सन्धिमें दो घड़ी अर्थात् पूर्णिमाके अन्तकी एक घड़ी और प्रतिपदाकी आदिकी १ घडी गण्डान्त कही है वह जन्म, यात्रा, विवाह आदिकोंमें मृत्युदायक जाननी, पंचमी आदि सब पूर्णा और सम्पूर्ण नन्दा तिथियोंकी घटी जानलेनी ॥ ३८ ॥

कुलीरसिंहयोः कीटचापयोर्मीनमेषयोः ॥
गंडान्तमंतरालं स्याद्घटिकार्धं मृतिप्रदम् ॥ ३९ ॥

और कर्क, सिंह, वृश्चिक, धन, मीन, मेष इन लग्नोंकी सन्धिकी गण्डान्त संज्ञक जाननी वहभी मृत्युकारक है ॥ ३९ ॥

सार्पेन्द्रपौष्णभेष्वंत्यं नाडीयुग्मं तथैव च ॥
तदग्रभेष्वाद्यपादभानां गंडांतसंज्ञिकाः ॥ ४० ॥

और आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवती इन्होंकी अन्तकी दो घडी और इनसे अगले नक्षत्रोंके प्रथमचरणोंकी दो घडी ऐसे ये नक्षत्रोंकी ४ घड़ी गण्डान्त-संज्ञक हैं ॥ ४० ॥

उग्रं च संधित्रितयं गंडांतद्वितयं महत् ॥
मृत्युप्रदं जन्मयानविवाहस्थापनादिषु ॥ ४१ ॥

ऐसे यह तीन प्रकारका गंडांत दारुण खराब है। यह जन्म, यात्रा, विवाह इन्होंमें अशुभ कहा है ॥ ४१ ॥

"लग्नस्य पृष्ठाग्रगयोरसाध्वोः सा कर्तरी स्यादृजुवक्रगत्योः ॥
तावेव शीघ्रं यदि वक्रचारौ नो कर्तरीति न्यगदन्मुनींद्रः ॥४२॥

लग्नसे बारहवें स्थान मार्गी कोई क्रूर ग्रह होवे और दूसरे स्थानमें वक्रगतिवाला कोई क्रूरग्रह होय तो कर्त्तरी नामक अशुभ योग होता है। यदि वे दोनों ग्रह शीघ्र गतिवाले तथा वक्रगतिही होवें तो कर्त्तरी योग नहीं होता, ऐसा यह वसिष्ठजी मुनिका मत है ॥ ४२ ॥"

लग्नाभिमुखयोः पार्श्वग्रहयोरुभयस्थयोः ॥
सा कर्तरीति विज्ञेया दंपत्योर्मृतिकर्तरी ॥ ४३ ॥

लग्नसे आगे पीछे दोनों बराबरोंमें पापग्रह होवें वह कर्त्तरीयोग है यह स्त्रीपुरुषकी मृत्यु करता है ॥ ४३ ॥

अपि सौम्यग्रहैर्युक्तं गुणैः सर्वैः समन्वितम् ॥
व्ययाष्टरिपुगे चंद्रे लग्नदोषः स संज्ञितः ॥ ४४ ॥

और सौम्य ग्रहोंसे युक्त तथा सब गुणोंसे युक्त लग्न हो तो भी कर्त्तरी योगमें विवाह नहीं करना और १२।८।६ चन्द्रमा हो तो भी लग्नमें दोष कहा है ॥ ४४ ॥

तल्लग्नं वर्जयेद्यत्नाज्जीवशुक्रसमान्वितम् ॥
उच्चगे नीचगे वापि मित्रगे शत्रुराशिगे ॥ ४५ ॥

वह लग्न बृहस्पति शुक्रसे युक्त होय तौ भी यत्नसे वर्ज देना चाहिये, उच्चका हो अथवा नीच ग्रहसे युक्त मित्रराशिका अथवा शत्रुराशिका कैसाही चन्द्रमा हो परन्तु इन स्थानोंमें वर्ज देना चाहिये ॥ ४५ ॥

अपि सर्वगुणोपेतं दंपत्योर्निधनप्रदम् ॥
शशांके पापसंयुक्ते दोषः संग्रहसंज्ञकः ॥ ४६ ॥

जो सब गुणोंसे युक्त लग्न हो तो भी स्त्री पुरुषोंकी मृत्यु करता है और चन्द्रमा पापग्रहोंसे युक्त हो वह संग्रह दोष कहा है ॥ ४६ ॥

तस्मिन्संग्रहदोषे तद्विवाहं नैव कारयेत् ॥
सूर्येण संयुते चंद्रे दारिद्र्यं भवति ध्रुवम् ॥ ४७ ॥

तिस संग्रह दोषमें विवाह नहीं करना सूर्यके साथ चन्द्रमा हो तो निश्चय दारिद्र्य हो ॥ ४७ ॥

कुजेन मरणं व्याधिर्बुधेन त्वनपत्यता ॥
दौर्भाग्यं गुरुणा चैव सापत्न्यं भार्गवेन तु ॥ ४८ ॥

मंगलका साथ हो तो मरण वा रोग, बुधका साथ हो तो सन्तान नहीं हो,बृहस्पतिका साथ हो तो दुर्भाग्य,शुक्रका साथ हो तो शत्रुका दुःख हो४८

प्रव्रज्या रविपुत्रेण राहुणा कलहः सदा ॥
केतुना संयुते चंद्रे नित्यं कष्टं दरिद्रता ॥ ४९ ॥

शनिका साथ हो तो संन्यास धारण हो, राहुका साथ हो तो कलह, केतुके साथ चन्द्रमा हो तो सदा कष्ट दरिद्रता होवे ॥ ४९ ॥

पापद्वययुते चन्द्रे दंपत्योर्मरणं भवेत् ॥
पापग्रहयुते चन्द्रे नीचस्थे राहुराशिगे ॥ ५० ॥

दो पापग्रहोंसे युक्त चन्द्रमा हो तो कन्या वरकी मृत्यु होवे, चन्द्रमा पापग्रहोंसे युक्त हो, नीचका हो, राहुकी राशिपर हो तो ॥ ५० ॥

दोषायनं भवेल्लग्नं दंपत्योर्मरणप्रदम् ॥
स्वक्षेत्रगः स्वोच्चगो वा मित्रग्रहगतो विधुः ॥ ५१ ॥

वह लग्न दोषोंका स्थान हो जाता है, स्त्री पुरुषकी मृत्यु करता है और अपने क्षेत्रमें चन्द्रमा हो तथा अपनी उच्चराशिका अथवा अपने मित्रके घरमें हो तो ॥ ५१ ॥

युतिदोषाय न भवेद्दंपत्योः श्रेयसे तदा ॥
दंपत्योः षष्ठगं लग्नं त्वष्टमो राशिरेव च ॥ ५२ ॥
यदि लग्नगतः सोपि दंपत्योर्मरणप्रदः ॥
स राशिः शुभयुक्तोऽपि लग्नं वा शुभसंयुतम् ॥ ५३ ॥

युतिदोष नहीं होता, स्त्री पुरुषको शुभदायक है, स्त्री पुरुषके लग्नसे आठवीं राशिका लग्न हो अथवा स्त्री पुरुषकी राशिसे आठवीं राशिका लग्न हो तो स्त्री पुरुषकी मृत्यु होती है, वह राशि तथा लग्न शुभ ग्रहोंसे युक्त हो तोभी अशुभ है ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

लग्नं विवर्जयेद्यत्नात्तदंशांश्च तदीश्वरान् ॥
दंपत्योर्द्वादशं लग्नं राशिर्वा यदि लग्नगम् ॥ ५४ ॥

उस लग्नको यत्नसे वर्ज देवे तिसके नवांश और तिसके स्वामी भी अशुभ होते हैं स्त्री पुरुषकी राशिका लग्न हो अथवा उनके जन्म लग्नसे १२ राशि लग्न होवे तो ॥ ५४ ॥

अर्थहानिस्तयोर्यस्मात्तदंशस्वामिनं त्यजेत् ॥
जन्मराश्युद्गमे चैव जन्मलग्नोदये शुभा ॥ ५५ ॥
तयोरुपचयस्थाने यदा लग्नं गतं शुभम् ॥
खमार्गणा वेदपक्षाः खरामाः शून्यसागराः ॥ ५६ ॥
वार्द्धिचंद्रा रूपदस्राः खरामा व्योमबाहवः ॥
द्विरामाः खाग्नयः शून्यदस्रकुंजरभूमयः ॥ ५७ ॥

द्रव्यकी हानि होती है इसलिये तीन लग्नोंके नवांशकके स्वामी ग्रहोंको लग्नमें त्याग देवे और जन्मकी राशिपर तथा जन्मलग्न पर शुभ ग्रह होवें और तिन्होंसे उपचय स्थानमें (३ । ११ । ५) लग्न हो तो शुभ है यह राशिदोष कहा है । अब विषघटी दोष कहते हैं, अश्विनीनक्षत्रमें ५० घडी, भरणीमें २४, कृत्तिकामें ३०, रोहिणीमें ४०, मृगशिरमें १४, आर्द्रामें २१, पुनर्वसुमें

२०, पुष्यमें २०, आश्लेषामें ३२, मघामें ३०, पूर्वाफा० २०, उत्तराफा० १८ घडी ॥ ५५-५७ ॥

रूपपक्षा व्योमदस्रा वेदचंद्राश्चतुर्दश ॥
शून्यचंद्रा वेदचंद्राः षट्पंच वेदबाहवः ॥ ५८ ॥
शून्यदस्राः शून्यचंद्राश्शून्यचंद्रा गजेंदवः ॥
तर्कचंद्रा वेदपक्षाः खरामाश्चाश्विनीक्रमात् ॥ ५९ ॥

हस्तमें २१, चित्रा २०, स्वाति १४, विशाखामें १४, अनुराधा १०, ज्येष्ठा १४, मूल ५६, पूर्वाषाढ़में २४, उत्तराषाढ़में २०, श्रवण० १०, धनिष्ठामें १०, शतभिषा० १८, पूर्वाभाद्र० १६, उत्तराभा० २४, रेवतीमें ३० घड़ी ऐसे अश्विनी आदि नक्षत्रोंकी ये घड़ी कही हैं ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

आभ्यः पराः स्युश्चतस्रो नाडिका विषसंज्ञिकाः ॥
विवाहादिषु कार्येषु वर्ज्यास्ता विषनाडिकाः ॥ ६० ॥

सो इन घड़ियोंसे आगेकी चार घड़ी विषसंज्ञक हैं, जैसे रेवतीकी ३० घड़ी कही तो तीससे आगे ३४ तक चार घड़ी विषघटी जानों । ऐसी ही सब नक्षत्रोंमें जानलेना यें विषघटी विवाहादिक कार्योंमें वर्जित हैं ॥ ६० ॥

ऋक्षाद्यंतघटीमितं विषमानेन ताडितः ॥
षष्टिभिर्हरते लब्धं पूर्वऋक्षेण योजयेत् ॥ ६१ ॥

जो नक्षत्र परी साठ ६० घड़ीका नहीं होवे तहां ऐसे करना कि नक्षत्रके ध्रुवांककी घाड़ियोंको नक्षत्रके भोगकी घड़ियोंको गुन लेवे फिर साठ ६० का भाग देवे फिर जितनी घड़ी लब्ध हों उतनीके ही उपरांत विषघटी प्राप्त हुई जाननी ॥ ६१ ॥ इति विषघटी ॥

भास्करादिषु वारेषु ये मुहूर्ताश्च निंदिताः ॥
विवाहादिशुभे वर्ज्या अपि लग्नगुणैर्युताः ॥ ६२ ॥

सूर्यादिकवारोंमें जो निन्दित मुहूर्त कहे हैं वे लग्नके गुणोंसे युक्त होवें तौ भी विवाहादिक शुभ कार्योंमें वर्ज देने चाहियें ॥ ६२ ॥

ते वर्ज्या यदि तल्लग्नगुणैर्युक्ताश्च निंदिताः ॥ ६३ ॥

वे वारोंके दुष्टमुहूर्त वर्जन ही योग्य हैं जो वह लग्न गुणोंसे युक्त हो तौ भी वे दुष्ट मुहूर्त तो निन्दित ही कहे हैं ॥ ६३ ॥

वारमध्ये तु ये दोषाः सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥
अपि सर्वगुणोपेतास्ते वर्ज्याः सर्वमंगले ॥ ६४ ॥

और सूर्यवारादिकोंमें क्रमसे जो वार दोष कहे हैं वे संपूर्ण गुणोंसे युक्त हों तौ भी सब मंगलकर्मोंमें वर्ज देने चाहिये ॥ ६४ ॥

एकार्गलः समांघ्रिश्चेत्तत्र लग्नं विवर्जयेत् ॥ ६५ ॥

और खार्जूरिक योग एकार्गल दोषको कहते हैं, वह समांघ्रिज होवे अर्थात् सूर्य चन्द्रमाके योगसे सम अंकमें देखना कहा है उसमें एकार्गल दोष आता होवे तो उस नक्षत्रमें विवाह लग्न नहीं करना ॥ ६५ ॥

अपि शुक्रेज्यसंयुक्ता विषसंयुक्तदुग्धवत् ॥
ग्रहणोत्पातभं त्याज्यं मंगलेषु त्रिधाऽशुभम् ॥ ६६ ॥

तहां शुक्र बृहस्पतिसे युक्त लग्न हो तौ भी विषसे मिले हुए दूधकी तरह त्याज्य हो जाता है और ग्रहणका नक्षत्र तथा आकाश भूकम्प आदि तीन प्रकारके उत्पातके नक्षत्रको भी त्याग देवे ॥ ६६ ॥

यावच्चरणकं भुक्तं शेषं च दग्धकाष्ठवत् ॥
मंगलेषु त्यजेत्क्रूरं विद्धं भं क्रूरसंयुतम् ॥ ६७ ॥

और विवाह आदि मङ्गलमें क्रूर ग्रहसे विद्ध हुए तथा क्रूर ग्रहसे युक्त हुए नक्षत्रको त्याग देवे, एक चरण भोगा तो तो भी शेषको भी दग्धकाष्ठकी समान जानना ॥ ६७ ॥

अखिलर्क्षं पंचगव्यं सुराबिंदुयुतं तथा ॥
पादमेव शुभैर्विद्धमशुभं नैव कृत्स्नभम् ॥ ६८ ॥

मांगलिक कामोंमें एक चरणगत विद्ध होनेसे सम्पूर्ण नक्षत्र ऐसे त्याज्य हो जाते हैं कि जैसे मदिराकी बूंद लगनेसे पंचगव्य अशुद्ध हो जाता है और शुभग्रहका वेध चरणगत ही अशुद्ध होता है, सम्पूर्ण नक्षत्रका वेध नहीं होसकता ॥ ६८ ॥

क्रूरविद्धयुतं धिष्ण्यं निखिलं चैव पादतः ॥
तुलामिथुनकन्यांशं धनुरंशैश्च संयुताः ॥ ६९ ॥
एते नवांशाः संग्राह्या अन्ये तु कुनवांशकाः ॥
कुनवांशकलग्नं यत्त्याज्यं सर्वगुणान्वितम् ॥ ७० ॥

क्रूर नक्षत्रका चरण गत वेध तथा क्रूर ग्रहका योगसे सम्पूर्ण ही नक्षत्र अशुभ होता है और तुला, मिथुन, कन्या, धनु इनके नवांशक शुभ कहे हैं और अन्य कुनवांशक हैं। कुनवांशकका लग्न सब गुणोंसे युक्त हो तौ भी त्याग देना चाहिये ॥ ६९ ॥ ७० ॥

यस्मान्दिने महापातस्ताद्दिनं वर्जयेद्बुधः ॥
अपि सर्वगुणोपेतं दंपत्योर्मृत्युदं यतः ॥ ७१ ॥

जिसदिन व्यतीपात योग हो वह दिन त्यागदेना चाहिये वह दिन सर्व गुणोंसे युक्त हो तौभी स्त्री पुरुषकी मृत्यु करनेवाला है ॥ ७१ ॥

अनुक्ताः स्वल्पदोषाः स्युर्विद्युन्नीहारवृष्टयः ॥
प्रत्यर्कपरिवेषेंद्रचापांबुघनगर्जनम् ॥ ७२ ॥

और बिजली पडना, बर्फ ओले पडना इत्यादिक विना कहे हुए स्वल्प दोष हैं तथा सूर्यके सन्मुख बादलमें दूसरा सूर्य देखना, मंडल, मेघगर्जना, इंद्रधनुष ॥ ७२ ॥

एवमाद्यास्ततस्तेषां व्यवस्था क्रियतेऽधुना ॥
अकाले संभवंत्येते विद्युन्नीहारवृष्टयः ॥ ७३ ॥
प्रत्यर्कपरिवेषेंद्रचापाभ्रघनयोर्यदि ॥
दोषाय मंगले नूनमदोषायैव कालजाः ॥ ७४ ॥

इत्यादि दोष हैं उनकी व्यवस्था करते हैं; ये बिजली आदि उत्पात, धमर पडना, दूसरा सूर्य तथा सूर्यके मंडल दीखना, इंद्रधनुष दीखना, मेघगर्जना ये उत्पात वर्षाकालके विना अकालमें होवें तो विवाहादिक मंगलमें निश्चय दोष है और कालमें होवें तो कुछ दोष नहीं है ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

बृहस्पतिः केंद्रगतः शुक्रो वा यदि वा बुधः ॥
एकोऽपि दोषाविलयं करोत्येव सुशोभनम् ॥ ७५ ॥

बृहस्पति अथवा शुक्र, बुध, एक भी कोई केंद्रमें होय तो अनेक दोषोंको नष्ट करता है, शुभ फल होता है ॥ ७५ ॥

तिर्यक्पंचोर्ध्वगाः पंच रेखे द्वे द्वे च कोणयोः ॥
द्वितीयं शंभुकोणेऽग्निभचक्रं तत्र विन्यसेत् ॥ ७६ ॥

पांच रेखा तिरछी और पांच रेखा ऊपरको खींचे, दो दो रेखा कोणोंमें खींचनी, फिर ईशानकोणमें जो दो रेखा हैं तहां कृत्तिका नक्षत्र धरना और सभी नक्षत्र यथाक्रमसे लिखने ॥ ७६ ॥

भान्यतः साभिजित्येकरेखा खेटेन विद्धभम् ॥
पुरतः पृष्ठतोर्काद्या दिनर्क्षं लत्तयंति च ॥ ७७ ॥

अभिजित् सहित संपूर्ण नक्षत्र लिखने, पीछे एक रेखापर दो ग्रहोंके नक्षत्र आजावें वह वेध होता है; ऐसा यह वेधदोष कहा है । और सूर्य आदि ग्रह आगेके तथा पीछेके नक्षत्रको ताडित करते हैं वह लत्तादोष होता है उसका क्रम कहते हैं ॥ ७७ ॥

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि ॥
संलत्तयन्तेऽर्कशनीज्यभौमा सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात् ॥ ७८ ॥

बुध, राहु, पूर्ण चंद्रमा, शुक्र ये अपने पीछेके नक्षत्रोंको यथाक्रमसे सातवां, नवमां, बाईसवाँ, पांचवां नक्षत्रको ताडित करते हैं जैसे अश्विनीपर राहु होवे तो आश्लेषाको ताडित करेगा और सूर्य शनि बृहस्पति मंगल ये आगेके नक्षत्रको यथाक्रमसे १२ । ८ । ६ । ३ इनको ताडित करेंगे । जैसे सूर्य अश्विनीपर हो तो अपने आगेके बारहवें नक्षत्र उत्तराफाल्गुनीको ताडित करेगा शनि ८ को ताडित करेगा ऐसे यथाक्रम जानो ॥ ७८ ॥

सौराष्ट्रशाल्वदेशेषु लत्तितं भं विवर्जयेत् ॥
कलिंगवंगदेशेषु पातितं भमुपग्रहम् ॥ ७९ ॥

सौराष्ट्र व शाल्वदेशमें लत्तादोष वर्जित है और कलिंग तथा बंगालादेशमें पातदोष वर्जित है और उपग्रह दोष ॥ ७९ ॥

बाह्लिके कुरुदेशे च यस्मिन्देशे न दूषणम् ॥
तिथयो मासदग्धाख्या दग्धलग्नानि तान्यपि ॥ ८० ॥

बाह्लिक तथा कुरुदेशमें वर्जित है, तहां ही दोष है और मास, दग्धा तिथि, तथा दग्धलग्न ॥ ८० ॥

मध्यदेशे विवर्ज्याणि न दूष्याणीतरेषु च ॥
पंग्वंधकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः ॥ ८१ ॥

इनको मध्यदेशमें वर्जदेवे, अन्य जगह दोष नहीं है और पंगु, अंधा, काणा, लग्न मासशून्य, राशि ॥ ८१ ॥

गौडमालवयोस्त्याज्याश्चान्यदेशे न गर्हिताः ॥
दोषदुष्टः सदा काले वर्जनीयः प्रयत्नतः ॥ ८२ ॥

ये गौड तथा मालवा देशमें त्याज्य हैं, अन्यजगह दोष नहीं है, दोषसे दूषित हुआ समय सदा यत्नसे वर्जदेना चाहिये ॥ ८२ ॥

अपि भूरिगुणोऽन्यार्थे दोषाल्पत्वं गुणोदयः ॥
परित्यज्य महादोषाञ्छेषयोर्गुणदोषयोः ॥ ८३ ॥

और कहीं बहुत गुण होवे तथा दोष थोडा होवे तहां गुण दोषोंके महान् दोषोंको त्याग कर ॥ ८३ ॥

गुणाधिकः स्वल्पदोषः सकलो मंगलप्रदः ॥
दोषो न प्रभवत्येको गुणानां परिसंचये ॥ ८४ ॥

गुण अधिक रहैं और दोष थोडे रहजावें तो वह मुहूर्त्त संपूर्ण मंगलदायक है, बहुतगुणोंके बीच एक दोष अपना बल नहीं कर सकता ॥ ८४ ॥

एको यथा तोयबिंदुरुदार्चिर्षि हुताशने ॥
एवं सञ्चिन्त्य गणितशास्त्रोक्तं लग्नमानयेत् ॥ ८५ ॥

जैसे एकही जलकी बूंद बहुत बढीहुई अग्निको नहीं बुझासकती तैसे ही गणितशास्त्रको लग्नका बलाबल देखके विचार करना चाहिये ॥ ८५ ॥

तल्लग्नं जलयंत्रेण दद्याज्ज्योतिषिकोत्तमः ॥
षडंगुलमितोत्सेधं द्वादशांगुलमायतम् ॥ ८६ ॥
कुर्यात्कपालवत्ताम्रपात्रं तद्दशभिः पलैः ॥
पूर्णं षष्टिर्जलपलैः षष्टिर्मज्जति वासरे ॥ ८७ ॥

उत्तमज्योतिषी जलयंत्रसे घटी बनाकर लग्नका निश्चय करै, छह अंगुल ऊंचा और बारह अंगुल विस्तारवाला दशपल (४० तोले) तांबाका कपालसरीखा पात्र बनावे जो कि साठपल (२४० तोले) जलसे भरजावे ऐसे पात्रको जलमें गेरनेसे अहोरात्रमें ६० वार जलमें डूबेगा ॥ ८६ ॥ ८७ ॥

माषमात्रत्र्यंशयुतं स्वर्णवृत्तशलाकया ॥
चतुर्भिरंगुलैरापस्तथा विद्धं परिस्फुटम् ॥ ८८ ॥

तहां सोनाकी शलाईसे उडदप्रमाण छिद्रका स्थान बनावे तहां बीचमें छिद्र करै और चार अंगुल ऊपरतक जल भरदेना ॥ ८८ ॥

कार्येणाभ्यधिकः षड्भिः पलैस्ताम्रस्य भाजनम् ॥
द्वादशं मुखविष्कंभ उत्सेधः षड्भिरंगुलैः ॥ ८९ ॥
स्वर्णमासेन वै कृत्वा चतुरंगुलकात्मकः ॥
मध्यभागे तथा विद्धा नाडिका घटिका स्मृता ॥ ९० ॥

और छह पल प्रमाणका भी ताम्रपात्र बनता है, उसमें बारह अंगुलका विस्तार करना, छह अंगुल ऊंचा करना, चार अंगुल प्रमाण बीचमें सुवर्णका मासा लगावे, मध्यभागमें जलकी नाडी बींधे वह घटिकायंत्र जानो॥८९॥९०॥

ताम्रपात्रे जलैः पूर्णे मृत्पात्रे वाथ वा शुभे ॥
गंधपुष्पाक्षतैः सार्द्धैरलंकृत्य प्रयत्नतः ॥ ९१ ॥
तंदुलस्थे स्वर्णयुते वस्त्रयुग्मेन वेष्टिते ॥
मंडलार्द्धोदयं वीक्ष्य रवेस्तत्र विनिःक्षिपेत् ॥ ९२ ॥

फिर जलसे भरे हुए तांबाके पात्रमें अथवा मिट्टीके पात्रमें गंधपुष्पादिकोंसे पूजन कर शोभित कर तंदुल सुवर्णसे युक्त कर दो वस्त्रोंसे आच्छादित कर (ऐसे जलके भरे हुए पात्रमें) इस घटीयंत्रको आधा सूर्योदय होनेके समय छोड देवे ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

मंत्रेणानेन पूर्वोक्तलक्षणं यंत्रमुत्तमम् ॥
मुख्यं त्वमसि यंत्राणां ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ॥ ९३ ॥
भाव्याभाव्याय दंपत्योः कालसाधनकारणम् ।
द्वादशांगुलकं प्रोक्तमिति शंकुप्रमाणकम् ॥ ९४ ॥

पूर्वोक्त लक्षणवाले तिस यंत्रको इस मन्त्रसे छोडे " तुम सब यंत्रोंके बीच मुख्य हो, पहले ब्रह्माजीने ये वरकन्याके सुखदुःखके वास्ते कालसाधनके कारण कहे हो " और यह यंत्र नहीं बने तो बारह अंगुलका शंकु बनाकर इष्टका निश्चय करना ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

अन्ययंत्रप्रयोगा ये दुर्लभाः कालसाधने ॥
एवं सुलग्ने दंपत्योः कारयेत्सम्यगीक्षणम् ॥ ९५ ॥

अन्य यन्त्रोंके प्रयोग इष्टसाधनमें दुर्लभ कहे हैं ऐसे सुंदरलग्नमें वरकन्याका विवाह करना चाहिये ॥ ९५ ॥

हस्तोच्छ्रितां चतुर्हस्तैश्चतुरस्रां समंततः ॥
स्तंभैश्चतुर्भिः श्लक्ष्णैर्वा वामभागे स्वसद्मनः ॥ ९६ ॥

तहां एक हाथ ऊंचे चौकटी चार सुंदर स्तंभोंसे शोभित वेदी घरकी बाँयीतर्फ बनानी चाहिये ॥ ९६ ॥

समंडलं चतुर्दिक्षु सोपानैरतिशोभनम् ॥
प्रागुदक्प्रवणारंभास्तंभा हयशुकादिभिः ॥ ९७ ॥

चारों दिशाओंमें मण्डल परिधियोंकरके शोभित बनाने चाहियें पूर्व और उत्तरकी तर्फ मण्डपका विस्तार करना, स्तंभोंपर अश्व, तोते आदि चित्रोंकी शोभा करनी ॥ ९७ ॥

विचित्रितां चित्रकुंभैर्विविधैस्तोरणांकुरैः ॥
शृंगारपुष्पनिचयैर्वर्णकैः समलंकृताम् ॥ ९८ ॥
विप्राशीर्वचनैः पुण्यस्त्रीभिर्दीपैर्मनोरमाम् ॥
वादित्रनृत्यगीताद्यैर्हृदयानंदिनीं शुभाम् ॥ ९९ ॥

विचित्र कलशोंकरके शोभित और अनेक प्रकारकी तोरण, अंकुर, मङ्गलीक पूर्णकुंभ पुष्पोंके समूह तथा सुन्दर रङ्गोंकरके शोभित, ब्राह्मणोंके पवित्र आशीर्वादोंसे युक्त, सौभाग्यवती स्त्रियोंके गीतोंसे शोभित, दीपकोंकी पंक्तियोंसे मनोहर, बाजा नृत्य गीत आदिकोंसे हृदयको आनंद देनेवाली शुभवेदी बनानी चाहिये ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

एवंविधां तामारोहेन्मिथुनं साग्निवेदकम् ॥
त्रिषडायगताः पापाः षष्ठाष्टमं विना विधुः ॥ १०० ॥

ऐसी तिस वेदीके पास अग्नि और वेदकी साक्षीसे विवाह विधि करना। विवाह समय पापग्रह ३ । ६ । ११ । घरमें होवे, चंद्रमा छठे आठवें नहीं होवे तो ॥ १०० ॥

कुर्वंत्यायुर्धनारोग्यं पुत्रपौत्रसमन्विताः ॥
त्रिकोणकेंद्रखत्र्याये शुभं कुर्वंति खेचराः ॥ १०१ ॥

आयु, धन, आरोग्य पुत्रपौत्रोंकी समृद्धि करते हैं और ९ । ५ । १० । ३ । ११ इन घरोंमें सब ग्रह शुभफल करते हैं ॥ १०१ ॥

द्यूनकेंद्रभगं शुक्रं हित्वा पुत्रधनान्वितान् ॥
धनात्रिबंधुतनयधर्मखायेषु चन्द्रमाः ॥ १०२ ॥

और सातवें घरविना अन्यकेंद्रमें शुक्र शुभ है, पुत्र धनवती कन्या होती है और २ । ३ । ४ । ५ । ९ । १० । ११ । इन घरोंमें चंद्रमा शुभ है ॥ १०२ ॥

करोति सुतसौभाग्यभोगयुक्तां विवाहिताम् ॥
अस्तगा नीचगाः शत्रुराशिगाश्च पराजिताः ॥ १०३ ॥

विवाहिता कन्याको पुत्रवती व सौभाग्य भोगवती करता है और अस्त हुए नीचराशिके शत्रुकी राशिमें प्राप्त हुए ग्रह पराजित (हारे हुए) हैं ॥ १०३ ॥

नाशक्तास्ते फलं दातुं दानमश्रोत्रिये यथा ॥
गुरुरेकोऽपि लग्नस्थः सकलं दोषसंचयम् ॥ १०४ ॥
विनाशयति घर्मांशुरुदितस्तिमिरं यथा ॥
एकोऽपि लग्नगः काव्यो बुधो वा यदि लग्नगः ॥ १०५ ॥

वे इसप्रकार फल देनेको समर्थ नहीं हैं कि जैसे मूर्ख ब्राह्मणको दान देनेका फल नहीं है, अकेलाभी गुरु लग्नमें स्थित हो तो संपूर्ण दोषोंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे सूर्य अंधेरेको नष्ट करता है और लग्नमें प्राप्त हुआ अकेला शुक्र अथवा बुध ॥ १०४ ॥ १०५ ॥

नाशयत्याखिलान्दोषांस्तूलराशिमिवानलः ॥
गुरुरेकोऽपि केन्द्रस्थः शुक्रो वा यदि वा बुधः ॥ १०६ ॥

संपूर्ण दोषोंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे रुईकी राशिको अग्नि नष्ट करदेवे, अकेला बृहस्पति वा बुध तथा शुक्र केंद्रमें होवे तो ॥ १०६ ॥

दोषसंघान्निहंत्येव केसरीवेभसंहतिम् ॥
दोषाणां शतकं हांत बलवान् केंद्रगो बुधः ॥ १०७ ॥
शुक्रोऽपहाय वै द्यूनं द्विगुणं लक्षमंगिराः ॥
लग्नदोषाश्च दोषा ये दोषा षड्वर्गजाश्च ये ॥ १०८ ॥

दोषोंके समूहाको ऐसे नष्ट करता है जैसे सिंह हाथियोंके समूहको नष्ट कर देता है तैसे ही बलवान् केंद्रमें प्राप्त हुआ बुध सैकडों दोषोंको नष्ट करता है, शुक्र सातवें घरके बिना अन्यकेंद्रमें होवे तो बुधसे दूना शुभ फल करता है। और बृहस्पति लाख दोषोंको नष्ट करता है, जो लग्नके दोष हैं और षड्वर्गसे उत्पन्न हुए दोष हैं ॥ १०७ ॥ १०८ ॥

हंति ताँल्लग्नगो जीवो मेघसंघमिवानिलः ॥
केंद्रत्रिकोणगे जीवे शुक्रो वा यदि वा बुधः ॥ १०९ ॥

तिन सब दोषोंको लग्नमें प्राप्त हुआ बृहस्पति ऐसे नष्ट करता है कि जैसे बादलोंके समूहको वायु खंडित करदेती है। बृहस्पति अथवा शुक्र तथा बुध केंद्रमें तथा नवमें पांचवें घरमें होवे तो ॥ १०९ ॥

दोषा विनाशमायांति पापानीव हरिस्मृतेः ॥
गुरुर्बली त्रिकोणस्थः सर्वदोषविनाशकृत् ॥ ११० ॥

सब दोष ऐसे नष्ट होजाते हैं कि जैसे विष्णुके स्मरण करनेसे पाप नष्ट होजाते हैं । बली गुरु नवमें पांचवें घरमें होय तो संपूर्ण दोषोंको नष्ट करता है ॥ ११० ॥

निहंति निखिलं पापं प्रणाममिव शूलिनः ॥
मुहूर्तपापषड्वगकुनवांशग्रहोत्थिताः ॥ १११ ॥

जैसे शिवजीको प्रणाम करनेसे संपूर्ण पाप नष्ट होते हैं तैसे मुहूर्त्त दोष, पापषड्वर्ग, कुनवांशक ग्रह इनसे उत्पन्न हुए दोष ॥ १११ ॥

ये दोषास्तान्निहंत्येव यत्रैकादशगः शशी ॥
नाशयंत्यखिलान्दोषान्यत्रैकादशगो रविः ॥ ११२ ॥

तिन संपूर्ण दोषोंको लग्नसे ग्यारहवें स्थानसे प्राप्त हुआ चंद्रमा दूर करता है अथवा ग्यारहवें स्थानमें प्राप्त हुआ सूर्य भी संपूर्ण दोषोंको नष्ट करता है ॥ ११२ ॥

गंगायाः स्नानतो भक्त्या सर्वपापानिवाचिरात् ॥
वायूपसूर्यनीहारमेघगर्जनसंभवाः ॥ ११३ ॥
दोषा नाशं ययुः सर्वे केन्द्रस्थाने बृहस्पतौ ॥
ये दोषा मासदग्धास्तिथिलग्नसमुद्भवाः ॥ ११४ ॥

और वायु, प्रतिसूर्य, धूम, रज, मेघगर्जना इत्यादि दोष केंद्रस्थानमें बृहस्पति होनेसे ऐसे नष्ट होजाते हैं कि जैसे भक्तिसे गङ्गाजीमें स्नान करनेसे शीघ्रही पाप नष्ट होजाते हैं और जो मासदग्ध, तिथिदग्ध तथा लग्नदग्ध आदि दोष हैं ॥ ११३ ॥ ११४ ॥

ते सर्वे विलयं यांति केंद्रस्थाने बृहस्पतौ ॥
बलवान् केंद्रगो जीवः परिवेषोत्थदोषहा ॥ ११५ ॥

वे संपूर्ण केंद्रस्थानमें बृहस्पति प्राप्त होनेसे नष्ट होते हैं और केंद्रमें प्राप्त हुआ बृहस्पति सूर्यमंडल आदि उत्पात दोषको नष्ट करता है ॥ ११५ ॥

एकादशस्थः शुक्रो वा बलवाञ्छुभवीक्षितः ॥
त्रिविधोत्पातजान् दोषान् हंति केंद्रगतो गुरुः ॥ ११६ ॥

ग्यारहवें स्थानमें प्राप्त हुआ शुभग्रहसे दृष्ट बलवान् शुक्र वा केंद्रगत बृहस्पति तीन प्रकारके उत्पातसे उत्पन्न हुए दोषोंको नष्ट करता है ॥ ११६ ॥

स्थानादिबलसंपूर्णः पिनाकी त्रिपुरं यथा ॥
लग्नलग्नांशसंभूतान् बलवान्केंद्रगो गुरुः ॥ ११७ ॥

स्थानादि बलसे पूर्ण हुआ बलवान् तथा केंद्रमें प्राप्त हुआ बृहस्पति लग्न और लग्नके नवांशकसे उत्पन्न हुए दोषोंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे शिवजीने त्रिपुर भस्म किया था ॥ ११७ ॥

भस्मीकरोति तान्दोषानिंधनानीव पावकः ॥
अब्दायनर्तुमासोत्था ये दोषा लग्नसंभवाः ॥
सर्वे ते विलयं यांति केंद्रस्थाने बृहस्पतौ ॥ ११८ ॥

और केंद्रस्थानमें बृहस्पति होवे तो वर्ष, अयन, ऋतु, मास, लग्न इनसे उत्पन्न हुए दोष ऐसे नष्ट होजाते हैं कि जैसे अग्नि इंधनको भस्म करदेती है ॥ ११८ ॥

उक्तानुक्ताश्च ये दोषास्तान्निहंति बली गुरुः ॥
केंद्रसंस्थः सितो वापि भुजंगं गरुडो यथा ॥ ११९ ॥

केंद्रमें स्थित हुआ बली गुरु अथवा शुक्र कहे हुए अथवा विना कहे हुए छोटे मोटे दोषोंको ऐसे नष्ट कर देता है कि जैसे गरुड सर्पको नष्ट करताहै ११९

वर्गोत्तमगते लग्ने सर्वे दोषा लयं ययुः ॥
परमाक्षरविज्ञाने कर्माणीव न संशयः ॥ १२० ॥

लग्न वर्गोत्तममें प्राप्त होवे तो सब दोष ऐसे नष्ट होजावें कि जैसे ब्रह्मज्ञानसे कर्मवासना नष्ट होजाती है ॥ १२० ॥

दुःस्थानस्थग्रहकृताः पापखेटसमुद्भवाः ॥
ते सर्वे लयमायांति केन्द्रस्थाने बृहस्पतौ ॥ १२१ ॥

दुष्ट स्थानमें स्थित हुए ग्रहोंके किये हुए दोष तथा पापग्रहोंके किये हुए सब दोष केंद्रस्थानमें बृहस्पति स्थित होनेसे नष्ट होजाते हैं ॥ १२१ ॥

उच्चस्थो गुरुरेकोऽपि लग्नगो दोषसंचयम् ॥
हंति दोषान् हरिदिने चोपवासव्रतं यथा ॥ १२२ ॥

उच्चराशिपर स्थित हुआ बृहस्पति अकेला ही जो लग्नमें प्राप्त होय तो दोषोंके समूहोंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे एकादशीका व्रत करनेसे पाप नष्ट होजाते हैं ॥ १२२ ॥

अष्टधा राशिकूटं च स्त्रीदूरगणराशयः ॥
राशशियोनिवर्णाख्यशुद्धाश्चेत् पुत्रपौत्रदाः ॥ १२३ ॥

आठप्रकारका राशिकूट स्त्रीदूर, गणराशि, राशिस्वामी, योनि, वर्ण ये शुद्ध होवें तो पुत्र पौत्रदायक कहे हैं ॥ १२३ ॥

एकराशौ पृथग् धिष्ण्ये दंपत्योः पाणिपीडनम् ॥
उत्तमं मध्यम भिन्नराश्यैकर्क्षजयोस्तयोः ॥ १२४ ॥

एकराशि हों और जुदा २ नक्षत्र हो तो कन्या वरका विवाह करना (योग्य है) उत्तम है और राशि जुदी २ हो नक्षत्र एक ही हो तो मध्यम जानना ॥ १२४ ॥

एकर्क्षे त्वेकराशौ च विवाहः प्राणहानिदः ॥
स्त्रीधिष्ण्यादाद्यनवके स्त्रीदूरमतिनिंदितम् ॥ १२५ ॥

और एक ही नक्षत्र तथा एक ही राशि हो तो विवाह करनेमें प्राणहानि होती है, स्त्रीके नक्षत्रसे नव नक्षत्रोंके भीतर ही पुरुषका नक्षत्र होय तो वह स्त्री दूर, अति निंदित है ॥ १२५ ॥

द्वितीयं मध्यमं श्रेष्ठं तृतीये नवके भृशम् ॥
तिस्रः पूर्वोत्तरा धातृयाम्यमाहेशतारकाः ॥ १२६ ॥

और उसमें आगेके नव ९ नक्षत्रोंमें द्वितीय नवकमें पुरुषका नक्षत्र हो तो मध्यम फल जानना । तिसके आगेके नव नक्षत्रोंमें हो तो अत्यंत शुभफल जानना । और तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी ॥ १२६ ॥

इति मर्त्यगणो ज्ञेयः स्यादमर्त्यगणः परः ॥
हयादित्यर्कवाय्विज्यमित्रेन्दुविष्णु चान्त्यभम् ॥ १२७ ॥

ये मनुष्यगण जानने और अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, स्वाति, पुष्य, अनुराधा, मृगशिर, श्रवण, रेवती देवतागण हैं ॥ १२७ ॥

रक्षोगणः पितृत्वाष्ट्रद्विदैवार्नींद्रतारकाः ॥
वसुतोयेशमूलाहितारकाभिर्युतोऽनलः ॥ १२८ ॥

माघ, चित्रा, विशाखा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, आश्लेषा, कृत्तिका ये राक्षसगण है ॥ १२८ ॥

दंपत्योर्जन्मभमेकगणे प्रीतिरनेकधा ॥
मध्यमा देवमर्त्यानां राक्षसानां तयोमृतिः ॥ १२९ ॥

स्त्री पुरुषका एक गण होय तो अनेक प्रकार उत्तम प्रीति रहै, देवता तथा मनुष्यकी मध्यम प्रीति रहे । राक्षस तथा देवगणका कलह रहे । राक्षस और मनुष्यगण होय तो दोनोंकी मृत्यु हो ॥ १२९ ॥

मृत्युः षष्ठाष्टके पच नवमे त्वनपत्यता ॥
नेष्टं द्विर्द्वादशेऽन्येषु दंपत्योः प्रीतिरुत्तमा ॥ १३० ॥

स्त्री पुरुषकी राशी परस्पर छठे आठवें होवे तो मृत्यु हो, पांचवें नवमें स्थानपर हो तो सन्तान नहीं हो और परस्पर दूसरे बारहवें राशि होवे

ती भी शुभ नहीं है, अन्यराशि शुभ है। अन्यराशियोंमें स्त्री पुरुषकी उत्तम प्रीति रहती है ॥ १३० ॥

एकाधिपे मित्रभावे शुभदं पाणिपीडनम् ॥
द्विर्द्वादशे त्रिकोणे च न कदाचित् षडष्टके ॥ १३१ ॥
शत्रुषष्ठाष्टके कुंभकन्ययोर्घटमीनयोः ॥
वामोक्षयोर्नृयुक्कीटभयोः कुंभकुलीरयोः ॥ १३२ ॥
पंचास्यमृगयोश्चैव निंदितं तदतीव तु ॥
सितार्कीज्येंदुभौमास्ते रिपुमित्रसमा रवेः ॥ १३३ ॥

शत्रु षडाष्टकमें प्राप्त तथा अशुभराशियोंको कहते हैं। कुम्भकन्या, कुम्भ-मीन, कन्यावृष, मिथुनवृश्चिक, कुम्भकर्क, सिंहमकर, ये राशि कन्यावरकी परस्पर होवें तो अत्यन्त निन्दित हैं और शुक्र शनि सूर्य शत्रु हैं। बृहस्पति चन्द्रमा, मंगल मित्र हैं तथा बुध सम है ॥ १३१ ॥ १३२ ॥ १३३ ॥

इन्दोर्न शत्रुरर्कज्ञौ कुजेज्यभृगुसूर्यजाः ॥
कुजस्य ज्ञोर्कचंद्रेज्याः शुक्रसूर्यसुतौ क्रमात् ॥ १३४ ॥

चन्द्रमाके शत्रु कोई नहीं है, सूर्य बुध मित्र हैं। और मंगल, गुरु शुक्र, सूर्य ये सम हैं। मंगलका बुध शत्रु है। सूर्य, चन्द्र, गुरु ये मित्र हैं। शुक्र शनि सम हैं ॥ १३४ ॥

ज्ञस्येंदुरर्कशुक्रौ च कुजजीवशनैश्चराः ॥
गुरोर्ज्ञशुक्रौ सूर्येन्दुकुजाः स्युर्भास्करात्मजः ॥ १३५ ॥

बुधका चन्द्रमा शत्रु है, सूर्य, शुक्र, मित्र और मंगल, गुरु, शनि ये सम हैं। बृहस्पतिके बुध तथा शुक्र शत्रु हैं। सूर्य, चन्द्रमा, मंगल ये मित्र हैं, शनि सम है ॥ १३५ ॥

शुक्रस्येंदुरवी ज्ञार्कीं कुजदेवशपूजितौ ॥
शनेरर्केन्दुभूपुत्रा ज्ञशुक्रौ देवपूजितः ॥ १३६ ॥

शुक्रके चन्द्रमा सूर्य शत्रु हैं, बुध शनि मित्र और मंगल बृहस्पति सम हैं। शनिके सूर्य, चन्द्रमा और मंगल ये शत्रु हैं; बुध, शुक्र मित्र हैं, बृहस्पति सम है ॥ १३६ ॥ इति० ॥

अथ योनिः।

अश्वेभमेषसर्पाहिश्वोतुमेषोतुमूषकाः ॥
आखुर्गोमहिषव्याघ्रा श्वाद्विड् व्याघ्रो मृगद्वयम् ॥ १३७ ॥

श्वाचः कापिर्बभ्रुयुग्मं कपिसिंहतुरंगमाः ॥
सिंहगोहस्तिनो भानामेषां योनिर्यथाक्रमात् ॥ १३८ ॥

अश्व १ हस्ती २ मेष ३ सर्प ४ सर्प ५ श्वान ६ मार्जार ७ मेष ८ मार्जार ९ मूषक १० मूषक ११ गौ १२ महिष १३ व्याघ्र १४ महिष १५ व्याघ्र १६ मृग १७ मृग १८ श्वान १९ वानर २० नकुल २१ नकुल २२ वानर २३ सिंह २४ अश्व २५ सिंह २६ गौ २७ हस्ती २८ ऐसे ये अश्विनी आदि नक्षत्रोंकी योनि यथाक्रमसे जाननी ॥ १३७ ॥ १३८ ॥

वैरं बभ्रूरंगमेषवानरं सिंहदंतिनम् ॥
गोव्याघ्रमाखुमार्जारं महिषाश्वं च शात्रवम् ॥ १३९ ॥

तहां नकुल सर्पका वैर है, मेष वानरका वैर है, सिंह हस्तीका वैर है, गौ व्याघ्रका और मूषक मार्जार तथा महिष अश्वका वैर है ॥ १३९ ॥ इति॥

अथ वर्णविचारः ।

मीनालिकर्कटा विप्राः क्षत्री मेषो हरिर्धनुः ॥
शूद्रो युग्मं तुलाकुंभौ वैश्यः कन्या वृषो मृगः ॥ १४० ॥

मीन वृश्चिक कर्क ये ब्राह्मणवर्ण हैं, मेष सिंह धनु क्षत्रियवर्ण हैं, मिथुन तुला कुम्भ शूद्रवर्ण हैं, कन्या वृष मकर वैश्यवर्ण हैं ॥ १४० ॥

(नोत्तमासुद्वहेत्कन्यां हीनर्णां वरः सदा ॥
आद्यमध्यान्त्यचरममध्याद्या ह्यश्विनीक्रमात् ॥)
गणयेत्संख्यया चैकनाड्यां मृत्युर्न पार्श्वयोः ॥
प्राजापत्यब्राह्मदैवा विवाहार्षकसंयुताः ॥ १४१ ॥

उत्तमवर्ण कन्यासे हीनवर्णवाले वरको विवाह नहीं करना चाहिये । और अश्विनी आदि नक्षत्रोंकी क्रमसे आद्य मध्य अन्त्य, अन्त्य मध्य आद्य, आद्य मध्य अन्त्य, ऐसे नाड़ी होती हैं तहां एक नाड़ीमें विवाह करे तो मृत्यु होवे । पृथक् नाड़ी रहनेमें कुछ दोष नहीं है । और प्राजापत्य, ब्राह्म, दैव, आर्ष ये विवाह श्रेष्ठ कहे हैं ॥ १४१ ॥

उक्तकाले तु कर्तव्याश्चत्वारः फलदायकाः ॥
आसुरो द्रविणादानात्पैशाचः कन्यकाछलात् ॥ १४२ ॥

ये चार प्रकारके विवाह उक्तकालमें (शुभ मुहूर्तमें) करनेसे अच्छा फल प्राप्त होता है । जो द्रव्य लेकर कन्याका पिता विवाह करै वह आसुरविवाह है । जो वर छलसे कन्याको हर ले जाय वह पैशाच विवाह है ॥ १४२ ॥

राक्षसो युद्धहरणाद्गांधर्वः समयान्मिथः ॥
गांधर्वासुरपैशाचराक्षसाख्यास्तु नोत्तमाः ॥ १४३ ॥

युद्धमें जीतकर कन्याको लेजाय वह राक्षस विवाह, वर कन्या आपसमें बतलाकर विवाह करलें वह गांधर्व विवाह है । गांधर्व, आसुर, पैशाच, राक्षस ये विवाह पहलोंके समान उत्तम नहीं हैं ॥ १४३ ॥

चतुर्थमभिजिल्लग्नमुदयर्क्षात्तु सप्तमम् ॥
गोधूलिकं तदुभयं विवाहे पुत्रपौत्रदम् ॥ १४४ ॥

सूर्यके उदयलग्नसे चौथा लग्न अभिजित् संज्ञक है और सातवां लग्न गोधूलिक संज्ञक है ये दोनों लग्न विवाहमें पुत्र पौत्रदायक हैं ॥ १४४ ॥

प्राच्यानां च कालिंगानां मुख्यं गोधूलिकं स्मृतम् ॥
अभिजित्सर्वदेशेषु मुख्यं दोषविनाशकृत् ॥ १४५ ॥

पूर्ववासी तथा कलिंगदेश निवासी जनोंको गोधूलिक लग्न शुभ कहा है । अभिजित् लग्न सब देशोंमें मुख्य है,सब दोषोंको नष्ट करनेवाला है ॥१४५॥

मध्यंदिनगते भानौ मुहूर्तोऽभिजिताह्वयः ॥
नाशयत्यखिलान्दोषान्पिनाकी त्रिपुरं यथा ॥ १४६ ॥

मध्याह्नसमयमें अभिजित् नामक मुहूर्त्त आता है, वह संपूर्ण दोषोंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे महादेवजीने त्रिपुर दग्ध किया था ॥ १४६ ॥

मध्यंदिनगते भानौ सकलं दोषसंचयम् ॥
करोति दोषमभिजित्तूलराशिमिवानलः ॥ १४७ ॥

मध्याह्नसमयमें प्राप्त हुआ अभिजित् संपूर्ण दोषोंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे रुईकी राशिको अग्नि नष्ट करदेता है ॥ १४७ ॥

हंत्येकश्च महादोषो गुणलक्षमपीह सः ॥
पावने पंचगव्यं तु पूर्णकुंभं सुरालयम् ॥ १४८ ॥

और जो एक भी कोई महान् दोष होवे तो वह लाखों गुणोंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे पवित्र पंचगव्यके कलशको मदिराका कणका अशुद्ध करदेवे ॥ १४८ ॥

पुत्रोद्वाहात्परं पुत्रीविवाहो न ऋतुत्रये ॥
न तयोर्व्रतमुद्वाहान्मंगले नान्यमंगलम् ॥ १४९ ॥

पुत्रके विवाहसे पीछे छह महीनेतक पुत्रीका विवाह नहीं करना, तीन पुत्र पुत्रियोंके विवाहसे पीछे छह महीनोंतक कोई व्रत तथा अन्य मंगल भी नहीं करना चाहिये ॥ १४९ ॥

विवाहश्चैकजन्यानां षण्मासाभ्यंतरे यदि ॥
असंशयं त्रिभिर्वर्षैस्तत्रैका विधवा भवेत् ॥ १५० ॥

एक उदरवाली बहनोंका विवाह छह महीनोंके भीतर होय तो तीन वर्ष भीतर एकजनी विधवा होवे ॥ १५० ॥

प्रत्युद्वाहो नैव कार्यो नैकस्मै दुहितृद्वयम् ॥
न चैकजन्मनोः पुंसोरेकजन्ये तु कन्यके ॥ १५१ ॥

विवाहमें दूसरा विवाह नहीं करना, एक वरके वास्ते दो कन्या साथही नहीं विवाहनी और एक उदरके दो भाइयोंको एक उदरकी दो बहनें नहीं विवाहनी ॥ १५१ ॥

नैवं कदाचिदुद्वाहो नैकदा मुंडनद्वयम् ॥
दिवाजातस्तु पितरं रात्रौ तु जननीं तथा ॥ १५२ ॥
आत्मानं संध्ययोर्हंति नास्ति गंडे विपर्ययः ॥
सुतः सुता वा नियतं श्वशुरं हंति मूलजाः ॥ १५३ ॥

एकवार दो विवाह, एकवार दोनोंका मुंडन नहीं कराना । अब गंडांत जन्मका विचार कहते हैं । दिनमें जन्म होय तो पिताको नष्ट करे, रात्रिमें जन्म होय तो माताको नष्ट करे, संधियोंमें जन्म हो तो आत्माको [आपको] नष्ट करै गंडांत नक्षत्रमें अन्य विपर्यय नहीं है मूलनक्षत्रमें उत्पन्न पुत्री अथवा पुत्र अपने श्वशुरको नष्ट करते हैं ॥ १५२ ॥ १५३ ॥

तदंत्यपादजो नैव तथाश्लेषाद्यपादजः ॥
ज्येष्ठांत्यपादजो ज्येष्ठं हंति बालो न बालिका ॥ १५४ ॥

मूलनक्षत्रके अंत्यचरणमें जन्मे तो दोष नहीं है और आश्लेषाके आद्यचरणमें दोष नहीं है । ज्येष्ठा नक्षत्रके अंत्यचरणमें जन्मा हुआ पुत्र बडे भाईको नष्ट करता है और कन्या जन्मे तो यह दोष नहीं है ॥ १५४ ॥

बालिका मूलऋक्षे तु मातरं पितरं तथा ॥
ऐन्द्री धवाग्रजं हंति देवरं तु द्विदैवजा ॥ १५५ ॥

मूलनक्षत्रमें कन्या जन्मे तो माता पिताको नष्ट करती है और ज्येष्ठा-नक्षत्रमें जन्मे तो अपने ज्येष्ठको नष्ट करती है, विशाखामें जन्मे तो देवरको नष्ट करै ॥ १५५ ॥ इति ॥

स्वस्थे नरे सुखासीने यावत्स्पंदति लोचनम् ॥
तस्य त्रिंशत्तमो भागस्तत्परः परिकीर्तितः ॥ १५६ ॥

स्वस्थसुखसे बैठे हुए मनुष्यकी आंखि झिपैं ऐसा पलसंज्ञक काल है, तिसका तीसवाँ हिस्सा तत्परसंज्ञक कहा है ॥ १५६ ॥

तत्पराच्छतगो भागस्त्रुटिरित्यभिधीयते ॥
त्रुटेः सहस्रगो योंशो लग्नकालः स उच्यते ॥ १५७ ॥
देवोपि तन्न जानाति किं पुनः प्राकृतो जनः ॥
स कालोऽथान्यकालो वा पूर्वकर्मवशाद्भवेत् ॥ १५८ ॥

तत्परसे सौमां हिस्सा त्रुटि है, त्रुटिसे हजारवां हिस्सा लग्नकाल कहा है उसको देवता भी नहीं जाने फिर प्राकृत मनुष्य तो क्या जानसके ? वह लग्नकाल अथवा अन्यकाल पूर्व कर्मवशसे आपही प्राप्त हो जाता है ॥ १५७ ॥ १५८ ॥

निमित्तमात्रं दैवज्ञस्तद्वशान्न शुभाशुभम् ॥
न्यग्रोधखदिराश्वत्थरक्तचंदनवृक्षजाः ॥ १५९ ॥
श्रीखंडागरुदंतोत्थं शुभशंकुमकल्मषम् ॥
द्वादशांगुलमुत्सेधं परिणाहे षडंगुलम् ॥ १६० ॥

तहां ज्योतिषी तो निमित्तमात्र है तिसके वशसे कुछ शुभ अशुभ फल नहीं होता, तहां बड़, खैर, पीपल, लालचंदन, नारियल, अगर इन वृक्षोंका अथवा हस्तीदंतका शुभ पवित्र शंकु बारह अंगुलका ऊंचा और छह अंगुल मोटाईका बनावे ॥ १५९ ॥ १६० ॥

एवं लक्षणसंयुक्तं कल्पयेत्कालसाधने ॥
आरभ्योद्वाहदिवसात्षष्ठे वाप्यष्टमे दिने ॥ १६१ ॥

ऐसे लक्षणयुक्त शंकुको कालसाधनमें विवाहदिनसे छठे दिन वा आठवें दिन बनावे ॥ १६१ ॥

वधूप्रवेशः संपत्त्यै दशमेऽथ समे दिने ॥
द्व्ययनं द्वितयं जन्ममासाग्रादिवसानपि ॥
संत्यज्य प्रतिशुक्रोपि यात्रा वैवाहिकी शुभा ॥ १६२ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां विवाहाध्याय
एकोनत्रिंशत्तमः ॥ २९ ॥

वधूप्रवेश करना दशवें दिन अथवा समदिनमें शुभ है और दोनों अयन वरकन्याके जन्मका मास व दिन सन्मुख शुक्र इनको त्यागकर विवाह कर बहू लानेकी यात्रा शुभ कही है ॥ १६२ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां विवाहाध्याय एकोनत्रिंशत्तमः ॥२९॥

श्रीप्रदं सर्वगीर्वाणस्थापनं चोत्तरायणे ॥
गीर्वाणपूर्वगीर्वाणमंत्रिणोर्दृश्यमानयोः ॥ १ ॥

उत्तरायण सूर्यमें संपूर्ण देवताओंका स्थापन करना शुभ है तथा गुरु शुक्रका उदय होना शुभ है ॥ १ ॥

विचैत्रेष्वेवमासेषु माघादिषु च पचसु ॥
शुक्लपक्षेषु कृष्णेषु तदादि पंचसु स्मृतम् ॥ २ ॥

चैत्रबिना माघ आदि पांच महीनोंमें देवप्रतिष्ठा करनी शुभ है, शुक्लपक्षमें अथवा कृष्णपक्षमें पंचमीतक देवप्रतिष्ठा करनी शुभ है ॥ २ ॥

दिनेषु यस्य देवस्य या तिथिस्तत्र तस्य च ॥
द्वितीयादिद्वयोः पंचम्यादितस्तिसृषु क्रमात् ॥ ३ ॥

जिस देवकी जो तिथि है उसी तिथिको प्रतिष्ठा करनी भी शुभ है और द्वितीया आदि दो तिथि पंचमी आदि तीन तिथि क्रमसे शुभ हैं ॥ ३ ॥

दशम्यादेश्चतसृषु पौर्णमास्यां विशेषतः ॥
त्रिरुत्तरादितिश्वांत्यहस्तत्रयगुरूडुषु ॥ ४ ॥

दशमी आदि चार तिथि तथा पौर्णमासी विशेषतासे शुभ है तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, रेवती, हस्त आदि तीन, पुष्य इन नक्षत्रोंमें ॥ ४ ॥

साश्विधातृजलाधीशहरिमित्रवसुष्वपि ॥
कुजवर्जितवारेषु कर्तुः सूर्यबलप्रदे ॥ ५ ॥

तथा अश्विनी, रोहिणी, शतभिषा, श्रवण, अनुराधा, धनिष्ठा इन नक्षत्रोंमें तथा मंगल बिना अन्य वार कर्त्ताको सूर्य बलदायक होनेमें ॥ ५ ॥

चंद्रताराबलोपेते पूर्वाह्णे शोभने दिने ॥
शुभलग्ने शुभांशे च कर्तुर्न निधनोदये ॥ ६ ॥

चन्द्र ताराबलयुक्त दुपहर पहिले शुभ दिन, शुभ लग्नमें, शुभ नवांशकमें कर्त्ताको अष्टम राशि अष्टम लग्न शुद्ध होने समय ॥ ६ ॥

राशयः सकलाः श्रेष्ठाः शुभग्रहयुतेक्षिताः ॥
शुभग्रहयुते लग्ने शुभग्रहयुतेक्षिते ॥ ७ ॥

सब ही राशि शुभग्रहोंकी दृष्टि होनेसे शुभ कही हैं । शुभ ग्रहसे युक्त तथा लग्न होना चाहिये ॥ ७ ॥

राशिः स्वभावजं हित्वा फलं ग्रहजमाश्रयेत् ॥
अनिष्टफलदः सोपि प्रशस्तफलदः शशी ॥ ८ ॥
सौम्यर्क्षगोधिमित्रेण गुरुणा वा विलोकितः ॥
पंचेष्टिके शुभे लग्ने नैधने शुद्धिसंयुते ॥ ९ ॥

लग्न राशि स्वभावज फलको त्यागकर ग्रहोंसे उत्पन्न हुआ फल करती है और अशुभ चन्द्रमा भी शुभ ग्रहके घरमें हो, मित्रसे वा गुरुसे दृष्ट हो तो शुभदायक है और पंचांग शुद्धियुक्त लग्नमें अष्टम स्थान शुद्ध होनेके समय प्रतिष्ठा करनी शुभ है ॥ ८ ॥ ९ ॥

लग्नस्थाः सूर्यचंद्रारराहुकेत्वर्कसूनवः ॥
कर्तुर्मृत्युप्रदाश्चान्ये धनधान्यसुखप्रदाः ॥ १० ॥

लग्नमें स्थित सूर्य, चन्द्रमा, राहु, केतु, शनि ये कर्त्ताकी मृत्यु करते हैं, अन्य ग्रह धन धान्य सुखदायक हैं ॥ १० ॥

द्वितीये नेष्टदाः पापाः शुभाश्चंद्रश्च वित्तदाः ॥
तृतीये निखिलाः खेटाः पुत्रपौत्रसुखप्रदाः ॥ ११ ॥

दूसरे घर पाप ग्रह शुभ नहीं हैं और शुभ ग्रह तथा चन्द्रमा धनदायक है, तीसरे घर संपूर्ण ग्रह पुत्र पौत्र सुखदायक हैं ॥ ११ ॥

चतुर्थे सुखदाः सौम्याः क्रूराश्चंद्रश्च दुःखदाः ॥
हानिदाः पंचमे क्रूराः सौम्याः पुत्रसुखप्रदाः ॥ १२ ॥

चौथे घर सौम्यग्रह शुभदायक हैं, क्रूर ग्रह और चन्द्रमा दुःखदायक है, पांचवें क्रूरग्रह हानिदायक हैं। शुभ ग्रह पुत्र सुखदायक हैं ॥ १२ ॥

पूर्णः क्षीणः शशी तत्र पुत्रदः पुत्रनाशनः ॥
षष्ठे शुभाः शत्रुदाः स्युः पापाः शत्रुक्षयप्रदाः ॥ १३ ॥

पूर्णचन्द्रमा ५ वें हो तो पुत्रदायक, क्षीण हो तो पुत्रनाशक है, छठे घर शुभ ग्रह शत्रु उत्पन्न करते हैं और पापग्रह शत्रुको नष्ट करते हैं ॥ १३ ॥

पूर्णः क्षीणोऽपि वा चंद्रः षष्ठेऽखिलरिपुक्षयम् ॥
करोति कर्तुरचिरादायुः पुत्रधनप्रदः ॥ १४ ॥

छठे घर चन्द्रमा प्रतिष्ठा करनेवालेके शत्रुओंको शीघ्र ही नष्ट करता है और आयु, पुत्र, धनदायक है ॥ १४ ॥

व्याधिदाः सप्तमे पापाः सौम्याः सौम्यफलप्रदाः ॥
अष्टमस्थानगाः सर्वे कर्तुर्मृत्युप्रदा ग्रहाः ॥ १५ ॥

सातवें घर पापग्रह व्याधिदायक है और शुभ ग्रह शुभफलदायक है। प्रतिष्ठा लग्नसे अष्टमस्थानमें प्राप्त हुए सब ग्रह कर्त्ताकी मृत्यु करते हैं ॥ १५ ॥

धर्मे पापा घ्नंति सौम्याः शुभदाः शुभदः शशी ॥
भंगदाः कर्मगाः पापाः सौम्याश्चंद्रश्च कीर्तिदाः ॥ १६ ॥

नवमें घर पापग्रह अशुभ हैं, शुभ ग्रह और चन्द्रमा शुभदायक हैं। दशवें पापग्रह और चन्द्रमा अशुभ हैं, शुभग्रह कीर्त्तिदायक हैं ॥ १६ ॥

लाभस्थानगताः सर्वे भूरिलाभप्रदा ग्रहाः ॥
व्ययस्थानगताः शश्वद्बहुव्ययकरा ग्रहाः ॥ १७ ॥

लाभस्थानमें प्राप्त हुए सभी ग्रह बहुत लाभदायक हैं, बारहवें घर सभी ग्रह निरंतर बहुत खर्च करवाते हैं ॥ १७ ॥

गुणाधिकतरे लग्ने दोषाल्पत्वतरे यदि ॥
सुराणां स्थापनं तत्र कर्तुरिष्टार्थसिद्धिदम् ॥ १८ ॥

जिस लग्नमें गुण अधिक हों, दोष थोडे होवें तिसमें देवताकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनुष्यके मनोरथ सिद्ध होते हैं ॥ १८ ॥

हंत्यर्थहीना कर्तारं मंत्रहीना तु ऋत्विजम् ॥
श्रियं लक्षणहीना तु न प्रतिष्ठासमो रिपुः ॥ १९ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां सुरप्रतिष्ठाध्यायस्त्रिंशत्तमः ॥ ३० ॥

द्रव्यहीन प्रतिष्ठा यजमानको नष्ट करती है, मन्त्रहीन प्रतिष्ठा आचार्यको नष्ट करती है, लक्षणहीन प्रतिष्ठा लक्ष्मीको नष्ट करती है, इसलिये हीन रही प्रतिष्ठाके समान कोई शत्रु नहीं है ॥ १९ ॥

इति श्रीनारदसंहिताभाषाटीकायां सुरप्रतिष्ठाध्यायस्त्रिंशत्तमः ॥ ३० ॥

अथ वास्तुप्रकरणम् ।

निर्माणे पत्तनग्रामगृहादीनां समासतः ॥
क्षेत्रमादौ परीक्षेत गंधवर्णरसप्लवैः ॥ १ ॥

शहर, ग्राम, घर इनके रचने (चिनने) के समयके संक्षेपमात्रसे पहिले गन्ध, वर्ण, रसप्लव (ढुलाई) इनकरके क्षेत्रकी अर्थात् भूमिस्थलकी शुद्धि करनी चाहिये ॥ १ ॥

मधुपुष्पाम्लपिशितगंधान् विप्रानुपूर्वकम् ॥
सितरक्तेशहरितकृष्णवर्णं यथाक्रमात् ॥ २ ॥

ब्राह्मणके वास्ते मधु (शहद) समान सुगंधिवाली, क्षत्रियोंको पुष्प समान सुगंधिवाली, वैश्यको खट्टी (काँजी) समान सुगंधिवाली, शूद्रको मांससमान सुगंधिवाली भूमि शुभ है । और श्वेत, लाल, हरा, काला ये भूमिके रंग ब्राह्मणादिकोंको यथाक्रमसे शुभ हैं ॥ २ ॥

मधुरं कटुकं तिक्तं कषायश्च रसाः क्रमात् ॥
अत्यंतं वृद्धिदं नॄणामीशानप्रागुदक्प्लवम् ॥ ३ ॥

और मधुर, चर्परा, कडुवा, कसैला ये भूमिके स्वाद ब्राह्मण आदिकोंको शुभ हैं । और जिस पृथ्वीकी ढुलाई ईशान कोण तथा पूर्व व उत्तरकी तर्फ होवे तो सब जातियोंको अत्यन्त वृद्धिदायक जाननी ॥ ३ ॥

अन्यदिक्षु प्लवं तेषां शश्वदत्यंतहानिदम् ॥
तत्र कर्ता हस्तमात्रं खनित्वा तत्र पूरयेत् ॥ ४ ॥

अन्य दिशाओंमें ढुलान रहे तो निरंतर तिन सब जातियोंको अशुभ है । पृथ्वीकी अन्य परीक्षा कहते हैं कि, कर्त्ता पुरुष अपने हाथ प्रमाण भूमिको खोदकर फिर उसही मिट्टीसे उस खड्डेको भरे ॥ ४ ॥

अत्यंतवृद्धिरधिके हीने हानिः समे समम् ॥
तथा निशादौ कृत्वा तु पानीयेन प्रपूरयेत् ॥ ५ ॥

प्रातर्दृष्टे चले वृद्धिः समं पंके व्रणे क्षयः ॥
एवं लक्षणसंयुक्ते क्षेत्रे सम्यक्समीकृते ॥ ६ ॥

जो मिट्टी बढजाय तो घर चिननेवालेकी अत्यन्त वृद्धि रहे, हीन मृत्तिका रहे अर्थात् वह खड्डा नहीं भरे तो हानि हो, समान मृत्तिका रहे तो समान फल जानना और एक हाथ खड्डा खोदकर रात्रिमें पानीसे भरदेवे प्रातःकाल देखे तब जलसे वह गर्त्त कुछ ऊंचा बढा दीखे तो वृद्धि जानना, समान कीच रहे तो समान फल जानना और कीचमें छिद्र दीखे तो क्षयकारक भूमि जानना ऐसे लक्षणसे देखे हुए भूमिस्थलको समान बनालेवे ॥५॥६॥

दिक्साधनाय तन्मध्ये समे मंडलमालिखेत् ॥
पूर्वोक्तक्षणसंयुक्ते तन्मध्ये स्थापयेत्ततः ॥ ७ ॥

फिर दिक्साधन करनेके वास्ते तिस भूमिके मध्यमें समान भागमें मंडल लिखना चाहिये । पूर्वोक्त लग्नमें तहां यंत्रको स्थापित करै ॥ ७ ॥

ततश्छायां स्पृशेद्यत्र वृत्ते पूर्वापराह्णयोः ॥
तत्र कार्यावुभौ बिंदू वृत्ते पूर्वापराविधौ ॥ ८ ॥

फिर जहा दुपहर पहले और दुपहर पीछेकी छाया आती हो तहां छायाकी पिछानके वास्ते पूर्व पश्चिममें दो बिंदु कर देनी ॥ ८ ॥

रेखा या सोत्तरा साध्या तन्मध्येतिमिना स्फुटा ॥
तन्मध्ये तिमिना रेखा कर्तव्या पूर्वपश्चिमा ॥ ९ ॥

इसप्रकार रेखा करके उत्तर दिशाका साधन करना । उत्तर दिशाका दिक्साधन करके तिसके बीच मत्स्यसमान तिरछीसे पूर्वपश्चिमकी तर्फ रेखा खींचनी चाहिये ॥ ९ ॥

तन्मध्यमत्स्यैर्विदिशः साध्या सूचीमुखास्तदा ॥
मध्याद्विनिर्गतैः सूत्रैश्चतुरस्रं लिखेद्बहिः ॥ १० ॥

फिर मध्यमें मत्स्याकार सूईके मुखसदृश बारीक रेखा खींचकर विदिशा (कोणोंका) साधन करना चाहिये, मध्यभागसे निकले हुए सूत्रों करके बाहिर चतुरस्र चौंकूटा स्थल बनावे ॥ १० ॥

चतुरस्रीकृते क्षेत्रे षड्वर्गपरिशोधिते ॥
रेखामार्गे च कर्तव्यं प्राकारं सुमनोहरम् ॥ ११ ॥

फिर चतुरस्र स्थलविषे षड्वर्ग विधिसे शोधन कर रेखामार्गविषे चौगिर्द एक गोलाकार रेखा खींच लेवे ॥ ११ ॥

आयामेषु चतुर्दिक्षु भागादिषु च सत्स्वपि ॥
अष्टाष्टौ च प्रतिदिशं द्वाराणि स्युर्यथाक्रमात् ॥ १२ ॥
प्रदक्षिणक्रमात्तेषाममूनि च फलानि वै ॥
हानिर्नैःस्वं धनप्राप्तिर्नृपपूजामहद्धनम् ॥ १३ ॥

इस विस्तारमें चारों दिशाओंके विभाग करलेना, फिर पूर्व आदि दिशाओंमें आठ २ द्वार यथाक्रमसे बनाने चाहिये । पूर्वदिशामें प्रदक्षिण क्रमसे आठ २ द्वार लगते हैं, तिनके फल कहते हैं (ईशानके समीपही पूर्वके प्रथमभागमें हानि, दूसरे भागमें दरिद्रता, फिर ३ धन प्राप्ति, ४ राज्यसे लाभ, ५ में बड़ा भारी धन लाभ) ॥ १२ ॥ १३ ॥

अतिचौर्यमतिक्रोधो भीतिर्दिशि शचीपतेः ॥
निधनं बंधनं भीतिरर्थाप्तिर्धनवर्द्धनम् ॥ १४ ॥

फिर ६ भागमें अत्यन्त चोरी, ७ में अत्यन्त क्रोध, ८ में भय ये पूर्व दिशामें ८ द्वारोंके फल हैं । और दक्षिण दिशामें यथाक्रमसे मृत्यु १, बन्धन २, भय ३, द्रव्यप्राप्ति ४, द्रव्यवृद्धि ॥ ५ ॥ १४ ॥

अनातंकं व्याधिभयं निःसत्त्वं दक्षिणादिशि ॥
पुत्रहानिः शत्रुवृद्धिर्लक्ष्मीप्राप्तिर्धनागमः ॥ १५ ॥

आरोग्य ६, व्याधिभय ७, दरिद्रता ८ ये फल दक्षिणदिशामें आठ द्वारोंके हैं । और पुत्रहानि १, शत्रुवृद्धि २, लक्ष्मी प्राप्ति ३, धनागम ४ ॥ १५ ॥

सौभाग्यमतिदौर्भाग्यं दुःखं शोकश्च पश्चिमे ॥
कलत्रहानिर्निःसत्त्वं हानिर्धान्यं धनागमः ॥ १६ ॥

सौभाग्य ५, अतिदौर्भाग्य ६, दुःख ७, शोक ८ ये फल पश्चिमदिशामें ८ द्वारोंके हैं । और स्त्रीहानि १, दरिद्रता २, हानि ३, धान्य, ४, धनागम ५, ॥ १६ ॥

संपद्वृद्धिर्महाभीतिरामयो दिशि शीतगोः ॥
एवं गृहादिषु द्वारं विस्ताराद्विगुणोच्छ्रितम् ॥ १७ ॥

संपत्तिकी वृद्धि ६, महाभय ७, रोग ८ ये फल उत्तर दिशामें आठ द्वार करनेके हैं । ऐसे घर आदिकोंमें द्वार करने चाहियें । द्वारकी चौडाईसे दूनी उंचाई करनी शुभ है ॥ १७ ॥

इति प्रदक्षिणं द्वारं फलमीशानकोणतः ॥
मूलद्वारस्य चोक्तानि नान्यत्रैवं वियोजयेत् ॥ १८ ॥

ऐसे ईशानकोणसे दहिने क्रमसे द्वार करनेके सब दिशाओंके फल कहे हैं । मूलद्वारा अर्थात् मुख्य द्वारका यह फल है, खिड़की आदिका फल नहीं है ॥ १८ ॥

पश्चिमे दक्षिणे वापि कपाटं स्थापयेद्गृहे ॥
प्राकारतां क्षितिं कुर्यादेकाशीतिपदं यथा ॥ १९ ॥

वरसे पश्चिमकी तर्फ अथवा दक्षिणकी तर्फ किंवाड़ स्थापन करने और घरमें ८१ पदका वास्तु होता है अर्थात् वास्तुमें ८१ देवते स्थित कहे हैं ॥ १९ ॥

मध्ये नवपदं ब्रह्मस्थानं तदतिनिंदितम् ॥
द्वात्रिंशदंशाः प्राकाराः समीपांशाः समंततः ॥ २० ॥

तहां मध्यमें ९ पद (९ कोष्ठ) ब्रह्मस्थान कहा है वह जगह अतिनिंदित जानो और चारोंतर्फ किलाकी तरह भाग करके बत्तीस अंश (भाग) हैं ॥ २० ॥

पिशाचांशा गृहरांभे दुःखशोकभयप्रदाः ॥
शेषाः स्युर्गृहनिर्माणे पुत्रपौत्रधनप्रदाः ॥ २१ ॥

वे गृहारंभमें पिशाचोंके अंश हैं तिस जगहमें पहिले घर चिनना प्रारंभ करे तो दुःख, शोक, भय हो । अन्य जगह किसी ठौरसे घर चिनना प्रारंभ किया जावे तो पुत्र, पौत्र, धनकी प्राप्ति होय ॥ २१ ॥

शिरस्यवर्त्तिना रेखा दिग्विदिङ्मध्यसंभवाः ॥
ब्रह्मभागपिशाचांशाः शिशूनां यत्र संहतिः ॥ २२ ॥

मध्यमें चली हुई रेखा दिशा और कोणोंमें प्राप्त है तहां वास्तु पुरुषके शिरसे उरली तर्फ रेखा होती है । तहां ब्रह्मभाग और पिशाचांशके शिशुओंके समूहकी स्थिति है ॥ २२ ॥

तत्र तत्र विजानीयाद्वसतो मर्मसंधयः ॥
मर्माणि संधयो नेष्टास्तेष्वेव विनिवेशने ॥ २३ ॥

तहां २ निवास करे तो वास्तुके मर्म और संधि जानना, तहां प्रथम निवास करना अशुभ है ॥ २३ ॥

सौम्यफाल्गुनवैशाखमाघश्रावणकार्तिकाः ॥
मासाः स्युर्गृहनिर्माणे पुत्रारोग्यधनप्रदाः ॥ २४ ॥

मार्गशिर, फाल्गुन, वैशाख, माघ, श्रावण, कार्त्तिक इन महीनोंमें घर चिनवाना प्रारंभ करे तो पुत्र, आरोग्य, धनकी प्राप्ति हो ॥ २४ ॥

अकारादिषु वर्गेषु दिक्षु प्रागादिषु क्रमात् ॥
खगेशौतुहरिश्वाख्यसर्पाखुगजसूकराः ॥ २५ ॥
वर्गेशाः क्रमतो ज्ञेयाः स्ववर्गात्पंचमो रिपुः ॥
स्ववर्गे परमा प्रीतिः कथ्यते गणकोत्तमैः ॥ २६ ॥

पूर्व आदि दिशाओंमें क्रमसे अकरादि वर्गोंविषे गरुड़ १, बिलाव २, सिंह ३, श्वान ४, सर्प ५, मूषक ६, गज ७ और सूकर ८ ये आठ वर्ग पूर्व आदि दिशाओंके स्वामी जानने । तहां अपने वर्गसे पांचवें वर्गको शत्रु जाने ऐसा ज्योतिषी जनोंने कहा है ॥ २५ ॥ २६ ॥

अथान्यप्रकारः ।

स्ववर्ग द्विगुणं कृत्वा परवर्गेण योजयेत् ॥
अष्टभिस्तु हरेद्भागं योऽधिकः स ऋणी भवेत् ॥ २७ ॥

और दूसरा प्रकार यह है कि अपने वर्गको दूना कर परवर्गमें मिला देवे, फिर आठका भाग देना जो अंक बाकी रहे उसको फलरूप जाने । इसी प्रकार पराये वर्गको भी दूना कर अपने वर्गमें मिला ८ का भाग देना, जो अङ्क बँचे सो देखना । इन बँचे हुए अंकोंमें जिसका अंक अधिक बँच जाय वह ऋणी जानना । [यहां घरके वर्गका अंक ऋणी होना ठीक है] ॥ २७ ॥

क्षेत्रफलम् ।

विस्तारगुणितं दैर्घ्यं गृहक्षेत्रफलं भवेत् ॥
तत्पृथक् वसुभिर्भक्तं शेषमायो ध्वजादिकः ॥ २८ ॥

घरकी चौडाईको लम्बाईसे गुणा कर देवे वह क्षेत्रफल होता है, फिर आठका भाग देना बाकी रहा ध्वज आदिक आय जानना ॥ २८ ॥

ध्वजो धूमोऽथ सिंहः श्वा सौरभेयः खरो गजः ॥
ध्वांक्षश्चैव क्रमेणैतदायाष्टकमुदीरितम् ॥ २९ ॥

ध्वज १, धूम, २, सिंह ३, श्वान ४, वृष ५, खर ६, गज ७, ध्वांक्ष ८ ऐसे क्रमसे ये ८ आय कहे हैं ॥ २९ ॥

ब्राह्मणस्य ध्वजो ज्ञेयः सिंहो वै क्षत्रियस्य च ॥
वृषभश्चैव वैश्यस्य सर्वेषां तु गजः स्मृतः ॥ ३० ॥

तहां ब्राह्मणको ध्वज आय शुभ है, क्षत्रियको सिंह शुभ है, वैश्यको वृष शुभ है, गज आय सब वर्णोंको शुभ है ॥ ३० ॥

कीर्त्तिः शोको जयो वैरं धनं निर्धनता सुखम् ॥
रोगश्चैते गृहारंभे ध्वजादीनां फलं क्रमात् ॥ ३१ ॥

और ध्वज १ आय आवे तो कीर्त्ति, धूम २ हो तो शोक, फिर ३ जय, ४ वैर, ५ धन, ६ निर्धनता, ७ सुख, ८ रोग ऐसे इन आठ ध्वज आदिकोंका घरके आरंभमें फल जानना ॥ ३१ ॥

अथ राशिफलम् ।

द्विर्द्वादशं निर्धनाय त्रिकोणं कलहाय च ॥
षडष्टकं मृत्यवे स्याच्छुभदा राशयः परे ॥ ३२ ॥

घरकी राशि व स्वामीकी राशि परस्पर दूसरे बारहवें स्थान हो तो निर्धनता फल कहना, नवमें पांचवें होवे तो कलह कहना, छठे आठवें हो तो मृत्यु कहना, अन्यराशि शुभदायक जाननी ॥ ३२ ॥

सूर्यांगारकवारांशा वैश्वानरभयप्रदाः ॥
इतरे ग्रहवारांशाः सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ३३ ॥

सूर्य तथा मंगलकी राशिके नवांशकमें घर चिनना प्रारंभ करे तो अग्निका भय हो और अन्यवारोंके नवांशकमें करे तो सब कामना सिद्ध होवे ॥३३॥

नभस्यादिषु मासेषु त्रिषु त्रिषु यथक्रमात् ॥
यद्दिङ्मुखं वास्तु पुमान्कुर्यात्तद्दिङ्मुखं गृहम् ॥ ३४ ॥

भाद्रपद आदि तीन २ महीनोंमें पूर्वादि दिशाओंमें वास्तुका मुख रहता है जिस दिशामें वास्तुका मुख हो उसी दिशामें घरका द्वार करना शुभ है॥३४॥

प्रतिकूलमुखो गेहो रोगशोकभयप्रदः ॥
सर्वतोमुखगेहानामेष दोषो न विद्यते ॥ ३५ ॥

इससे विपरीत द्वार लगावे तो रोग,शोक,भय हो और जिन घरोंके चारों तर्फ चौखट लगाई जाती हैं उन घरोंमें यह दोष नहीं होता है ॥ ३५ ॥

मृत्पेटिका स्वर्णरत्नधान्यशैवालसंयुता ॥
गृहमध्ये हस्तमात्रे गर्त्ते न्यासाय विन्यसेत् ॥ ३६ ॥
वास्त्वायामदलं नाभिस्तस्मादध्यर्धंगुलत्रयम् ॥
कुक्षिस्तस्मिन्न्यसेच्छंकुं पुत्रपौत्रप्रवर्द्धनम् ॥ ३७ ॥

मृत्तिकाकी पिटारी, सुवर्ण, रत्न, धान्य, शिवाल इन सबोंको इकट्ठे कर घरके बीच एक हाथ खड्डा खोदकर तिसमें रखदेवे। वास्तुके विस्तारदलमें नाभि है तिस नाभिसे ७ अंगुलतक कुक्षि जानना, तहां शंकु रोपै तो पुत्र, पौत्र, धनकी प्राप्ति हो ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

चतुर्विंशत्त्रयोविंशत्षोडशद्वादशांगुलैः ॥
विप्रादीनां शंकुमानं स्वर्णवस्त्राद्यलंकृतम् ॥ ३८ ॥

चौवीस अंगुल,तेईस अंगुल,सोलह अंगुल,बारह अंगुल ऐसे ब्राह्मण आदि वर्णोंके क्रमसे शंकुका प्रमाण करना चाहिये। सुवर्ण तथा वस्त्रादिकसे शंकुको विभूषित करे ॥ ३८ ॥

खदिरार्जुनशालोत्थं पूगपत्रतरूद्भवम् ॥
रक्तचंदनपालाशरक्तशालविशालजम् ॥ ३९ ॥

खैर, अर्जुन वृक्ष, शाल, सुपारीवृक्ष, तेजपातवृक्ष, लाल चंदन, ढाक, लाल सुन्दर शाल ॥ ३९ ॥

नीपकारं च कुटजं वैणवं बिल्ववृक्षजम् ॥
शंकुं त्रिधा विभज्याथ चतुरस्रं ततः परम् ॥ ४० ॥

कुटज वृक्ष, कदंब वृक्ष, बाँस, बेलवृक्ष इन्होंका शंकु बनाना चाहिये। शंकुमें तीन विभाग कर लेवे, प्रथम (ऊपरी) भाग चौकोण होना चाहिये ॥४०॥

अष्टांशं च तृतीयांशमनस्त्रमृजुमव्रणम् ॥
एवं लक्षणसंयुक्तं परिकल्प्य शुभे दिने ॥ ४१ ॥

दूसरा (मध्यम) भाग आठ कोणका और तीसरा (नीचेवाला) भाग छिद्र रहित सुन्दर गोल होना चाहिये। ऐसे लक्षणसे युक्त शंकु बनाय शुभ दिनमें इष्ट साधनकर गृहारंभ करना ॥ ४१ ॥

व्यर्कारवारलग्नेषु चापे चाष्टमवर्जिते ॥
नैधने शुद्धिसंयुक्ते शुभलग्ने शुभांशके ॥ ४२ ॥

लग्नमें रवि मंगल हो, अष्टमस्थानमें धनु लग्न नहीं हो, अष्टम घरमें कोई अशुभ ग्रह नहीं हो, शुभलग्न तथा शुभराशिका नवांशक होवे ॥ ४२ ॥

शुभेक्षितेऽथ वा युक्ते लग्ने शंकुं विनिःक्षिपेत् ॥
पुण्याहवाचैर्वादित्रैः पुण्यैः पुण्यांगनादिभिः ॥ ४३ ॥

शुभग्रहोंकी दृष्टि हो, शुभग्रहयुक्त हो, ऐसे लग्नमें शंकुको स्थापित करै। पुण्याहवाचन, बाजा, गीत, स्त्रीमंगलगीत इन्होंसे मंगल करना ॥ ४३ ॥

स्वकेंद्रस्थैस्त्रिकोणस्थैः शुभैस्त्र्यायारिगैः परैः ॥
लग्नात्षष्ठायचंद्रेण दैवज्ञार्चनपूर्वकम् ॥ ४४ ॥

शुभग्रह स्वक्षेत्री होकर केंद्र १ । ४ । ७ । १० वें स्थानमें होवे, अथवा ९ । ५ घरमें हो और पापग्रह ३ । ११ । घरमें हो, चंद्रमा ६ तथा ११ होवे ऐसे लग्नमें ज्योतिषीके पूजन पूर्वक घर चिनवाना प्रारंभ करै ॥ ४४ ॥

एकद्वित्रिचतुःशालाः सप्तशालाह्वयाः स्मृताः ॥
ताः पुनः षड्विधाः शालाः प्रत्येकं दशषड्विधाः ॥ ४५ ॥

एक शालासे युक्त घर, दो शाला वा तीन,चार, सात शालाका घर होता है तिनके भी छह भेद हैं सोलहप्रकारके घर होते हैं। तिनके नाम ॥ ४५ ॥

ध्रुव धान्यं जयं नंदं खरं कांतं मनोरमम् ॥
सुमुखं दुर्मखं क्रूरं शत्रुस्वणप्रदं क्षयम् ॥ ४६ ॥
आक्रंदं विपुलाख्यं च विजयं षोडशं गृहम् ॥
गृहाणि षण्णवत्येव तेषां प्रस्तारभेदतः ॥ ४७ ॥

ध्रुव १, धान्य २, जय ३, नंद ४, खर ५, कान्त ६, मनोरम ७, सुमुख ८, दुर्मुख ९, क्रूर १०, शत्रुप्रद ११ स्वर्णप्रद १२,क्षयप्रद १३,आक्रंद १४, विपुल १५ और विजय १६ ऐसे ये सोलह प्रकारके घर होते हैं इनके प्रस्तारके भेदसे ९६ प्रकारके भेद होते हैं ।। ४६ ।। ४७ ।।

गुरोरधो लघुः स्थाप्यः पुरस्तादूर्ध्ववन्न्यसेत् ॥
गुरुभिः पूजयेत्पश्चात्सर्वलब्धाविधिर्विधिः ॥ ४८ ॥

गुरुस्थानके नीचे लघु स्थापित करना तिसके आगे ऊपरके क्रमसे लिखै, फिर बडे छोटे स्थानोंका भेद करना। ऐसे एक घरके छह २ भेद होनेसे ९६ भेद होवेंगे ॥ ४८ ॥

दिक्षु पूर्वादितः शालाध्रुवा भूद्वौ कृता गजाः ॥
शालाध्रुवांकसंयोगः सैको वेश्म ध्रुवादिकम् ॥ ४९ ॥

अब सोलह नामवाले इन घरोंके भेद कहते हैं। पूर्वद्वारवाले मकानका ध्रुवांक १ है। दक्षिणद्वारवाले मकानका ध्रुवांक २ पश्चिमद्वारवाले मकानका ध्रुवांक ४ है। उत्तरद्वारवाले मकानका ध्रुवांक ८ है। इस ध्रुवांकमें १ मिलाकर जितनी संख्या हो वह ध्रुव, धान्यआदि संज्ञवाला मकान जानना। जैसे पूर्व-पश्चिम दो द्वारोंवाला मकान होवे तो पूर्वका ध्रुवांक १ पश्चिमका ४ जोड ५ हुआ, मिलाया ६ हुआ तो यह कांतनामक स्थान जानना ॥ ४९ ॥

स्नानागारं दिशि प्राच्यामाग्नेय्यां पचनालयम् ॥
याम्यायां शयनागारं नैर्ऋत्यां शस्त्रमंदिरम् ॥ ५० ॥

मकानकी पूर्वदिशामें स्नान करनेका स्थान, अग्निकोणमें रसोई पकानेका स्थान, दक्षिणमें सोनेका मकान, नैर्ऋतमें शस्त्रस्थान करना ॥ ५० ॥

एवं कुर्यादिदं स्थानं क्षीरपानाज्यशालिकाः ॥
शय्यामूत्रास्त्रतद्विद्याभोजनामंगलाश्रयाः ॥ ५१ ॥

और दूध, जलपान, घृत इन्होंके स्थान ईशानकोणमें; शय्या, मूत्र, शस्त्र, भोजन इनके स्थान अग्निकोणमें ॥ ५१ ॥

धान्यस्त्रीभोगवित्तं च शृंगारायतनानि च ॥
ईशान्यादिक्रमस्तेषां गृहनिर्माणकं शुभम् ॥ ५२ ॥

धान्य, स्त्रीभोग, धन ये स्थान नैर्ऋतमें, शृंगारादिकके स्थान वायव्य कोणमें ऐसे ईशानादिक कोणोंमें ये भी स्थान कहे हैं ॥ ५२ ॥

एते स्वस्थानशस्तानि स्वस्वायस्वस्वदिश्यपि ॥
प्लक्षोदुंबरचूताख्या निंबस्नुहीविभीतकाः ॥ ५३ ॥

ये अपने २ कर्मविस्तारके योग्य स्थान अपनी २ कोणमें होनेसे शुभ हैं। जैसे अग्निस्थान अग्निकोणमें होना शुभ है और मकानके आगे पिलखन, गूलर, आम, नींब, थोहर, बहेडा ॥ ५३ ॥

ये कंटका दग्धवृक्षा वटाश्वत्थकपित्थकाः ॥
अगस्त्यशिग्रुतालाख्यतिंतिणीकाश्च निंदिताः ॥ ५४ ॥

ये वृक्ष तथा कांटेवाले वृक्ष, जलेहुए वृक्ष, बड, पीपल, कैथ, अगस्तिवृक्ष, सहौंजना वृक्ष, ताडवृक्ष, अमलीवृक्ष ये वृक्ष अत्यन्त निंदित कहे हैं घरके आगे नहीं लाने चाहिये ॥ ५४ ॥

पितृवत्स्वाग्रजं गेहं पश्चिमे दाक्षिणेऽपि वा ॥
गृहपादा गृहस्तंभाः समाः शस्ताश्च नोऽस्समाः ॥ ५५ ॥

पिताका तथा बड़े भाईका घर अपने घरसे पश्चिम तथा दक्षिण दिशामें करना योग्य है, घरके पाद और स्तम्भ समान होने चाहिये ऊंचे नीचे नहीं होने चाहिये ॥ ५५ ॥

नात्युच्छ्रितं नातिनीचं कुड्योत्सेधं यथारुचि ॥
गृहोपरि गृहादीनामेवं सर्वत्र चिंतयेत् ॥ ५६ ॥

भीतोंकी उच्चाई ज्यादे ऊंची नहीं और ज्यादे नीची नहीं करनी, सुन्दर करनी और घरके ऊपर उतनी ही ऊंची भीत उसी जगह द्वार आदि नहीं करने ॥ ५६ ॥

गृहादीनां गृहे स्राव्यं क्रमशो विविधं स्मृतम् ॥
पंचालमानं वैदेहं कौरवं चैव कन्यकाम् ॥ ५७ ॥

घर आदिकोंमें जल गिरनेके पतनाल अनेक विधिसे करने शुभ हैं और पञ्चाल, वैदेह, कुरु, कान्यकुब्ज इन देशोंका मान हस्तादिक कहा हुआ परिमाण ठीक है ॥ ५७ ॥

मागधं शूरसेनं च वंगमेवं क्रमः स्मृतः ॥
तं चतुर्भागविस्तारं संशोधय तदुच्यते ॥ ५८ ॥

मागध, शूरसेन, बंगाला इन्होंके मानसे अपने (मध्यदेशका) मानविस्तार चौगुना शुभ है ॥ ५८ ॥

पंचालमानमतुलमुत्तरोत्तरवृद्धितः ॥
वैदेहादीनि शेषाणि मानानि स्युर्यथाक्रमात् ॥ ५९ ॥

पंचाल देश (पञ्जाब) का मान ठीक अन्यदेशोंके मानसे उत्तरोत्तर बढाकर मान (तोलादिक) लेना चाहिये ॥ ५९ ॥

पंचालमानं सर्वेषां साधारणमतः परम् ॥
अवंतिमानं विप्राणां गांधारं क्षत्रियस्य च ॥ ६० ॥

पांचालदेशका मान साधारणतासे सभी देशोंमें मानना योग्य है और अवन्ती (उज्जैन) का मान ब्राह्मणोंको शुभ है, क्षत्रियको गांधार देश ॥ ६० ॥

कौजन्यमानं वैश्यानां विप्रादीनां यथोत्तरम् ॥
यथोदितजलस्राव्यं द्वित्रिभूमिकवेश्मनः ॥ ६१ ॥

वैश्योंको कौजन्यदेशका मान ग्रहण करना । ब्राह्मण आदिकोंको यथोत्तर

वृद्धिभागसे परिमाण लेना चाहिये । जिस मकानमें दो तीन शाला होवें उसमें जल पडनेका स्थान यथायोग्य करना चाहिये ॥ ६१ ॥

उष्ट्रकुंजरशालानां ध्वजायोऽप्यथवा गजे ॥
पशुशालाश्वशालानां ध्वजायोऽप्यथवा वृषे ॥
द्वारे शय्यासना मंत्रे ध्वजसिंहे वृषाः शुभाः ॥ ६२ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां वास्तुविधानाध्याय
एकत्रिंशत्तमः ॥ ३१ ॥

ऊंट हाथि आदिकोंकी शालामें पूर्वोक्त ध्वज आय अथवा गजसंज्ञक आय रहना शुभ है और गौ आदि पशुओंकी शाला तथा अश्वोंकी शालामें ध्वज अथवा आय शुभ है और शय्या, आसन, मन्त्र इन्होंकी शालाके द्वारमें ध्वज, सिंह, वृष ये आय शुभ कहे हैं ॥ ६२ ॥

इति श्रीनारदीयसं० भाषा०वास्तुविधानाध्याय एकत्रिंशत्तमः ॥ ३१ ॥

वास्तुपूजामहं वक्ष्ये नववेश्मप्रवेशने ॥
हस्तमात्रा लिखेद्रेखा दशपूर्वा दशोत्तराः ॥ १ ॥

अब नवीन घरमें प्रवेश होनेके समय वास्तुपूजाको कहते हैं । एक हस्तप्रमाण वेदीपर दश रेखा पूर्वको और दश रेखा उत्तरको खींचे ॥ १ ॥

गृहमध्ये तण्डुलोपर्य्येकाशीतिपदं भवेत् ॥
पंचोत्तरान्वक्ष्यमाणांश्चत्वरिंशत्सु वा न्यसेत् ॥ २ ॥

फिर तिन कोष्ठोंमें चावल रखकर ८१ कोष्ठ बनावे, तहां पांच और चौतालीस अर्थात् ४९ देवता भीतरके अलग हैं ॥ २ ॥

द्वात्रिंशद्बाह्यतः पूज्यास्तत्रांतःस्थास्त्रयोदश ॥
तेषां स्थानानि नामानि वक्ष्यामि क्रमशोऽधुना ॥ ३ ॥

और बत्तीस देवता बाहिर पूजने चाहियें, तिनके भीतर भी तेरह देवता अलग हैं अब क्रमसे तिनके नामोंको कहेंगे ॥ ३ ॥

ईशानकोणतो बाह्या द्वात्रिंशत्रिदशा अमी ॥
कृपीटयोनिः पर्जन्यो जयंतः पाकशासनः ॥ ४ ॥

ईशानकोणमें ये बत्तीस ३२ बाह्यसंज्ञक देवतायें हैं–अग्नि, पर्जन्य, जयंत, पाकशासन ॥ ४ ॥

सूर्यसत्यो भृशाकाशौ वायुः पूषा च नैर्ऋतः ॥
गृहर्क्षतो दंडधरो गांधर्वो मृगराजकः ॥ ५ ॥

सूर्य, सत्य, भृश, आकाश, वायु, पूषा, नैर्ऋत, दंडधर, गांधर्व, मृगराजक ॥ ५ ॥

मृगः पितृगणाधीशस्ततो दौवारिकाह्वयः ॥
सुग्रीवः पुष्पदंतश्च जलाधीशस्तथासुरः ॥ ६ ॥

मृग, पितरगणाधीश, दौवारिक, सुग्रीव, पुष्पदंतक, जलाधीश, असुर॥६॥

शेषश्च पापो रोगश्च भोगी मुख्यो निशाकरः ॥
सोमः सूर्योऽदितिर्दिती द्वात्रिंशात्रिदशा अमी ॥ ७ ॥

शेष, पाप, रोग, भोगी, मुख्य, निशाकर, सोम, सूर्य, अदिति, दिति ये बत्तीस देवता हैं ॥ ७ ॥

अथेशान्यादिकोणस्थाश्चत्वारस्तत्समीपगाः ॥
आपः सवितृसंज्ञश्च जयो रुद्रः क्रमादमी ॥ ८ ॥

और ईशानआदि कोणोंमें स्थित तिनके समीपके चार देवता ये हैं-आप, सविता, जय, रुद्र ये क्रमसे ४ दिशाओंमें जानने ॥ ८ ॥

मध्ये नव पदो ब्रह्मा तस्याष्टौ च समीपगाः ॥
एकांतराः स्युः प्रागाद्याः परितो ब्रह्मणः स्मृतः ॥ ९ ॥

मध्यमें नव कोष्ठमें ब्रह्मा और तिसके समीप ८ देवता हैं, वे पूर्व आदि दिशाओंमें एक २ के अंतरसे ब्रह्माके चारोंतर्फ स्थित हैं ॥ ९ ॥

अर्यमा सविता चैव विवस्वान्विबुधाधिपः ॥
मित्रोऽथ राजयक्ष्मा च तथा पृथ्वीधराह्वयः ॥ १० ॥

अर्यमा, सविता, विवस्वान्, विबुधाधिप, मित्र, राजयक्ष्मा, पृथ्वीधर ॥ १० ॥

आपवत्सोष्टमः पंचचत्वारिंशत्सुरा अमी ॥
आपश्चैवापवत्सश्च पर्जन्योऽग्निर्दितिः क्रमात् ॥ ११ ॥
पदिकानां च वर्गोयमेवं कोणेष्वशेषतः ॥
तन्मध्ये विंशतिर्बाह्या द्विपदास्तेषु सर्वदा ॥ १२ ॥

आपवत्स ये आठ हैं ऐसे ये सब मिलकर ४९ होते हैं और आप, आप वत्स, पर्जन्य, अग्नि, दिति ये क्रमसे चारोंकोणोंमें रहते हैं ऐसे यह पदिकोंका वर्ग कहाता है, तिनके मध्यमें बीस देवता बाह्य हैं वे सदा द्विपद कहे हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥

अर्यमा च विवस्वांश्च मित्रः पृथ्वीधराह्वयः ॥
ब्रह्मणः परितो दिक्षु चत्वारस्त्रिदशाः स्मृताः ॥ १३ ॥

अर्यमा, विवस्वान्, मित्र, पृथ्वीधर ये ब्रह्मासे चारोंतरफ त्रिपदसंज्ञक कहे हैं ॥ १३ ॥

ब्रह्माणं च तथैकद्वित्रिपदानर्चयेत्सुरान् ॥
वास्तुमंत्रेण वास्तुज्ञो दूर्वादध्यक्षतादिभिः ॥ १४ ॥

सो वहां ब्रह्माको और एकपदिक, द्विपदिक, त्रिपदिक, देवताओंको पूजै । वास्तुको जाननेवाला द्विज वास्तुमंत्रसे दूर्वा, अक्षत, दही आदिकोंसे वास्तुका पूजन करै ॥ १४ ॥

ब्रह्ममंत्रेण वा श्वेतवस्त्रयुग्मं प्रदापयेत् ॥
तांबूलं च ततो दत्वा प्रार्थयेद्वास्तुपूरुषम् ॥ १५ ॥

ब्रह्माके मंत्रसे दो सफेद वस्त्र चढावे और तांबूल चढाकर वास्तुपुरुषकी प्रार्थना करै ॥ १५ ॥

आवाहानदिसर्वोपचारांश्च क्रमशस्तथा ॥
नैवेद्यं विविधान्नेन वाद्याद्यैश्च समर्पयेत् ॥ १६ ॥

आवाहन आदि सम्पूर्ण उपचार क्रमसे करने चाहिये । नैवेद्य अनेक प्रकारके भोजन चढ़ाकर अनेक प्रकारके बाजे बजवाकर समर्पण करै ॥१६॥

वास्तुपूरुष नमस्तेऽस्तु भूशय्याभिरत प्रभो ॥
मद्गृहं धनधान्यादिसमृद्धं कुरु सर्वदा ॥ १७ ॥

भूमिकी शय्यापर अभिरत रहनेवाले हे प्रभो ! तुमको नमस्कार है मेरे घरको सदा धनधान्यसे भरपूर करो ॥ १७ ॥

इति प्रार्थ्य यथाशक्ति दक्षिणामर्चकाय च ॥
दद्यात्तदग्रे विप्रेभ्यो भोजनं च स्वशक्तितः ॥

ऐसे प्रार्थना कर शक्तिके अनुसार पूजन करानेवाले ब्राह्मणको दक्षिणा देवे और तिन देवताओंके सन्मुख बिठाकर श्रद्धाके अनुसार ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ १८ ॥

अनेन विधिना सम्यग्वास्तुपूजां करोति यः ॥
आरोग्यं पुत्रलाभं च धनं धान्यं लभेत सः ॥ १९ ॥

इस विधिसे अच्छे प्रकारसे जो पुरुष वास्तुपूजा करता है वह आरोग्य, पुत्र, धन धान्य इन्होंको प्राप्त होता है ॥ १९ ॥

अकपाटमनाच्छन्नमदत्तबलिभोजनम् ॥
गृहं न प्रविशेदेव विपदामाकरं हि तत् ॥ २० ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां वास्तुलक्षणाध्यायो द्वात्रिंशत्तमः ॥ ३२ ॥

बिना किवाड़ोंवाला, विना बढा हुआ, और जिसमें बलिदान तथा ब्रह्म-भोज्य नहीं हुआ हो ऐसे स्थानमें प्रवेश नहीं करना चाहिये क्योंकि वह विपत्तियोंका खजाना है ॥ २० ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां वास्तुलक्षणाध्यायो द्वात्रिंशत्तमः ॥ ३२ ॥

॥ अथ यात्राप्रकरणम् ॥

अथ यात्रा यथा नृणामभीष्टफलसिद्धये ॥
स्यात्तथा ता प्रवक्ष्यामि सम्यग्विज्ञातजन्मनाम् ॥ १ ॥

जिस प्रकार मनुष्योंको अभीष्ट फलदायी यात्रा होती है तिसको ज्ञानवान् द्विजातियोंके वास्ते अच्छे प्रकारसे कहता हूं ॥ १ ॥

अज्ञातजन्मनां नृणां फलाप्तिर्घुणवर्णवत् ॥
प्रश्नोदयनिमित्ताद्यैस्तेषामपि फलोदयः ॥ २ ॥

और जो अज्ञातजन्मवाले मूर्ख जन हैं तिनको घुणाक्षरन्यायसे कभी सुखकी प्राप्ति होजाती है (घुणाक्षरन्याय यह है कि जैसे घूण लकड़ीको खाता है वहां चिह्न होता है तो कभी दैवयोगसे राम ऐसे अक्षर भी लिखे जाते हैं यह घुणाक्षर न्याय है) तिनको भी शुभ प्रश्नोदय निमित्त आदिकोंसे ही फलका उदय होता है ॥ २ ॥

षष्ठ्यष्टमी द्वादशी च रिक्तामापूर्णिमासु च ॥
यात्रा शुक्लप्रतिपदि निधनायाधनाय च ॥ ३ ॥

षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, रिक्तातिथि, अमावस्या, पूर्णिमा शुक्लपक्षकी

प्रतिपदा इन्होंमें यात्रा करनी मृत्युके वास्ते और निर्धनताके वास्ते कही है ॥ ३ ॥

पौष्णेकेंद्वश्विमित्राग्निहरितिष्यवसूडुषु ॥
नव सप्त पंचायेषु यात्राभीष्टफलप्रदा ॥ ४ ॥

रेवती, हस्त, मृगशिर, अश्विनी, अनुराधा, कृत्तिका, श्रवण, पुष्य, धनिष्ठा इन नक्षत्रोंमें यात्रा करना शुभ है । नवमां, पांचवां, सातवां, ग्यारहवां चन्द्रमा शुभ है ॥ ४ ॥

न मंदेन्दुदिने प्राचीं न व्रजेद्दक्षिणां गुरौ ॥
सितार्कयोर्न प्रतीचीं नोदीचीं ज्ञारयोर्दिने ॥ ५ ॥

अब दिशाशूल बताते हैं—सोम तथा शनिवारको पूर्वदिशामें गमन नहीं करना, बृहस्पतिवारको दक्षिणमें गमन नहीं करना, शुक्र तथा रविवारको पश्चिमको गमन नहीं करना, बुध और मंगलवारको उत्तर दिशामें गमन नहीं करना ॥ ५ ॥

इन्द्रोजपादचतुरास्यार्यमर्क्षाणि पूर्वतः ॥
शूलानि सर्वद्वाराणि मैत्रार्केज्याश्विभानि च ॥ ६ ॥

ज्येष्ठा १, पूर्वाभाद्रपदा २, रोहिणी ३, उत्तराफाल्गुनी ४ ये नक्षत्र यथाक्रमसे पूर्वआदि दिशामें शूलरूप हैं और अनुराधा, हस्त, पुष्य, अश्विनी ये नक्षत्र सब दिशाओंमें शुभ हैं ॥ ६ ॥

क्रमाद्दिग्द्वारभानि स्युः सप्तसप्ताग्निधिष्ण्यतः ॥
वाय्वग्निदिग्गतं दंडं परिघं तु न लंघयेत् ॥ ७ ॥

और कृत्तिका आदि सात २ नक्षत्र पूर्वआदि दिशाओंमें यथाक्रमसे द्विग्द्वार नक्षत्र कहे हैं । और वायु तथा अग्निकोणमें रेखादंड है अर्थात् पूर्वदिग्द्वारि नक्षत्रोंमें उत्तरको गमन करना और दक्षिण पश्चिमकी एकता करनी, परंतु इस वायव्य अग्निकोणकी रेखाको उलंघन नहीं करना । इस परिघमें गमन नहीं करना चाहिये ॥ ७ ॥

---

१ यद्यपि वसिष्ठ संहितामें कृत्तिका नक्षत्रको यात्रामें निकृष्ट बताया है, परन्तु यह भी ऋषिप्रोक्त होनेके कारण ज्योंका त्यों पाठ रखा गया है, विज्ञ ज्योतिषियोंको स्वयं विचारना चाहिये। उक्त संहितामें 'पुनर्वसु' नक्षत्र उत्तम माना गया है, किन्तु यहां उसका उपादान नहीं किया।

आग्नेय्यां पूर्वदिग्धिष्ण्यैर्विदिशश्चैवमेव हि ॥
दिग्राशयस्तु क्रमशो मेषाद्याश्च पुनःपुनः ॥ ८ ॥

और कोणोंमें गमन करना हो तो यह व्यवस्था है कि पूर्वदिग्द्वारि नक्षत्रोंमें अग्निकोणमें गमन करना, फिर इसी क्रमसे दक्षिणदिशाके नक्षत्रोंमें नैर्ऋतमें गमन करना । पश्चिमके नक्षत्रोंमें वायव्यमें गमन करना और उत्तरके नक्षत्रोंमें ईशानको जाना चाहिये । मेषादिक राशि तीन वार आवृत्ति होकर पूर्वादिदिशाओंमें रहती हैं, जैसे १ । ५ । ९ पूर्वमें, २ । ६ । १० दक्षिण, ३ । ७ । ११ पश्चिममें, ४ । ८ । १२ उत्तरमें यही चन्द्रमाका वास है ॥८॥

अथ दिक्स्वामिनः ललाटयोगश्च ।

दिगीशाः सूर्यशुक्रारराह्वार्कीन्दुज्ञसूरयः ॥
दिगीश्वरे ललाटस्थे यातुर्न पुनरागमः ॥ ९ ॥

सूर्य १, शुक्र २, मंगल ३, राहु ४, शनि ५, चन्द्रमा, ६, बुध ७, बृहस्पति ८ ये पूर्व आदि दिशाओंके स्वामी हैं । दिगीश्वर ग्रह ललाट (मस्तक) पर होय तब गमन करनेवालोंका फिर उलटा आगमन नहीं होता ॥ ९ ॥

लग्नस्थो भास्करः प्राच्यां दिशि यातुर्ललाटगः ॥
द्वादशैकादशः शुक्र आग्नेय्यां तु ललाटगः ॥ १० ॥

जैसे कि लग्नमें सूर्य होवे तब पूर्वदिशामें जानेवालेको ललाट योग है और १२ । ११ घर शुक्र हो तब अग्निकोणमें ललाट योग है ॥ १० ॥

दशमस्थो कुजो लग्नाद्याम्यायां तु ललाटगः ॥
नवमोऽष्टमगो राहुर्नैर्ऋत्यां तु ललाटगः ॥ ११ ॥

लग्नसे १० वें घर मंगल हो तब दक्षिणदिशामें और लग्नसे नवमें तथा आठवें राहु होवे तब नैर्ऋत कोणमें ललाट योग है ॥ ११ ॥

लग्नात्सप्तमगः सौरिः प्रतीच्यां तु ललाटगः ॥
षष्ठपंचमगश्चंद्रो वायव्यां तु ललाटगः ॥ १२ ॥

लग्नसे ७ वें शनि हो तब पश्चिमदिशामें ललाट योग है, छठे और पांचवें चन्द्रमा हो तब वायव्य कोणमें ललाटयोग है ॥ १२ ॥

चतुर्थस्थानगः सौम्य उत्तरस्यां ललाटगः ॥
द्वित्रिस्थानगतो जीव ईशान्यां तु ललाटगः ॥ १३ ॥

चौथे स्थान बुध हो तब उत्तर दिशामें ललाटयोग है, लग्नसे २।३ घर बृहस्पति हो तब ईशान कोणमें जानेवालेके मस्तकपर दिगीश्वर है ॥ १३ ॥

ललाटगं तु संत्यज्य जीवितेच्छुर्व्रजेन्नरः ॥
विलोमगो ग्रहो यस्य यात्रालग्नोपगो यदि ॥ १४ ॥

जीवनेकी इच्छावाला मनुष्य इस ललाट योगको त्यागकर गमन करै। राजाको जो ग्रह जन्मलग्नमें नेष्ट हो वह ग्रह यात्रालग्नमें हो तो उस लग्नमें ॥ १४ ॥

तस्य भंगप्रदो राज्ञस्तद्वर्गोऽपि विलग्नगः ॥
रवींद्वयनयोर्यानमनुकूलं शुभप्रदम् ॥ १५ ॥

राजा गमन करै तौ मनोरथ भंग है और उस ग्रहकी राशिका नवांशक भी अशुभ है। और सूर्य चन्द्रमाके अयनके अनुकूल गमन करना शुभ है। जैसे-सूर्य उत्तरायण हो, चन्द्रमा भी उत्तरायण हो तब उत्तर पूर्वमें गमन करना और सूर्य चन्द्रमा दक्षिणायन होवे तब दक्षिण पश्चिममें गमन करना ॥ १५ ॥

तदभावे दिवा रात्रौ यात्रा यातुर्वधोऽन्यथा ॥
मूढे शुक्रे कार्यहानिः प्रतिशुक्रे पराजयः ॥ १६ ॥

और जो सूर्य चंद्रमा भिन्न २ अयनमें होवें तो सूर्यके अयनमें तो दिनमें गमन करना और चंद्रमाके अयनमें रात्रिमें गमन करना इससे अन्यथा गमन करनेवालेका वध होता है। शुक्रास्तमें गमन करे तो कार्यकी हानि हो, शुक्रके सम्मुख गमन करे तो पराजय (हार) होवे ॥ १६ ॥

प्रतिशुक्रकृतं दोषं हंति शुक्रो ग्रहा नहि ॥
वसिष्ठः काश्यपेयोऽत्रिर्भरद्वाजः सगौतमः ॥ १७ ॥

शुक्रके सन्मुख गमनके दोषको शुक्र ही दूर कर सकता है, अन्यग्रह नहीं कर सकते। और वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, भरद्वाज, गौतम ॥ १७ ॥

एतेषां पंचगोत्राणां प्रतिशुक्रो न विद्यते ॥
एकग्रामे विवाहे च दुर्भिक्षे राजविप्लवे ॥ १८ ॥

इन पांच गोत्रवालोंको शुक्रके सन्मुख जानेका दोष नहीं है और एक ग्राम, विवाह, दुर्भिक्ष, राजभंग ॥ १८ ॥

द्विजक्षोभे नृपक्षोभे प्रतिशुक्रो न विद्यते ॥
नीचगोऽरिग्रहस्थो वा वक्रगो वा पराजितः ॥ १९ ॥

ब्राह्मणशाप, राजाका क्रोध इन कामोंमें शुक्रके सन्मुख जानेका दोष नहीं है। नीचराशिपर स्थित,शत्रुके घरमें स्थित,वक्री अथवा पापग्रहोंसे आक्रांत१९

यातुर्भंगप्रदः शुक्रः स्वांशस्थे च जयप्रदः ॥
स्वेष्टलग्नेष्टराशौ वा शत्रुभात्षष्ठगोपि वा ॥ २० ॥

ऐसा शुक्र गमन करनेवालेके मनोरथको नष्ट करता है। स्वेष्टलग्नमें अथवा लग्नसे आठवीं राशिपर अथवा शत्रुकी राशिसे छठी राशिपर शुक्र हो ॥२०॥

तेषामीशस्य राशौ वा यातुर्मृत्युर्न संशयः ॥
जन्मेशाष्टमलग्नेशौ मिथो मित्रव्यवस्थितौ ॥ २१ ॥

अथवा शत्रुओंकी राशि लग्नके स्वामीके घरमें हो तव गमनकरनेवालेकी मृत्यु होती है और जन्मलग्न तथा जन्मलग्नसे आठवें घरका पति इन दोनोंकी आपसमें मित्रता होवे ॥ २१ ॥

जन्मराश्यष्टमर्क्षेषु दोषा नश्यंति भावतः ॥
क्रूरग्रहेक्षितो युक्तो द्विस्वभावोऽपि भंगदः ॥ २२ ॥

फिर वे जन्मलग्नमें तथा आठवें घरमें स्थित होवें तो स्वभावसे ही सब दोष नष्ट होजावे हैं और क्रूरग्रहसे युक्त तथा दृष्ट द्विस्वभाव लग्न कार्यको भंग करता है ॥ २२ ॥

याने शुभैरदृष्टश्च शुभयुक्तेक्षितः शुभः ॥
वस्वंत्यार्द्धादिपंचर्क्षे संग्रहे तृणकाष्ठयोः ॥
याम्यदिग्गमनं शय्या कुर्यान्नो गृहगोपनम् ॥ २३ ॥

गमनसमय वह लग्न शुभग्रहोंसे दृष्ट नहीं हो तो अशुभ है और शुभग्रहोंसे युक्त अथवा दृष्ट हो तो शुभ जानना। और धनिष्ठाका अर्ध आदि, रेवतीपर्यंत पांच नक्षत्र पंचक कहलाते हैं,तिनमें तृण काष्ठ आदिका संग्रह नहीं करना और दक्षिणदिशामें गमन नहीं करना,शय्या नहीं बनानी, घर नहीं छावना २३

जन्मोदये लग्नगते दिग्लग्ने लग्नगोऽपि वा ॥
शुभे चतुर्षु केंद्रेषु याते शत्रुक्षयो भवेत् ॥ २४ ॥

जन्मलग्न शुभग्रहोंसे युक्तहो तिस लग्नमें अथवा दिग्द्वारि लग्नमें तथा शुभ ग्रह चारों केंद्रोंमें प्राप्त होनेके समय गमन करे तो शत्रु नष्ट होवें ॥ २४ ॥

शीर्षोदये लग्नगते दिग्लग्ने लग्नतोऽपि वा ॥
शुभवर्गेऽथ वा लग्ने यातुः शत्रुक्षयो भवेत् ॥ २५ ॥

शीर्षोदय कहिये ५ । ६ । ७ । ८ । ११ ये लग्न होवें अथवा दिग्द्वारि लग्न हो अथवा शुभग्रहकी राशिका लग्न हो तब गमन करनेवालेके शत्रुका नाश होता है ॥ २५ ॥

शीर्षोदये जन्मराशौ लग्नं शुभयुतं तथा ॥
तयो राशिस्थिते राशौ यातुः शत्रुक्षयो भवेत् ॥ २६ ॥

शीर्षोदय लग्नविषे जन्मकी राशि हो, अथवा शुभ ग्रहसे युक्त जन्मलग्न हो तब उसी राशिके लग्नविषे गमन करे तो उसका शत्रु नष्ट हो ॥ २६ ॥

शत्रुजन्मोदये जन्म राशिश्च निधनं तयोः ॥
यो राशिस्तत्र वै राशौ यातुः शत्रुक्षयो भवेत् ॥ २७ ॥

शत्रुका जन्मलग्न और जन्मराशिसे आठवी राशिके लग्नमें गमन करे तो गमन करनेवालेका शत्रु नष्ट हो ॥ २७ ॥

वक्रे तथा मीनलग्ने यातुर्मीनांशकेऽपि वा ॥
निंद्यं निखिलयात्रासु घटलग्नं घटांशकः ॥ २८ ॥

वक्र और मीन लग्नमें तथा मीनके नवांशकमें गमन करना अशुभ है और कुम्भलग्न तथा कुम्भके नवांशकमें सब तर्फकी यात्रा करनी अशुभ है ॥ २८ ॥

जलोदये जलांशे वा जलजातैः शुभावहाः ॥
मूर्तिः कोशोऽथ धानुष्कं वाहनं मंत्रसंज्ञकम् ॥ २९ ॥
शत्रुर्मार्गस्तथायुश्च भाग्यं व्यापारसंज्ञितः ॥
प्राप्तिरप्राप्तिरुदयाद्भावाः स्युर्द्वादशैव तु ॥ ३० ॥

जलचर राशिके लग्नमें तथा नवांशकमें जलजातिके कार्य करने शुभदायक हैं । अब स्थानसंज्ञा कहते हैं-मूर्त्ति १, कोश २, धानुष्क ३, वाहन ४, मन्त्र ५, शत्रु ६, मार्ग ७, आयु ८, भाग्य ९, व्यापार १०, प्राप्ति ११, व्यय १२ ये प्रथम आदि बारह भावोंके नाम हैं ॥ २९ ॥ ३० ॥

हंति पापस्त्वायवर्जं भावात्सूर्यमहीसुतौ ॥
न निहतोऽरिगेहं च सौम्याः पुण्यंत्यरि विना ॥ ३१ ॥

पापग्रह ग्यारहवें घरविना अन्य घरको नष्ट करता है और सूर्य, मंगल

छठे घरमें अशुभ नहीं हैं और शुभ ग्रह छठे घर विना अन्य घरोंमें शुभदायक हैं ॥ ३१ ॥

शुक्रोऽस्तं चापि पुष्टोऽपि मूर्तिर्मृत्युश्च चन्द्रमाः ॥
याम्यादिग्गमनं रिक्ता सर्वकाष्ठासु यायिनाम् ॥ ३२ ॥

शुक्र सातवें अशुभ है और बली भी चन्द्रमा लग्नमें तथा आठवें घर अशुभ है । विशेषकरके दक्षिण दिशामें अशुभ है और रिक्तातिथि सब दिशाओंमें वर्जित हैं ॥ ३२ ॥

अभिजित्क्षणयोगोऽयमभीष्टफलसिद्धिदः ॥
पंचांगशुद्धिरहिते दिवसेऽपि फलप्रदः ॥ ३३ ॥

यात्रा मुहूर्त्तमें अभिजित् क्षणयोग होता है, तिसमें गमन करनेसे मनोरथ सिद्ध होता है । पचांगशुद्धि रहित दिनमें भी यह योग शुभदायक है ३३

यात्रा योगे विचित्रास्तान्येन वक्ष्ये इतस्ततः ॥
फलसिद्धिर्योगलग्नाद्राज्ञो विप्रस्य धिष्ण्यतः ॥ ३४ ॥

अच्छे ग्रहयोग होनेमें यात्रा अनेक प्रकार फल देनेवाली होती है इसलिये तिन योगोंको कहते हैं । राजाओंकी योग लग्नमें सिद्धि होती है, ब्राह्मणोंकी शुभ नक्षत्रमें गमन करनेसे सिद्धि होती है ॥ ३४ ॥

मूर्तितः शक्तितोऽन्येषां शकुनैस्तस्करस्य च ॥
केंद्रात्रिकोणेष्वेकेन योगः शुक्रेण सूरिणा ॥ ३५ ॥
अतियोगो भवेद्वाभ्यां त्रिभिर्योगोऽधियोगकः ॥
योगे यियासतां क्षेममातियोगे जयो भवेत् ॥ ३६ ॥

अन्य वैश्य आदिकोंकी लग्नसे तथा अच्छे शुभ मुहूर्त्तसे सिद्धि होती है, चोर गमन करे तब अच्छा शुभ शकुन होनेसे ही सिद्धि होती है । केन्द्रमें अथवा त्रिकोणमें अकेला शुक्र अथवा अकेला बृहस्पति होय तो एक अच्छा योग होता है और दोनों होवें तो अतियोग होता है, तीन ग्रहोंका अच्छा योग हो तो अधियोग होता है । एक अच्छा योगमें गमन करे तो क्षेम कुशल रहे, अतियोगमें जय होती है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

योगातियोगे क्षेमं च विजयाय विभूतयः ॥ ३७ ॥

अधियोगमें गमन करे तो क्षेम विजय विभूति होती है ॥ ३७ ॥

व्यापारशत्रुमूर्तिस्थैश्चंद्रमंददिवाकरैः ॥
रणे गतस्य भूपस्य जयलक्ष्मीप्रमाणता ॥ ३८ ॥

दशवां तथा छठे घरमें वा लग्नमें चन्द्रमा, शनि, सूर्य होवे तो रणमें प्राप्त हुए (गमन करनेवाले) राजाको विजयलक्ष्मीकी प्राप्ति होती है ॥ ३८ ॥

अथान्ययोगमाह ।

वित्तगतः शशिपुत्रो भ्रातरि वासरनाथः ॥
लग्नगते भृगुपुत्रे स्युः शलभा इव सर्वे ॥ ३९ ॥

अब 'चित्रपदा' छन्दसे अन्य योग कहते हैं । बुध धनघर (द्वितीयस्थान) में हो, सूर्य तीसरे घर हो, लग्नमें शुक्र हो तब गमन करनेवाले राजाके आगे सब टीडीकी तरह नष्ट हो जावें ॥ ३९ ॥

लग्नस्थे त्रिदशाचार्ये धनायस्थे परे ग्रहे ॥
गतस्य राज्ञोऽरिसेना प्रयाति यममंदिरे ॥ ४० ॥

बृहस्पति लग्नमें स्थित हो और अन्य ग्रह धनस्थान तथा ग्यारहवें स्थानमें होवें तो गमन करनेवाले राजाके शत्रुकी सेना यमराजके स्थानमें पहुँचती है ॥ ४० ॥

लग्ने शुक्रे रवौ लाभे चंद्रे बंधुस्थिते तदा ॥
निहंति यातुः पृतनां केशवः पूतनामिव ॥ ४१ ॥

लग्नमें शुक्र हो, सूर्य ११ घर हो, चौथे घर चंद्रमा हो, ऐसे योगमें गमन करनेवाला राजा शत्रुकी सेनाको इस प्रकार नष्ट कर देता है कि जैसे श्रीकृष्ण भगवान्‌ने पूतना नष्ट कर दी थी ॥ ४१ ॥

त्रिकोणकेंद्रगाः सौम्याः क्रूरास्त्र्यायगता यदि ॥
यस्य यातुश्च लक्ष्मीर्वै तमुपैत्यभिसारिका ॥ ४२ ॥

शुभग्रह नवमें, पांचवें घर हों अथवा १ । ४ । ७ । १० वें हों और क्रूरग्रह तीसरे तथा ग्यारहवें घर होवें तब गमन करनेवाले राजाको शत्रुकी लक्ष्मी व्यभिचारिणी होकर मिल जाती है ॥ ४२ ॥

जीवार्कचंद्रलग्नारिरंध्रगा यदि गच्छतः ॥
तस्याग्रे स्वल्पमैत्रीव न स्थिरा रिपुवाहिनी ॥ ४३ ॥

बृहस्पति, सूर्य, चंद्रमा ये लग्नमें, छठे वा सातवें घरमें यथाक्रमसे स्थित होवें तब गमन करनेवाले राजाकी सेना इस प्रकार नष्ट होजाती है कि जैसे स्वल्प मित्रता शीघ्र ही नष्ट होजाती है ॥ ४३ ॥

स्वोच्चस्थे लग्नगे जीवे चंद्रे लाभगते यदि ॥
त्रिषडायेषु सौरारौ बलवांश्च शुभो यदि ॥
यात्रायां नृपतेस्तस्य हस्ते स्याच्छत्रुमेदिनी ॥ ४४ ॥

बृहस्पति उच्चका होकर लग्नमें स्थित हो और चंद्रमा ११ वें घरमें हो और ३ । ६ । ११ घरमें शनि मङ्गल होवें, शुभग्रह बलवान् होवें तब गमन करनेवाला राजा शत्रुकी भूमिको ग्रहण करलेता है ॥ ४४ ॥

स्वोच्चस्थे लग्नगे जीवे चंद्रे लाभगते यदि ॥
गतो राजा रिपून्हंति पिनाकी त्रिपुरं यथा ॥ ४५ ॥

उच्चका बृहस्पति लग्नमें और चंद्रमा ११ वें हो तो ऐसे योगमें गमन करनेवाला राजा, जैसे शिवजीने त्रिपुर नष्ट किया ऐसे शत्रुओंको नष्ट करता है ४५

मस्तकोदयगे शुक्रे लग्नस्थे लाभगे गुरौ ॥
गतो राजा रिपून् हंति कुमारस्तारकं यथा ॥ ४६ ॥

शुक्र शीर्षोदय कहिये ५ । ६ । ७ । ८ । ११ इन लग्नोंपर स्थित हो और बृहस्पति लग्नमें, या ग्यारहवें स्थानमें होय तब गमन करनेवाला राजा शत्रुओंको ऐसे नष्ट करता है जैसे स्वामिकार्तिकजीने तारकासुरको नष्ट किया था ॥ ४६ ॥

जीवे लग्नगते शुक्रे केंद्रे वापि त्रिकोणगे ॥
गतो जयत्यरीन् राजा कृष्णवत्यां यथा व्रणम् ॥ ४७ ॥

बृहस्पति लग्नमें हो और शुक्र केंद्रमें अथवा त्रिकोण (९ । ५) में हो तब गमन करनेवाला राजा शत्रुको ऐसे नष्ट कर देवे कि जैसे कृष्णवती नदीमें व्रण (घाव) नष्ट हो जाता है ॥ ४७ ॥

लग्नगे ज्ञे शुभे केंद्रे धिष्ण्ये चोपकुले गते ॥
नृपा मुष्णंत्यरीन्ग्रीष्मे ह्रदानीवार्करश्मयः ॥ ४८ ॥

बुध लग्नमें हो, अन्य शुभग्रह केंद्रमें होवें, बृहस्पति चौथे घरमें होय तब गमन करनेवाले राजे शत्रुओंको ऐसे नष्ट करते हैं कि जैसे सूर्यकी किरण सरोवरोंको (जोहडोंको) नष्ट करती है ॥ ४८ ॥

शुभे त्रिकोणकेंद्रस्थे लाभे चन्द्रेऽथवा रवौ ॥
शत्रून्हंति गतो राजा त्वंधकारं यथा रविः ॥ ४९ ॥

नवमें पांचवें घर अथवा केंद्रमें शुभग्रह हों, ग्यारहवें घर चंद्रमा अथवा सूर्य हो तब गमन करनेवाला राजा शत्रुओंको ऐसे नष्ट करता है जैसे सूर्य अंधकारको नष्ट करता है ॥ ४९ ॥

स्वक्षेत्रगे शुभे चंद्रे त्रिकोणायगते गते ॥
विनाशयत्यरीन् राजा तूलराशिमिवानलः ॥ ५० ॥

शुभग्रह अपने क्षेत्रमें हों और चंद्रमा त्रिकोणमें अथवा ग्यारहवें घर हो तब गमन करनेवाला राजा शत्रुओंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे रूईके समूहको अग्नि भस्म कर देता है ॥ ५० ॥

इन्दौ स्वस्थे गुरौ केंद्रे मन्त्री सप्तमगे गतः ॥
नृपो हंति रिपून्सर्वान्पापं पंचाक्षरी यथा ॥ ५१ ॥

चंद्रमा दशवें घर हो, बृहस्पति केंद्रमें हो, शुक्र सातवें हो तब गमन करनेवाला राजा शत्रुओंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे पंचाक्षरी मंत्र सब पापोंको नष्ट कर देता है ॥ ५१ ॥

वर्गोत्तमगते शुक्रेऽप्येकस्मिन्नेव लग्नगे ॥
हरिस्मृतिर्यथा पापान्हंति शत्रून् गतो नृपः ॥ ५२ ॥

उच्चका अकेला ही शुक्र लग्नमें हो तो गमन करनेवाला राजा शत्रुओंको ऐसे नष्ट करै कि जैसे हरिस्मरणसे पाप नष्ट होजावें ॥ ५२ ॥

शुभे केंद्रत्रिकोणस्थे चन्द्रे वर्गोत्तमे गते ॥
सगोत्रान्हि रिपून् हंति यथा गोत्रांश्च गोत्रभित् ॥ ५३ ॥

शुभग्रह केंद्रमें हो अथवा त्रिकोणमें हो,चंद्रमा उच्चका हो तब गमन करनेवाला राजा कुटुंबसहित शत्रुओंको ऐसे नष्ट करता है कि जैसे इंद्रने पर्वतोंको नष्ट किया था ॥ ५३ ॥

मित्रभस्थे गुरौ केंद्रे त्रिकोणस्थेऽथवा सिते ॥
शत्रून् हंति गतो राजा भुजंगं गरुडो यथा ॥ ५४ ॥

मित्रग्रहके घरमें प्राप्त हुआ बृहस्पति केंद्रमें हो अथवा शुक्र त्रिकोणमें हो तब गमन करनेवाला राजा शत्रुओंको ऐसे नष्ट कर देता है जैसे सर्पको गरुड नष्ट कर देता है ॥ ५४ ॥

शुभे केंद्रत्रिकोणस्थे वर्गोत्तमगते गतः ॥
विनाशयत्यरीन्राजा पापान् भागीरथी यथा ॥ ५५ ॥

शुभग्रह केंद्रमें अथवा त्रिकोणमें हो अथवा उच्चराशिपर हो तब गमन करनेवाला राजा शत्रुओंको ऐसे नष्ट कर देवे जैसे गंगाजी पापोंको नष्ट करती है ५५

ये नृपा यान्त्यरीञ्जेतुं तत्र योगौ नृपाह्वयौ ॥
उपैति शांतिं कोपाग्निः शत्रुयोषाश्रुबिंदुभिः ॥ ५६ ॥

ऐसे ये दो योग नृपनामक हैं, इनमें गमन करनेवाले राजाकी क्रोधाग्नि, शत्रुओंके स्त्रियोंकी आंसुवोंके पड़नेसे शांत होती है ॥ ५६ ॥

बलक्षयप्रदश्चंद्रः पूर्णः क्षीणः स्वभावतः ॥
विजयस्तत्र यातॄणां संधिः सर्वान् पराक्रमः ॥ ५७ ॥

पूर्ण चंद्रमा बलदायी है और क्षीण चंद्रमा क्षयकारक है । तहां बली चंद्रमा हो तिन तिथियोंमें गमन करनेवाले राजाकी विजय, मिलाप और सर्वप्रकारसे पराक्रमकी वृद्धि होती है ॥ ५७ ॥

निमित्तशकुनादिभ्यः प्रधानेनोदयः स्मृतः ॥
तस्मात्प्रसवनायुः स्यात्फलहेतुर्मनोदयः ॥ ५८ ॥

निमित्त (मुहूर्त्त) और शकुन आदिकोंसे भाग्योदय होना मुख्य बात नहीं है किन्तु यात्रा आदि संपूर्ण मंगलोंमें मनकी प्रसन्नता रहनी यह फलका हेतु है ॥ ५८ ॥

उत्सवोपनयोद्वाहे शवस्य सूतकेषु च ॥
ग्रहणे च न कुर्वीत यात्रां मर्त्यः सदा बुधः ॥ ५९॥

उत्सव, उपनयन, विवाह, मुरदाका सूतक, ग्रहण इनविषे बुद्धिमान जन यात्रा न करे ॥ ५९ ॥

महिषीमेषयोर्युद्धे कलत्रकलहांतरे ॥
वस्त्रादेस्खलिते क्रोधे दुरुक्ते न व्रजेत्क्षुतौ ॥ ६० ॥

भैंसोंका और मेढोंका युद्ध होनेमें, स्त्रियोंका युद्ध होते समय, वस्त्रादिक उतर पडना, क्रोध होना, खराब वचन कहना, छींकना ऐसे वक्तपर गमन नहीं करना चाहिये ॥ ६० ॥

घृतान्नं तिलपिष्टान्नं मत्स्यान्नं घृतपायसम् ॥
प्रागादिक्रमशो भुक्त्वा याति राजा जयत्यरीन् ॥ ६१ ॥

घी-अन्न, तिल-पीठी, मत्स्य-अन्न, और घी-खीर इन चार पदार्थोंको खाकर यथाक्रमसे पूर्वआदि दिशाओंमें राजा गमन करे तो शत्रुओंको नष्ट करे ॥ ६१ ॥

मार्जितापरमान्नं च कांजिकं च पयो दधि ॥
क्षीरं तिलोदनं भुक्त्वा भानुवारादिषु क्रमात् ॥ ६२ ॥

शिखरणि १, खीर २, कांजी ३, पकाया दूध ४, दही ५, कच्चादूध ६ और तिल ओदन ७ इन पदार्थोंको रविआदि वारोंमें यथाक्रमसे भोजन करके गमन करना शुभ है ॥ ६२ ॥

कुल्माषांश्च तिलान्नं च दधि क्षौद्रं घृतं पयः ॥
मृगमांसं च तत्सारं पायसं चाषकं मृगम् ॥ ६३ ॥
शशमांसं च षष्टिक्यं प्रियंगुकमपूपकम् ॥
चित्रांडजं फलं कूर्मं सारी गोधां च शल्लकम् ॥ ६४ ॥
हविष्यं कृसरान्नं च मुद्रान्नं यवपिष्टकम् ॥
मत्स्यान्नं चित्रितान्नं च दध्यन्नं दस्रभात्क्रमात् ॥ ६५ ॥

बाकली १, तिलपीठी २, दही ३, शहद ४, घी ५, दूध ६, मृगमांस७, मृगका रक्त ८, खीर ९, पपैयाका मांस १०, मृग ११, चौगड़ेका मांस १२, सांठी चावल १३, मालकांगनी १४ पूडे १५ विचित्र अंडोंसे उत्पन्न हुए पक्षियोंका मांस १६, फल १७,कछुवेका मांस १८, सारिकापक्षीका मांस१९, गोहका मांस २०, सेहका मांस २१, हविष्यान्न २२, खिचडी २३, मूंग२४, जवोंकी पीठी २५, मत्स्यान्न २६, विचित्रितअन्न २७, दहीभात २८ इन पदार्थोंको खाकर अश्विनी आदि २८ नक्षत्रोंमें यथाक्रमसे यात्रा करनी शुभ है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

भुक्त्वा यायाज्जयेच्छुर्यो भूमिनाथो जयत्यरीन् ॥
हुताशनं तिलैर्हुत्वा पूजयेत्तु दिगीश्वरम् ॥ ६६ ॥

इसप्रकार इन अश्विनी आदि नक्षत्रोंमें इन वस्तुओंको खाकर जो विजयकी इच्छा करनेवाला राजा गमन करता है वह शत्रुओंको जीतता है। गमनसमय तिलोंसे अग्निमें हवन कर जिस दिशामें गमन करना हो उस दिगीश्वरका पूजन करै ॥ ६६ ॥

प्रणम्य देवभूदेवानाशीर्वादं नृपो लभेत् ॥
कृत्वा होमं दारुणं च तन्मंत्रेण कृतं व्रजेत् ॥ ६७ ॥

देवता तथा ब्राह्मणोंको प्रणाम कर आशीर्वाद पाकर दिगीश्वरके मंत्रसे अच्छे प्रकारसे होम करके गमन करना चाहिये ॥ ६७ ॥

वस्त्रं तद्वर्णगंधाद्यैरेवं भक्त्या दिगीश्वरम् ॥
इंद्रमैरावतारूढं शच्या सह विराजितम् ॥ ६८ ॥

दिगीश्वरके वर्णका वस्त्र चढावे, भक्तिसे गंध आदिको करके पूजन करना ऐरावत हस्तीपर सवार हुए इंद्राणीसे युक्त हुए इंद्रको पूजे ॥ ६८ ॥

वज्रपाणिं स्वर्णवर्णं दिव्याभरणभूषितम् ॥
सप्तहस्तं सप्तजिह्वं षडक्षं मेषवाहनम् ॥ ६९ ॥

हाथमें वज्र धारण किये हुए सुवर्णसरीखे वर्णवाले दिव्य आभूषणोंसे विभूषित ऐसे इंद्रका ध्यान करना और सात हाथोंवाला, सात जिह्वावाला, छह आँखोंवाला, मींढाकी सवारी ॥ ६९ ॥

स्वाहाप्रियं रक्तवर्णं स्रुकस्रुवायुधधारिणम् ॥ ७० ॥

स्वाहाको प्रिय माननेवाला, लालवर्ण, स्रुक् और स्रुवा आयुधको धारण करनेवाला ऐसे अग्निको पूजे ॥ ७० ॥

दंडायुधं लोहिताक्षं यमं महिषवाहनम् ॥
श्यामलासहितं रक्तवर्णमूर्द्धमुखं शुभम् ॥
खड्गचर्मधरं नीलं निर्ऋतिं नरवाहनम् ॥ ७१ ॥

दंडआयुधवाला, रक्तनेत्र, भैंसाकी सवारी करनेवाला, श्यामलादूतसहित ऊपरको मुख किये हुए शुभ, ऐसे धर्मराजका दक्षिणदिशामें ध्यान करना, खड्ग और ढालको धारण किये हुए नीलवर्ण मनुष्यकी सवारी किये हुए७१॥

ऊर्द्धकेशं विरूपाक्षं दीर्घग्रीवायुतं विभुम् ॥
नागपाशधरं पीतवर्णं मकरवाहनम् ॥ ७२ ॥

ऊपरको बाल उठाये हुए विकराल नेत्र, दीर्घग्रीवा, ऐसे समर्थ नैर्ऋत (राक्षस) को पूजे । नागफांशधारी, पीलावर्ण, मगरमच्छकी सवारी॥७२॥

वरुणं कालिनाथं च रत्नाभरणभूषितम् ॥
प्राणिनां प्राणरूपं च द्विबाहुं दंडपाणिनम् ॥ ७३ ॥

कालिनाथ, रत्नोंके आभूषणोंसे विभूषित ऐसे वरुणदेवका ध्यान करना । प्राणधारियोंका प्राण, दोभुजावाला, हाथमें दंड लिये हुए ॥ ७३ ॥

वायुं कृष्णमृगासीनं पूजयेदंजनापतिम् ॥
आश्वासीनं कुंतपाणिं द्विबाहुं स्वर्णसंनिभम् ॥ ७४ ॥

काले मृगपर सवार हुआ अंजनाके स्वामी, ऐसे वायुदेवका पूजन करना। घोडापर सवार हुआ, हाथमें भाला शस्त्र और दोभुजाओंवाला सुवर्णसमान कांतिवाला ॥ ७४ ॥

कुबेरं चित्रलेखेशं यक्षगंधर्वनायकम् ॥
पिनाकिनं वृषारूढं गौरीपतिमनुत्तमम् ॥ ७५ ॥

चित्रलेखका स्वामी, यक्ष गंधर्वोंका स्वामी ऐसे कुबेरका पूजन करना और पिनाक धनुषवाले, बैलपर सवार हुए, पार्वतीके पति, परमोत्तम ॥७५॥

श्वेतवर्णं चंद्रमौलिं नागयज्ञोपवीतिनम् ॥
अप्रयाणे स्वयं कार्याऽपेक्षया पूजनं तथा ॥ ७६ ॥

श्वेतवर्ण, चंद्रमाको मस्तकमें धारण करनेवाले, सर्पका यज्ञोपावीत धारण किये हुए ऐसे महादेवका ध्यान करना, यह ईशान-कोणके स्वामीका पूजन है। गमनसमयमें तो पूजन करना योग्य ही है और कहीं गमन नहीं करना हो तौ भी कार्यकी अपेक्षासे इन दिक्पालोंका इसी प्रकार पूजन करना ॥ ७६ ॥

कार्यं निर्गमनं छत्रध्वजाश्वाक्षतवाहनैः ॥
स्वस्थानान्निर्गमस्थानं धनुषां च शतद्वयम् ॥ ७७ ॥

ध्वजा, छत्र, अश्व, निर्विकार वाहन, इन्होंसे युक्त होकर गमन करना चाहिये और अपने घरसे दोसौ २०० धनुष प्रमाण अर्थात् ८०० हाथ प्रमाणके अन्तरमें प्रस्थान करना योग्य है ॥ ७७ ॥

चत्वारिंशद्द्वादशैव प्रस्थितो हि स्वगेहतः ॥
दिनान्येकत्र न वसेत्सप्त भूपः परो जनः ॥ ७८ ॥

अथवा चालीस धनुष प्रमाण वा बारहधनुष प्रमाण अन्तर प्रमाणमें प्रस्थान करना। अथवा अपने घरसे दूसरे घरमें प्रस्थान करना यही गमन है। गमन करके दूसरे घरमें राजाको एक जगह सात दिनसे अधिक नहीं ठहरना चाहिये और अन्य जन ॥ ७८ ॥

पंचरात्रं च परतः पुनर्लग्नांतरं व्रजेत् ॥
अकालजेषु नृपतिर्विद्युद्गर्जितवृष्टिषु ॥ ७९ ॥

प्रस्थानकी जगह पांचदिनसे अधिक नहीं ठहरें। जो अधिक स्थिति हो जाय तो दूसरे लग्नमें गमन करना और विना कालमें बिजली कड़कना, तथा वर्षा होना ॥ ७९ ॥

उत्पातेषु त्रिविधेषु सप्तरात्रं तु न व्रजेत् ॥
गमने तु शिवाकाककपोतानां गिरः शुभाः ॥ ८० ॥

इत्यादि उत्पात होना तथा भूकम्प आदि तीन प्रकारके उत्पात होनेमें राजा तीन दिनतक गमन नहीं करे। और गमन समय गीदडी, काग, कपोती इन्होंकी वाणी शुभ है ॥ ८० ॥

वामांगे कोकिला पल्ली पोतकी सूकरी रला ॥
वानरः काकऋक्षः श्वा भासः स्युर्दक्षिणाः शुभाः ॥ ८१ ॥

और कोयल, छिपकली, पोतकी (दुर्गापक्षी), सूकरी, खातीचिड़ा, ये बायींतर्फ आवें तो शुभ हैं । बानर, काग, बीछ, कुत्ता, भासपक्षी (पटबीजना) ये दहिनेतर्फ शुभ हैं ॥ ८१ ॥

चाषं त्यक्त्वा चतुष्पात्तु शुभदो वामतो गमः ॥
कृष्णं त्यक्त्वा प्रयाते तु कृकलासो न वीक्षितः ॥ ८२ ॥

पपैया बिना चतुष्पादपक्षी बायीं तर्फ गमन करे तो शुभ है, काला बिना अन्यतरहका किरलकांट दीखना शुभ नहीं है ॥ ८२ ॥

वराहशशगोधानां सर्पाणां कीर्तनं शुभम् ॥
दृष्टमात्रेण यात्रायां व्यस्तं सर्वं प्रवेशने ॥ ८३ ॥

सूकर, शश, गोह, सांप इन्होंका उच्चारण करना शुभ है, यह यात्राका शकुन है और प्रवेशसमयमें शकुन विपरीत जानने अर्थात् इन सर्पादिकोंका दीखना अच्छा है और उच्चारण अच्छा नहीं ॥ ८३ ॥

यात्रासिद्धिर्भवेद्द्रष्टे शवे रोदनवर्जिते ॥
प्रवेशो रोदनयुते शवे स्याच्च शिवप्रदः ॥ ८४ ॥

रोनासे रहित मुरदाका दर्शन हो तो गमनकी सिद्धि होती है और रोनासहित मुरदाका दीखना प्रवेशसमय सुखदायी है ॥ ८४ ॥

पतितक्लीबजटिलोन्मत्तवांतौषधादिभिः ॥
अभ्यक्तकाष्ठान्यस्थीनि चर्मांगारतुषाग्निभिः ॥ ८५ ॥

और जातिपतित, हीजडा, जटाधारी, बावला, वमनकारक औषधि, मालिश तेल आदि लगाना, काष्ठ, हड्डी, चांम, अंगार, तुष, धूमकी अग्नि ॥ ८५ ॥

गुडकार्पासलवणवसातैलतृणोरगैः ॥
वंध्या व्यथितकाणौ च मुक्तकेशो बुभुक्षितः ॥ ८६ ॥

गुड़, कपास, लवण, चरबी, तेल, तृण, सर्प, वंध्या स्त्री, रोगी पुरुष, काणा, खुले केशोंवाला, भूखा ॥ ८६ ॥

प्रयाणसमये लग्ने दृष्टे सिद्धिर्न जायते ॥
प्रज्वलाग्निः शुभं वाक्यं कुसुमेक्षुसुरागणाः ॥ ८७ ॥

ये सब गमन समयके लग्नविषे दीख जावें तो कार्यसिद्धि नहीं होती और जलती हुई अग्नि, शुभदायक वचन, पुष्प, ईख, मदिरा ॥ ८७ ॥

गंधपुष्पाक्षतच्छत्रचामरांदोलका नृपाः ॥
भक्ष्यं शुभफलं चैवेभोऽश्वाजौ दक्षिणे वृषः ॥ ८८ ॥

गंध, पुष्प, अक्षत, छत्र, चाँमरडोली, (पिन्नस), राजा, भक्ष्यपदार्थ, शुभफल, हस्ती, अश्व, दहिनीतर्फ आया हुआ वृष ॥ ८८ ॥

मत्स्यं मांसं सुधौतं च वस्त्रं श्वेतवृषध्वजः ॥
पुण्यस्त्री पूर्णकलशरत्नशृंगारगोद्विजाः ॥ ८९ ॥

मत्स्य, मांस, धोया हुआ वस्त्र, सफेद बैल, ध्वजा, सौभाग्यवती स्त्री, जलका कलश, रत्न, शृंगार, गौ, ब्राह्मण ॥ ८९ ॥

भेरीमृदंगपटहशंखरागादिनिस्वनाः ॥
वेदमंगलघोषः स्युर्यायिनां कार्यसिद्धिदाः ॥ ९० ॥

भेरी, मृदंग, ढोल, शंख, राग, गीत, गाना, वेदमंगलकी ध्वनि ये सब शकुन गमन करनेवालोंको सिद्धिदायक हैं ॥ ९० ॥

आदौ विरुद्धशकुनं दृष्ट्वा यायीष्टदेवताम् ॥
स्मृत्वा द्वितीये विप्राणां कृत्वा पूजां निवर्तयेत् ॥ ९१ ॥

गमन करनेवाला जन प्रथम अपशकुन देखे तो इष्टदेवका ध्यान करके गमन करे फिर दूसरा भी अपशकुन दीखे तो ब्राह्मणोंका पूजन कर उलटा चला आवे ॥ ९१ ॥

सर्वदिक्षु क्षुतं नेष्टं गोक्षुतं निधनप्रदम् ॥
अफलं यद्बालवृद्धरोगिपीनसवत्कृतम् ॥ ९२ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां यात्राध्यायस्त्रयस्त्रिंशत्तमः ॥ ३३ ॥

सब दिशाओंमें छींक होना अशुभ है और गौकी छींक मृत्युदायक है। बालक, वृद्ध, रोगी, शरदीरोगकी छींक कपटसे ली हुई छींक इनका दोष नहीं है ९२॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां यात्राध्यायस्त्रयस्त्रिंशत्तमः ॥३३॥

आदौ सौम्यायने कार्यं नववास्तुप्रवेशनम् ॥
राज्ञा यात्रा निवृत्तौ च यद्वा द्वंद्वप्रवेशनम् ॥ १ ॥

उत्तरायण सूर्य होवे तब नवीन घरमें प्रवेश करना चाहिये। राजा यात्रासे निवृत्त होकर घरमें प्रवेश करता हो, अथवा वरवधूका प्रवेश हो तो यह भी इसीप्रकार मुहूर्त्तमें होना चाहिये ॥ १ ॥

विधाय पूर्वदिवसे वास्तुपूजां बलिक्रियाम् ॥
माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासेषु शोभनः ॥ २ ॥

पहिले दिन वास्तुपूजा बलिदान करके माघ, फाल्गुन, वैशाख, और ज्येष्ठ, इन महीनोंमें प्रवेश करना शुभ है ॥ २ ॥

प्रवेशो मध्यमो ज्ञेयः सौम्यकार्तिकमासयोः ॥
वस्वीज्यांत्येंदुवरुणत्वाष्ट्रमित्रस्थिरोडुषु ॥ ३ ॥

मार्गशिर तथा पौषमासमें प्रवेश करना मध्यम है और धनिष्ठा, पुष्य, रेवती, मृगशिर, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें और स्थिर संज्ञक (तीनों उत्तरा, रोहिणी) नक्षत्रोंमें प्रवेश करना ॥ ३ ॥

शुभः प्रवेशो देवेज्यशुक्रयोर्दृश्यमानयोः ॥
व्यर्कारवारातिथिषु रिक्तामावर्जितेषु च ॥ ४ ॥

बृहस्पति तथा शुक्रके उदयमें प्रवेश करना शुभ है। मंगल तथा शनिवारके विना और रिक्ता तथा अमावस्या तिथिके विना अन्य दिनमें प्रवेश करना शुभदायक कहा है ॥ ४ ॥

दिवा वा यदि वा रात्रौ प्रवेशो मंगलप्रदः ॥
चंद्रताराबलोपेते पूर्वोक्तवर्जितेषु च ॥ ५ ॥

दिनमें अथवा रात्रिमें भी प्रवेश करना शुभ है, परंतु पूर्वोक्त अशुभ तिथ्यादिकोंको वर्जकर चन्द्रताराका बल देख लेना चाहिये ॥ ५ ॥

स्थिरलग्ने स्थिरांशे च नैधने शुद्धिसंयुते ॥
त्रिकोणे केंद्रगत्र्याये सौम्यैस्त्र्यायारिगैः खलैः ॥ ६ ॥

स्थिरलग्न, स्थिरराशिका नवांशक हो और आठवें घर कोई अशुभ ग्रह न हों, नवमें पांचवें घर, व केंद्रमें और तीसरे, दूसरे घरमें शुभग्रह होवें, पापग्रह ३ । ११ । ६ घर होवें ॥ ६ ॥

लग्नात्षष्ठाष्टमस्थेन वर्जितेन हिमांशुना ॥
कर्तुर्वा जन्मभे लग्ने ताभ्यामुपचयेऽपि वा ॥ ७ ॥

लग्नसे छठे, आठवें घर चन्द्रमा नहीं हो। अथवा कर्त्ताका जन्मलग्न हो तथा जन्मलग्नसे ३। ४। १०। ११ लग्न हो तब प्रवेश करना ॥ ७ ॥

कृत्वार्कं वामतो विद्वाञ्शृङ्गारं चाग्रतो विशेत् ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां प्रवेशाध्यायश्चतुस्त्रिंशत्तमः ॥ ३४ ॥

विद्वान् पुरुष वामार्क सूर्य देखकर शृंगार मंगलसे युक्त हो घरमें प्रवेश करै ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां प्रवेशाध्यायश्चतुस्त्रिंशत्तमः ॥ ३४ ॥

अथ वर्षाप्रश्न।

वर्षाप्रश्ने वारिभेऽब्जे पूर्णे वै लग्नगेपि वा ॥
केंद्रगे वा शुक्लपक्षे चातिवृष्टिः शुभेक्षिते ॥ १ ॥

वर्षाके प्रश्नमें जलराशिपर पूर्ण चन्द्रमा हो, अथवा लग्नमें चन्द्रमा हो, अथवा शुक्लपक्षमें केंद्रमें चन्द्रमा हो तथा शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो अत्यंत वर्षा होवे ॥ १ ॥

अल्पदृष्टिः पापदृष्टे प्रावृट्काले चिराद्भवेत् ॥
चंद्रवद्भार्गवे सर्वमेवंविधगुणान्विते ॥ २ ॥

और वर्षाकालमें चंद्रमा पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो अल्पवर्षा बताना। चंद्रमाकी तरह शुक्रसे भी सब शुभ और अशुभ फल कहना ॥ २ ॥

प्रावृषींदुः सितात्सप्तराशिगः शुभवीक्षितः ॥
मंदात्त्रिकोणसप्तस्थो यदि वा वृष्टिकृद्भवेत् ॥ ३ ॥

वर्षाकालमें शुक्रसे सातवीं राशिपर चंद्रमा हो और शुभग्रहोंसे दृष्ट हो, अथवा शनिसे नवमें, पांचवें घर तथा सातवें घर चंद्रमा हो तो वर्षा होवे॥३॥

सद्यो वृष्टिकरः शुक्रो यदा बुधसमीपगः ॥
तयोर्मध्यगते भानौ तदा वृष्टिविनाशनम् ॥ ४ ॥

शुक्र जो बुधके समीप होय तो शीघ्र ही वर्षा करे, तिनके मध्यमें सूर्य आजाय तो वर्षाको नष्ट करै ॥ ४ ॥

मघादिपंचधिष्ण्यस्थः पूर्वा स्वातीत्रये परे ॥
प्रवर्षणं भृगुः कुर्याद्विपरीते न वर्षति ॥ ५ ॥

मघा आदि पांच नक्षत्र, तीनों पूर्वा, स्वाती आदि तीन नक्षत्र इन नक्षत्रोंपर शुक्र होय तो वर्षा करे, इनसे विपरीत होय तो नहीं वर्षे ॥ ५ ॥

पुरतः पृष्ठतो भानोर्ग्रहा यदि समीपगाः ॥
तदा वृष्टिं प्रकुर्वंति न चैते प्रतिलोमगाः ॥ ६ ॥
सौम्यमार्गगतः शुक्रो वृष्टिकृन्न तु याम्यगः ॥
उदयास्तेषु वृष्टिः स्याद्भानोरार्द्राप्रवेशने ॥ ७ ॥

चंद्रमा आदि ग्रह पीछेसे अथवा आगेसे सूर्यके समीप होवें तो वर्षा करते हैं और वक्री होकर सूर्यसे दूर होवें तो वर्षा नहीं करें । शुक्र उत्तरचारी होय तो वर्षा करता है और दक्षिणचारी होय तो वर्षा नहीं करे । शुक्रके उदय, अस्त होनेके समय वर्षा होती है । सूर्य आर्द्रापर आवे तो उस दिनका फल कहते हैं-॥ ६ ॥ ७ ॥

विपत्तिः सस्यहानिः स्यादहन्यार्द्राप्रवेशने ॥
संध्ययोः सस्यवृद्धिः स्यात्सर्वसंपन्नृणां निशि ॥ ८ ॥

दिनमें आर्द्राप्रवेश होय तो (प्रजामें) दुःख और खेतीका नाश हो । दोनों संध्याओंमें आर्द्राप्रवेश हो तो खेतीकी वृद्धि हो और रात्रिमें आर्द्राप्रवेश हो तो मनुष्योंकी संपूर्ण समृद्धि बढै ॥ ८ ॥

स्तोकवृष्टिरनर्घः स्यादवृष्टिः सस्यसंपदः ॥
आर्द्रोदये प्रभिन्ने चेद्भवेदीतिर्न संशयः ॥ ९ ॥

आर्द्राप्रवेश समय थोडीसी वर्षा हो तो अन्नादि महँगे हों और वर्षा नहीं हो तो खेतियोंकी वृद्धि हो, पवन चले तो टीडी आदिका भय हो ॥ ९ ॥

चंद्रेज्यज्ञेऽथवा शुक्रे केंद्रे त्वीतिर्विनश्यति ॥
पूर्वाषाढागतो भानुर्जीमूतैः परिवेष्टितः ॥ १० ॥

आर्द्राप्रवेशके लग्नसमय चंद्रमा, बृहस्पति, बुध और शुक्र ये केंद्रमें हों तो टीडी आदि उपद्रव नष्ट होजाते हैं। पूर्वाषाढ नक्षत्रपर सूर्य आवे (धनुकी संक्रांतिमें) सूर्य बादलोंसे आच्छादित रहे तो ॥ १० ॥

वर्षत्यार्द्रादिमूलांतं प्रत्यक्षं प्रत्यहं तथा ॥
वृष्टिश्च पौष्णभे तस्माद्दशर्क्षेषु न वर्षति ॥ ११ ॥

जबतक आर्द्रा आदि मूलनक्षत्रतक सूर्य रहे तबतक यथाकालमें सुंदर वर्षा होती है और रेवती नक्षत्रपर सूर्य होनेके समय वर्षा होजाय तो रेवती आदि दश नक्षत्रोंतक सूर्य वर्षा नहीं करता है ॥ ११ ॥

सिंहे भिन्ने कुतो वृष्टिरभिन्ने कर्कटे कुतः ॥
कन्योदये प्रभिन्ने चेत्सर्वथा वृष्टिरुत्तमा ॥ १२ ॥

सिंहकी संक्रांतिके दिन वर्षा बादल हो और कर्ककी संक्रांतिके दिन वर्षा बादल नहीं हो तो वर्षा संवत् अच्छा नहीं होता ॥ १२ ॥

अहिर्बुध्न्यं पूर्वसस्यं परसस्यं च रेवती ॥
भरणी सर्वसस्यं च सर्वनाशाय चाश्विनी ॥ १३ ॥

उत्तराभाद्रपदपर सूर्य हो तब बादलगर्भ रहे पूर्व सस्य अर्थात् सामणूखेती नहीं हो । रेवतीमें गर्भहो तो परसस्य कहिये साढूकी खेती नहीं हो । अश्विनी भरणी पर सूर्य हो तब बादल वर्षा होजाय तो संपूर्ण खेतियां नष्ट होवें१३॥

गुरोः सप्तमराशिस्थः प्रत्यग्रो भृगुजो यदा ॥
तदातिवर्षणं भूरि प्रावृट्काले बलोज्झिते ॥ १४ ॥

बृहस्पतिसे आगे सातवीं राशिपर शुक्र स्थित होय तो वर्षा कालमें वर्षा होनेके बादभी बहुत अच्छी वर्षा होती है ॥ १४ ॥

आसन्नमर्कशशिनोः परिवेषगतोत्तरा ॥
विद्युत्प्रपूर्णं मंडूकास्त्वनावृष्टिर्भवेत्तदा ॥ १५ ॥

सूर्य और चंद्रमाके समीप उत्तरदिशामें मंडल होय अथवा बिजली चमके और उत्तरदिशामें ही मीडक बोले तो वर्षा नहीं हो ॥ १५ ॥

यदा प्रत्यंगता भेकाः स्वसद्मोपरि संस्थिताः ॥
पतंति दक्षिणस्था वा भवेद्वृष्टिस्तदाचिरात् ॥ १६ ॥

जो पश्चिमदिशामें अथवा दक्षिणदिशामें अपने स्थानपर बैठे हुए मीडक उछलके पडने लगे तो वर्षा शीघ्र हो ऐसे जाने ॥ १६ ॥

नखैर्लिखंतो मार्जाराश्चैवं निर्लोभसंस्थिताः ॥
सेतुबंधपरा बालाः सद्यो वै वृष्टिहेतवः ॥ १७ ॥

और बिलाव नखोंकरके भूमिको खोदैं तथा निर्लोभ हुए स्थित रहें तथा बालक पुल बांधकर खेलने लगे तो शीघ्रही वर्षा होगी ऐसा जानना ॥ १७ ॥

पिपीलिका शिरश्छन्ना व्यवायः सर्पयोस्तथा ॥
द्रुमाधिरोहः सर्पाणां प्रतीद्वृष्टिसूचकाः ॥ १८ ॥

कीडीपर कीडी चढें, अथवा कीडी अंडा लेकर चलें, सर्प सर्पिणी एक-जगह स्थित दीखें, सर्प वृक्षपर चढा हुआ दीखे, बादलेमें चंद्रमाके सम्मुख दूसरा चंद्रमा दीखे तो ये सब वर्षा होनेके लक्षण जानने ॥ १८ ॥

उदयास्तमये काले विवर्णोऽर्कोऽथवा शशी ॥
मधुवर्णोऽतिवायुश्चेदतिवृष्टिर्भवेत्तदा ॥ १९ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां सद्योवृष्टिलक्षणाध्यायः पंचात्रिंशत्तमः ॥ ३५ ॥

उदय तथा अस्त होनेके समय सूर्य वा चन्द्रमाका वर्ण बुरा (गाधला) दीखे, अथवा शहदसरीखा वर्ण दीखे, अथवा अत्यन्त पवन चले तो वर्षा बहुत होती है ॥ १९ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां सद्योवृष्टिलक्षणाध्यायः पंचत्रिंशत्तमः ॥ ३५ ॥

प्राङ्मुखस्य तु कूर्मस्य नवांगेषु धरामिमाम् ॥
विभज्य नवधा खंडमंडलानि प्रदक्षिणम् ॥
अंतर्वेदी च पांचालं तस्येदं नाभिमंडलम् ॥ १ ॥

पूर्वकी तर्फ है मुख जिसका ऐसे कूर्मके नव अंगोंविषे इस पृथ्वीका विभाग करना, अर्थात् पूर्वाभिमुख कूर्मचक्र बनाकर एक खण्डके नव विभाग बनाकर प्रदक्षिणक्रमसे मण्डल बनावे । तिस कूर्मका नाभिमण्डल, (मध्यभाग,) अन्तर्वेदी अर्थात् गंगा यमुनाका मध्यभाग और पांचाल, पंजाब देश कूर्मचक्रका नाभिमण्डल है ॥ १ ॥

प्राचां मागधलाटादिदेशास्तन्मुखमंडलम् ॥
स्त्रीकलेयकिरताख्या देशास्तद्वाहुमंडलम् ॥ २ ॥

तहां पूर्वके मध्यमें मागध, लाट आदिदेश तिसका मुखमण्डल है । स्त्रीकलेय, किरात ये देश तिसके बाहुमण्डल हैं ॥ २ ॥

अवंतिद्राविडा भिल्लदेशास्तत्पार्श्वमंडलम् ॥
गौडकौंकणशाल्वेष्टपुण्ड्रास्तत्पार्श्वमंडलम् ॥ ३ ॥

अवन्ती (उज्जैनप्रान्त देश), द्राविड, भिल्लदेश ये तिसके पार्श्व (पांशू) मण्डल हैं और गौड़, कौंकण, शाल्वदेश, पुंड्रदेश ये भी तिसके पार्श्वमंडल हैं ॥ ३ ॥

सिंधुकाशीमहाराष्ट्रसौराष्ट्राः पुच्छमंडलम् ॥
पुलिंदभीष्मयवनगुर्जराः पादमंडलम् ॥ ४ ॥

सिन्धुदेश, काशी, महाराष्ट्र, सौराष्ट्र ये देश तिसके पुच्छमण्डल हैं । पुलिन्द, भीष्म, यवन, गुर्जर ये देश पादमण्डल हैं ॥ ४ ॥

कुरुकाश्मीरमाद्रेयमत्स्यास्तत्पार्श्वमंडलम् ॥
खशाङ्गवंगबाह्लीककांबोजाः पाणिमंडलम् ॥ ५ ॥

कुरु, काश्मीर, माद्रेय, मत्स्यदेश ये तिसके पार्श्वमण्डल हैं । खश, अंग, वंग, बाल्हीक,कम्बोज ये देश तिसके हाथोंकी जगह समझने चाहिये ॥ ५ ॥

कृत्तिकादीनि धिष्ण्यानि त्रीणित्रीणि क्रमान्न्यसेत् ॥
नाभेर्दिक्षु नवांगेषु पापैर्दुष्टं शुभैः शुभम् ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसं०कूर्मविभागाध्यायः षट्त्रिंशत्तमः ॥ ३६ ॥

इसप्रकार तिस कूर्मके नव विभाग कर यथाक्रमसे कृत्तिका आदि तीन २ नक्षत्र रखने । पहले ३ नक्षत्र मध्यमें नाभिमण्डलपर रखके मागध लाटादि देशोंके क्रमसे इन ९ अंगोंपर रखने । फिर जिस अंगपरके नक्षत्रोंपर पापग्रह होवें उसी अंगके देशोंमें अशुभफल होवें और जिस देशके नक्षत्रोंपर शुभग्रह आरहे हों उस देशमें शुभफल हो ऐसे जानो ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां कूर्मविभागाध्यायः षट्त्रिंशत्तमः ॥३६॥

अथ उत्पाताध्यायः ।

देवता यत्र नृत्यंति पतंति प्रस्खलंति च ॥
मुहू रुदंति गायंति प्रस्विद्यंति हसंति च ॥ १ ॥

जहां देवता नृत्य करते हैं, पड़ते हैं, अथवा देवताओंकी मूर्त्ति जल उठती हैं, रोती हैं, कभी गाती हैं, मूर्त्तियोंके पसीना आता है, कभी हँसती हैं ॥१॥

वमंत्यग्निं तथा धूमं स्नेहं रक्तं पयो जलम् ॥
अधोमुखाश्च तिष्ठंति स्थानात्स्थानं व्रजंति च ॥ २ ॥

मूर्त्तियोंके मुखसे अग्नि, धूवां, स्नेह (तैलादिक) रक्त, दूध जल ये निकलते हैं । अथवा मुख नीचेको हो जाता है, एक जगहसे दूसरी जगहको मूर्त्ति चली जाती है ॥ २ ॥

एवमाद्या हि दृश्यंते विकाराः प्रतिमासु च ॥
गंधर्वनगरं चैव दिवा नक्षत्रदर्शनम् ॥ ३ ॥

इत्यादिक विकार देवताओंकी मूर्त्तियोंमें दीखते हैं और आकाशमें गन्धर्वनगर (मकानात) दीखना, दिनमें तारे दीखने ॥ ३ ॥

महोल्कापतनं काष्ठतृणरक्तप्रवर्षणम् ॥
गंधर्वगेहे दिग्धूमं भूमिकंपं दिवा निशि ॥ ४ ॥

तारे टूटने, काष्ठ तृण रक्त इन्होंकी वर्षा होनी, आकाशमें व दिशाओंमें धूवां दीखना इत्यादि उत्पात; दिनमें तथा रात्रिमें भूकम्प (भौंचाल) होना ॥ ४ ॥

अनग्नौ च स्फुलिंगाश्च ज्वलनं च विनेंधनम् ॥
निशीन्द्रचापमंडूकशिखरं श्वेतवायसः ॥ ५ ॥

ईधन विना अग्नि जल उठे, अग्निमेंसे किनके उड़ने लगे, रात्रिमें इन्द्रधनुष दीखे, मीडक दीखें, शिखर दीखे, सफेद काग दीखे ॥ ५ ॥

दृश्यंते विस्फुलिंगाश्च गोगजाश्वोष्ट्रगात्रतः ॥
जंतवो द्वित्रिशिरसो जायंते वा वियोनिषु ॥ ६ ॥

गौ, हस्ती, अश्व, ऊंट इन्होंके शरीरसे अग्निके किनके निकलते दीखें, अथवा दो तीन शिरवाले बालकका जन्म होना, दूसरी योनिमें दूसरा बालक जन्मना ॥ ६ ॥

प्रतिसूर्याश्चतस्रुपुरयुर्दिक्षु युगपद्रवेः ॥
जंबुकग्रामसंवासः केतूनां च प्रदर्शनम् ॥ ७ ॥

सूर्यके सम्मुख दूसरा सूर्य दीखना, एक ही बार चारों दिशाओंमें इन्द्रधनुष दीखने, ग्रामके समीप बहुतसे गीदड़ इकट्ठे होना, पूछवाले तारे दीखें ऐसे उत्पात दीखें ॥ ७ ॥

काकानामाकुलं रात्रौ कपोतानां दिवा यदि ॥
अकाले पुष्पिता वृक्षा दृश्यंते फलिता यदि ॥ ८ ॥
कार्यं तच्छेदनं तत्र ततः शांतिर्मनीषिभिः ॥
एवमाद्या महोत्पाता बहवः स्थाननाशदाः ॥ ९ ॥

रात्रिमें कौओंका शब्द सुन पड़े, दिनमें कपोतोंका शब्द सुन पड़े, अकालमें वृक्षोंके फूल तथा फल दीखें तब ऐसे वृक्षोंका छेदन करना चाहिये और पंडित जनोंको इन उत्पातोंको दूर करनेके वास्ते इनकी शांति करनी चाहिये, क्योंकि पूर्वोक्त बहुतसे महान् उत्पात स्थानको नष्ट करनेवाले कहे हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥

केचिन्मृत्युप्रदाः केचिच्छत्रुभ्यश्च भयप्रदाः ॥
मध्याद्भयं पशोर्मृत्युः क्षयोऽकीर्तिः सुखासुखम् ॥ १० ॥

कितनेक उत्पात मृत्युदायक हैं, कितेक उत्पात शत्रुओंसे भय करते हैं तथा उदासीन पुरुषसे भय, पशुकी मृत्यु, क्षय, कीर्तिनाश और सुखमें दुःख करते हैं ॥ १० ॥

अथ होमः ।

अनैश्वर्यं चान्नहानिरुत्पातभयमादिशेत् ॥
देवालये स्वगेहे वा ईशान्यां पूर्वतोऽपि वा ॥ ११ ॥

ऐश्वर्यका नाश, अन्नकी हानि, इत्यादिक ये सब उत्पातोंके भय जानने। उसकी निवृत्तिके लिये देवताके मंदिरमें, अथवा अपने घरमें ईशानकोणमें अथवा पूर्वमें ॥ ११ ॥

कुंडं लक्षणसंयुक्तं कल्पयेन्मेखलायुतम् ॥
गृह्योक्तविधिना तत्र स्थापयित्वा हुताशनम् ॥ १२ ॥

बहुत उत्तम अग्निकुंड बनावे, कुंडपर मेखला बनावे, फिर अपने कुलके अनुसार विवाहादि मंगलोक्त विधिसे अग्नि स्थापन करे ॥ १२ ॥

जुहुयादाज्यभागांतं पृथगष्टोत्तरं शतम् ॥
यत इंद्रभयामहे स्वस्तिदाघोरमंत्रकैः ॥ १३ ॥
समिदाज्यं चरुर्व्रीहितिलैर्व्याहृतिभिस्तथा ॥
कोटिहोमं तदर्धं च लक्षहोममथाऽपि वा ॥ १४ ॥

घृतसे आज्यभागसंज्ञक मंत्रोंसे १०८ आहुति देना, फिर "यतइंद्रभयामहे स्वस्तिदा" और "अघोर" इन मंत्रोंसे आहुति देवे। समिध, घृत, चरु, चावल, तिल इन्होंसे व्याहृतियोंके मंत्रसे आहुति देना, कोटि होम कराना, अथवा तिससे आधा, अथवा लक्ष होम कराना ॥ १३ ॥ १४ ॥

यथा वित्तानुसारेण तन्न्यूनाधिककल्पना ॥
एकविंशतिरात्रं वा पक्षं पक्षार्द्धमेव वा ॥ १५ ॥

जैसा अपना वित्त हो उसके अनुसार होम कराना। इक्कीस दिनोंतक अथवा १५ दिनोंतक, अथवा आधे पक्षतक होम कराना ॥ १५ ॥

पंचरात्रं त्रिरात्रं वा होमकर्म समाचरेत् ॥
दक्षिणां च ततो दद्यादाचार्याय कुटुंबिने ॥ १६ ॥

पांचरात्रितक वा तीनरात्रितक होमकर्म कराना योग्य है। फिर कुटुंबवाले आचार्यके वास्ते दक्षिणा देवे ॥ १६ ॥

गणेशक्षेत्रपालार्कदुर्गाक्षोण्यंगदेवताः ॥
तासां प्रीत्यै जपः कार्यः शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥ १७ ॥

गणेश, क्षेत्रपाल, सूर्य, दुर्गा, चौंसठयोगिनी, अंगदेवता इन्होंकी प्रीतिके वास्ते इन मंत्रोंसे जप करावे । अन्य होमादिकर्म पूर्वोक्तविधिसे करे ॥ १७ ॥

ऋत्विग्भ्यो दक्षिणां दद्यात्षोडशभ्यः स्वशक्तितः ॥ १८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायामुत्पाताध्यायः सप्तत्रिंशत्तमः ॥ ३७ ॥

सोलह ऋत्विजोंके वास्ते अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा देवे ॥ १८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायामुत्पाताध्यायः
सप्तत्रिंशत्तमः ॥ ३७ ॥

उत्पातास्त्रिविधा लोके दिवि भौमांतरिक्षजाः ॥
तेषां नामानि शांतिं च सम्यक्वक्ष्ये पृथक्पृथक् ॥ १ ॥

संसारमें तीन प्रकारके उत्पात है स्वर्ग, भूमि, आकाश इन तीन जगह होनेवाले उत्पात हैं, तिनके नामोंको और शांतिको अलग अलग कहते हैं ॥ १ ॥

दिवा वा यदि वा रात्रौ यः पश्येत्काकमैथुनम् ॥
स नरो मृत्युमाप्नोति यदि वा स्थाननाशनम् ॥ २ ॥

दिनमें अथवा रात्रिमें जो पुरुष काकके मैथुनको देखता है उस पुरुषकी मृत्यु होती है, अथवा स्थान नष्ट होता है ॥ २ ॥

काकघातव्रतं चैव विदधीताथ वत्सरम् ॥
पितृदेवद्विजान्भक्त्या प्रत्यहं चाभिवादनम् ॥ ३ ॥

तिस पुरुषको वर्षदिनतक काकघात नामक व्रत करना और पितर देवता ब्राह्मण इनको भक्तिसे प्रति दिन प्रणाम करना चाहिये ॥ ३ ॥

जितेंद्रियः शुद्धमनाः सत्यधर्मपरायणः ॥
तद्दोषशमनायेत्थं शांतिकर्म समाचरेत् ॥ ४ ॥

जितेंद्रिय शुद्धमनवाला रहे, सत्यधर्ममें तत्पर रहै, तिस दोषको शांत करनेके वास्ते इसप्रकार शांति करे कि ॥ ४ ॥

गृहस्येशानकोणे तु होमस्थानं प्रकल्पयेत् ॥
स्वगृह्योक्तविधानेन तत्र स्थाप्य हुताशनम् ॥ ५ ॥

घरमें ईशानकोणकी तर्फ अग्निस्थान कल्पित कर तहां अपने गृह्योक्त विधिसे अग्निस्थापन करना चाहिये ॥ ५ ॥

मुखांते समिदाज्यान्नैर्होमश्चाऽष्टोत्तरं शतम् ॥
प्रतिमंत्रं त्र्यंबकेन चाथ मृत्युंजयेन वा ॥ ६ ॥
व्याहृतिभिर्व्रीहितिलैर्जपाद्यंतं प्रकल्पयेत् ॥
पूर्णाहुतिं च जुहुयात्कर्ता शुचिरलंकृतः ॥ ७ ॥

फिर समिध, घृत, तिलादिक अन्न इनसे 'त्र्यंबकं यजामहे' इस मंत्रसे अथवा महामृत्युंजयमंत्रसे अर्थात् "भूर्भुवःस्वः" इत्यादिक व्याहृतियोंसहित त्र्यंबकमंत्रसे चावलतिलोंसे जपकी संख्याके अनुसार होम करै और पवित्र विभूषित हुआ कर्त्ता यजमान होमके अंतमें पूर्णाहुति करै ॥ ६ ॥ ७ ॥

स्वर्णशृंगीं रौप्यखुरीं कृष्णां धेनुं पयस्विनीम् ॥
वस्त्रालंकारसहितां निष्कद्वादशसंयुताम् ॥ ८ ॥

और सुवर्णकी सींगडी तथा चांदीके खुरोंसे विभूषित अच्छे दूधवाली कालीगौको वस्त्र आभूषणोंसे विभूषित कर बारह निष्क अर्थात् ४८ तोले सुवर्णसे युक्त ॥ ८ ॥

तदर्द्धेन तदर्द्धेन तदर्द्धेनाथवा पुनः ॥
यथा वित्तानुसारेण तन्न्यूनाधिककल्पना ॥ ९ ॥

अथवा तिससे आधा, अथवा तिससे भी आधा, अथवा तिससे भी आधा सुवर्ण वा चांदी अपने वित्तके अनुसार कम ज्यादे देवै ॥ ९ ॥

आचार्याय श्रोत्रियाय गां च दद्यात्कुटुंबिने ॥
ब्राह्मणेभ्यो विशिष्टेभ्यो यथाशक्ति च दक्षिणाम् ॥ १० ॥

वेदपाठी कुटुंबी आचार्यके वास्ते ऐसी गौका दान देवे और श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके वास्ते शक्तिके अनुसार दक्षिणा देवै ॥ १० ॥

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥
एवं यः कुरुते सम्यक्स तद्दोषात्प्रमुच्यते ॥ ११ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां वायसमैथुनलक्षणाध्यायोऽष्टत्रिंशत्तमः ॥३८॥

फिर स्वस्तिवाचनपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन करवावे। ऐसे जो अच्छेप्रकारसे करता है वह तिस (काकमैथुनादि) दोषसे छूट जाता है ॥ ११ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां वायसमैथुनलक्षणाध्यायोऽष्टत्रिंशत्तमः ॥ ३८ ॥

पल्ल्याः प्रपतने पूर्वैं फलमुक्तं शुभाशुभम् ॥
शीर्षे राज्यं श्रियं प्राप्तिर्मौलौ त्वैश्वर्यवर्धनम् ॥ १ ॥

छिपकली शरीरपर पड़नेका फल पूर्वाचार्योंने कहा है। शिरपर पड़े तो राज्य तथा लक्ष्मीकी प्राप्ति हो, मस्तकपर पडे तो ऐश्वर्यकी वृद्धि हो ॥ १ ॥

पल्ल्याः प्रपतने चैव सरटस्य प्ररोहणे ॥
शुभाशुभं विजानीयात्तत्तत्स्थाने विशेषतः ॥ २ ॥

शरीरपर छिपकलीके पड़नेका और किरकाटके चढ़नेका तिस तिस स्थानका शुभाशुभ फल विशेषतासे जानना चाहिये ॥ २ ॥

सव्ये भुजे जयः प्रोक्तो ह्यपसव्ये महद्भयम् ॥
कुक्षौ दक्षिणभागस्य धनलाभस्तथैव च ॥ ३ ॥

बाँयी भुजापर पड़े तो जयप्राप्ति, दाहिनी भुजापर महान् भय हो और दहिनी कुक्षिपर धनका लाभ हो ॥ ३ ॥

वामकुक्षौ तु निधनं गदितं पूर्वसूरिभिः ॥
सव्यहस्ते मित्रलाभोऽवामहस्ते तु निस्वता ॥ ४ ॥

बांयीं कुक्षिपर मृत्यु, बांये हाथपर मित्रका लाभ और दाहिने हाथपर दरिद्रता हो ऐसे पुरातन पंडितोंने कहा है ॥ ४ ॥

उदरे सव्यभागे तु सुपुत्रावाप्तिरुच्यते ॥
वामभागे महारोगः कट्यां सव्ये महद्यशः ॥ ५ ॥

उदरके बाँयें भागपर पड़े तो सुन्दर पुत्रकी प्राप्ति और उदरपर बायींतर्फ पडे तो महान् रोग हो बाँयीं कटिपर पडे तो महान् यश मिलै ॥ ५ ॥

वामकट्यां तु निधनं मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥
जान्वोरेवं विजानीयात्सव्यपादे शुभावहम् ॥ ६ ॥

बांयीं कटिपर तत्त्वदर्शी मुनियोंने मृत्यु कही है और दोनों गोडोंपर भी मृत्यु जानना, बाँयें पांवपर शुभ फल जानना ॥ ६ ॥

वामपादे तु गमनमिति प्राहुर्महर्षयः ॥
स्त्रीणां तु सरटश्चैव व्यस्तमेतत्फलं वदेत् ॥ ७ ॥

बाँयें पैरपर पडे तो गमन हो ऐसे महर्षि जनोंने कहा है । इसी प्रकार किरलकाँटका फल जानना और स्त्रियोंको यह फल विपरीत होता है अर्थात् पुरुषके जिस अङ्गपर शुभफल कहा है वहां अशुभ फल होता है ॥ ७ ॥

---

१ पूर्व=पूर्वाचार्याः । आकृतिविशेषः ।

फलं प्ररोहणे चैव सरटस्य प्रचारतः ॥
सर्वांगेषु शुभं विद्याच्छांतिं कुर्यात्स्वशक्तितः ॥ ८ ॥

किरलकाँट सब अङ्गोंमें जहां चढ जाय उसी जगहके शुभफलको विचारै। जो अशुभफल होय तो शक्तिके अनुसार शांति करवानी चाहिये ॥ ८ ॥

शुभस्थाने शुभावाप्तिरशुभे दोषशांतये ॥
तत्स्वरूपं सुवर्णेन रुद्ररूपं तथैव च ॥ ९ ॥

शुभ स्थानमें चढे तो शुभफलकी प्राप्ति हो और अशुभस्थानपर चढ़े तो शांति करवानी चाहिये । सुवर्णका किरलकाँट बनवाके रुद्ररूप जानकर उसका पूजन करै ॥ ९ ॥

मृत्युंजयेन मंत्रेण वस्त्रादिभिरथार्चयेत् ॥
अग्निं तत्र प्रतिष्ठाप्य जुहुयात्तिलपायसैः ॥ १० ॥

मत्युञ्जयमन्त्रसे वस्त्र आदि समर्पण करके पूजन करै । अग्निस्थापन करके तिल और खीरसे होम करै ॥ १० ॥

आचार्यो वारुणैः सूक्तैः कुर्यात्तत्राभिषेचनम् ॥
आज्यावलोकनं कृत्वा शक्त्या ब्राह्मणभोजनम् ॥ ११ ॥

वरुणदेवताके मन्त्रोंसे आचार्य अभिषेक करै । यजमान घृतमें मुख देखके (छायादान कर) शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको भोजन करवावे ॥११॥

गणेशक्षेत्रपालार्कदुर्गाक्षोण्यंगदेवताः ॥
तासां प्रीत्यै जपः कार्यः शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥ १२ ॥

गणेश, क्षेत्रपाल, सूर्य, दुर्गा, चौसठयोगिनी, अंगदेवता इनको प्रीतिके वास्ते इनके मन्त्रोंका जप करै, अन्य सब विधि पहिलेकी तरह करनी चाहिये ॥ १२ ॥

ऋत्विग्भ्यो दक्षिणां दद्यात्षोडशभ्यः स्वशक्तितः ॥ १३ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां पल्लीसरटाशुभस्थानशांतिप्रकरणाध्याय एकोनचत्वारिंशत्तमः ॥ ३९ ॥

अपनी शक्तिके अनुसार सोलह ऋत्विजोंके अर्थ दक्षिणा देनी ॥ १३ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां पल्लीसरटाशुभस्थानशांतिप्रकरणाध्याय एकोनचत्वारिंशत्तमः ॥ ३९ ॥

आरोहेत गृहं यस्य कपोतो वा प्रवेशयेत् ॥
स्थानहानिर्भवेत्तस्य यद्वानर्थपरंपरा ॥ १ ॥

जिसके घरमें कपोत (बाजपक्षी) प्रविष्ट हो जाय, अथवा घरके ऊपर बैठ जाय उसके स्थानकी हानि हो, अथवा कोई दुःख होवे ॥ १ ॥

दोषाय धनिनां गेहे दरिद्राणां शिवाय च ॥
तच्छांतिस्तु प्रकर्तव्या जपहोमविधानतः ॥ २ ॥

धनी पुरुषोंके घरमें प्रवेश होना यह अशुभ फल है और दरिद्री पुरुषोंके घरमें तथा शून्य घरमें शुभफल जानना, तिसकी शांति जप होम विधिसे करनी चाहिये ॥ २ ॥

ब्राह्मणान्वरयेत्तत्र स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥
षोडशद्वादशाष्टौ वा श्रौतस्मार्तक्रियापरान् ॥ ३ ॥

श्रुति स्मृतिकी क्रियामें तत्पर रहनेवाले सोलह, अथवा बारह, वा आठ ब्राह्मणोंको स्वस्तिवाचनपूर्वक वरण करै ॥ ३ ॥

देवाः कपोत इत्यादि ऋग्भिः स्यात्पंचभिर्जपः ॥
कुंडं कृत्वा प्रयत्नेन स्वगृह्योक्तविधानतः ॥ ४ ॥

"देवाः कपोत" इत्यादि पांच ऋचाओंसे जप करवाना और अपने वेदशाखाके अनुकूल अग्निकुंड बनवावे ॥ ४ ॥

ईशान्यां स्थापयेद्वह्निं मुखांतेऽष्टोत्तरं शतम् ॥
प्रत्येकं समिदाज्यान्नैः प्रतिप्रणवपूर्वकम् ॥ ५ ॥

ईशानकोणमें अग्निस्थापन कर समिध, घृत, अन्न इन्हों करके ओंकार-पूर्वक अष्टोत्तर शत १०८ आहुति अग्निके मुखमें करै ॥ ५ ॥

यत इंद्रभयामहे स्वस्तीत्येतेन त्र्यंबकैः ॥
त्रिभिर्मंत्रैश्च जुहुयात्तिलान्व्याहृतिभिः सह ॥ ६ ॥

"यत इन्द्रभयामहे" इस मंत्रसे, "स्वस्तिन इन्द्रो" और "त्र्यंबकं" इन तीन मंत्रोंसे व्याहृतिपूर्वक तिलोंसे होम करै ॥ ६ ॥

कुर्यादेव ततो भक्त्या कर्ता पूर्णाहुतिं स्वयम् ॥
विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्याद्दोषशांतिं ततो जयेत् ॥ ७ ॥

फिर यजमान आप भक्तिपूर्वक पूर्णाहुति करै और ब्राह्मणोंके वास्ते दक्षिणा बांटै। ऐसे करनेसे तिस दोषकी शांति होवे ॥ ७ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्स्वयं भुंजीत बंधुभिः ॥
एवं यः कुरुते भक्त्या तस्माद्दोषात्प्रमुच्यते ॥ ८ ॥

फिर ब्राह्मणोंको भोजन करवाके आप अपने बंधुजनों सहित भोजन करै। इसप्रकार जो भक्तिसे करता है वह तिस दोषसे छूट जाता है ॥ ८ ॥

पिंगलायाः स्वरेऽप्येवं मधुवाल्मीकयोरपि ॥
संपूर्णमंगले हानिः शून्यसद्मनि मंगलम् ॥ ९ ॥

पिंगला (कोतरी) के बोलनेमें तथा मधु और वाल्मीक पक्षीके बोलेनमें भी ऐसे ही शांति करानी। संपूर्ण मंगलकी जगह इनका प्रचार होवे तो हानि हो और शून्य मकानमें बोलें तो शुभफल हो ॥ ९ ॥

प्राकारेषु पुरद्वारे प्रासादाद्येषु वीथिषु ॥
तत्फलं ग्रामपस्यैव सीमा सीमाधिपस्य च ॥ १० ॥

किला, कोट, पुरका दरवाजा, मंदिर, राजभवन, गली इन्होंपर बोलें तो वह फल ग्रामके अधिपतिको ही होता है, सीमापर बोले तो सीमाके मालिकको फल होता है ॥ १० ॥

शांतिकर्माखिलं कार्यं पूर्वोक्तेन क्रमेण तु ॥ ११ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां कपोतपिंगलादि-
शान्तिरध्यायश्चत्वारिंशत्तमः ॥ ४० ॥

इन कोतरी आदिकोंके बोलनेमें पूर्वोक्त क्रम करके संपूर्ण शांतिकर्म कराना चाहिये ॥ ११ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां कपोतपिंगलादि
शांतिरध्यायश्चत्वारिंशत्तमः ॥ ४० ॥

उत्पाता ह्यखिला नृणामगम्याः शुभसूचकाः ॥
तथापि सद्यः फलदं शिथिलीजननं महत् ॥ १ ॥

शुभसूचक संपूर्ण उत्पात, मनुष्योंको प्राप्त होने दुर्लभ हैं। परंतु शिथिली जनन अर्थात् अचानकसे शिथिल होकर किसी वस्तुका गिरना उछडना आदि उत्पात महान् फल करते हैं ॥ १ ॥

शिथिलीजननं ग्रामे सेतौ वा देवतालये ॥
तत्फलं ग्रामपस्यैव सीम्नि सीमाधिपस्य च ॥ २ ॥

ग्राममें, पुलपर, अथवा देवताके मंदिरमें जो यह पूर्वोक्त उत्पात होय तो ग्रामके स्वामीको अशुभ फल होता है, सीमापर हो तो सीमाके मालिकको अशुभ फल होता है ॥ २ ॥

शिथिलीजनने हानिः सर्वस्थानेषु दिक्षु च ॥
तद्दोषशमनायैव शांतिकर्म समाचरेत् ॥ ३ ॥

सब स्थानोंमें सब दिशाओंमें जहां शिथिलजनन उत्पात (किसी वस्तुका रूप बिगडना अचानकसे ढीला होना) होता है वहां हानि होती है, तिस दोषको शमन करनेके वास्ते शांति करनी चाहिये ॥ ३ ॥

स्वर्णेन मृत्युप्रतिमां कृत्वा वित्तानुसारतः ॥
रक्तवर्णं चर्मदंडधरं महिषवाहनम् ॥ ४ ॥

सुवर्णकरके वित्तके अनुसार मृत्युकी मूर्ति बनवावे । लालवर्ण, ढाल तथा दंडको धारण किये, भैंसाकी सवारी ऐसी मूर्ति बनवानी चाहिये ॥ ४ ॥

नववस्त्रं च संवेष्ट्य तंदुलोपरि पूजयेत् ॥
तल्लिंगेन च मंत्रेण नैवेद्यं तु यथाविधि ॥ ५ ॥

तिस मूर्तिको नवीन वस्त्रसे लपेटकर चावलोंपर स्थापित कर तिसका पूजन करै । तिस धर्मराजके मंत्रका उच्चारण कर यथार्थविधिसे नैवेद्य चढावे ५

पूर्णकुंभं तदीशान्यां रक्तवस्त्रेण वेष्टितम् ॥
पंचत्वक्पल्लवैर्युक्तं जलं मंत्रैः समर्पयेत् ॥ ६ ॥

जलसे पूर्णकलश ईशानकोणमें स्थापित कर तिसपर लालवस्त्र उढावे। पंचपल्लव, पंचवल्कल, आम्रआदिकोंसे युक्तकर मंत्रों करके तिस कलशमें जल घाले ॥ ६ ॥

अग्निसंस्थापनं प्राच्यां स्वगृह्योक्तविधानतः ॥
प्रत्येकमष्टोत्तरशतमघोरेणैव होमयेत् ॥ ७ ॥

अपने कुलके संप्रदायके अनुसार पूर्वदिशामें स्थापन करे, अघोरमंत्रसे अष्टोत्तरशत १०८ होम करै ॥ ७ ॥

मंत्रेण समिदाज्यान्नैः शेषं पूर्ववदाचरेत् ॥
द्विजाय प्रतिमां दद्यात्सर्वदोषापनुत्तये ॥ ८ ॥

समिध, घृत, तिलादिक अन्न इन्होंसे होम करना, अन्य सबविधि पहिलेकी तरह करना और संपूर्ण दोष दूर होनेके वास्ते उस सुवर्णकी मूर्त्तिको ब्राह्मणके अर्थ देवे ॥ ८ ॥

जलमंत्रेण संप्रोक्ष्य तत्स्थानं तीर्थवारिभिः ॥
एवं यः कुरुते सम्यक्स तु दोषात्प्रमुच्यते ॥ ९ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां शिथिलीजननशांति-
रध्याय एकचत्वारिंशत्तमः ॥ ४१ ॥

वरुणका मंत्र उच्चारण कर तिस उत्पातवाले स्थानको गङ्गा आदि तीर्थके जलसे छिडक देवे। इस प्रकार जो पुरुष करता है वह उत्पातदि दोषसे छूट जाता है ॥ ९ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां शिथिलीजननशांति-
रध्याय एकचत्वारिंशत्तमः ॥ ४१ ॥

श्रीरग्निर्बंधुनाशश्च वित्तहानिर्महद्यशः ॥
बंधुलाभः पुत्रहानिः स्त्रीचिंता महतो गदः ॥ १ ॥
पूर्वादीनि फलान्येषामिंद्रलुप्तं च मस्तके ॥
पंचत्वक्पल्लवैश्चैव पंचामृतफलोदकैः ॥ २ ॥
अभ्यंगमंत्रितैर्मंत्रैः स्नानदोषं विमुंचति ॥
एवमेवाग्निदाहेऽपि मस्तके मध्यदूषिते ॥ ३ ॥
दंतच्छेदे काकहते सरटापत्तनेऽपि च ॥
आशिषो वाचनं कृत्वा ब्राह्मणान्भोजयेच्छुचिः ॥ ४ ॥

किसीके शिरपर इंद्रलुप्त होजाय अर्थात् शिरपरसे किसी जगहके बाल उड जावें तो मस्तकमें पूर्व आदि दिशा कल्पित करके लक्ष्मीप्राप्ति १, अग्निभय २, बंधुनाश ३, द्रव्यकी हानि ४, महान् यश ५, बंधुलाभ, ६ पुत्रहानि ७, स्त्रीचिंता ८, महान् रोग ९ यह फल पूर्व आदि दिशाओंका जानना और नववाँ फल मस्तकमें मध्यभागका जानना। तहां इसकी शांतिके वास्ते पंचवल्कल, पंचपल्लव, पंचामृत, फलोदक इन्होंकरके स्नान करावे और अभिषेकके मंत्रोंका उच्चारण करे तब शुद्धि होती है। इसी प्रकार अग्निदाहादिसे मस्तकमध्यसे दूषित होजाय तथा दांत आदि कट जायँ, काक चोंच मार देवे तथा किरलकांट चढ जाय तो उस स्थानका भी शुभाऽशुभ फल विचार कर स्वस्तिवाचन करवाके ब्राह्मण जिमावें तो दोषरहित होजाय ॥ १-४ ॥

लाभदः स्त्रीजनानां त्वशुभदो व्यत्ययो व्ययः ॥
दक्षिणे स्फुरणं लाभं वामे स्फुरणमन्यथा ॥ ५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां निमित्तशांतिरध्यायो
द्विचत्त्वारिंशत्तमः ॥ ४२ ॥

जो शकुन पुरुषोंको लाभदायक हैं वह स्त्रियोंको अशुभ विपरीत तथा हानिदायक जानना। पुरुषोंको दहिना अंग स्फुरणा शुभ है, बायां अंग स्फुरणा अशुभ है ॥ ५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां निमित्तशांतिरध्यायो
द्विचत्त्वारिंशत्तमः ॥ ४२ ॥

स्वर्गाच्युतानां रूपाणि यान्युल्कास्तानि वै भुवि ॥
धिष्ण्योल्काविद्युदशनितारा: पंचाविधाः स्मृताः ॥ १ ॥

स्वर्गसे पतित हुई उल्काओंके जो रूप पृथ्वीपर होते हैं तिनको कहते हैं। धिष्ण्या, उल्का, विद्युत्, अशनि, तारा ऐसे पांच प्रकारका उल्कापात जानना १॥

सम्यक्पञ्चविधानं च वक्ष्यते लक्षणं फलम् ॥
पाचयंति त्रिभिः पक्षैर्धिष्ण्योल्काशनिसंज्ञिताः ॥ २ ॥

अच्छे प्रकारसे इन पांचोंका विधान लक्षण फल कहते हैं–धिष्ण्या, उल्का, अशनि इन संज्ञाओंवाली उल्का ४५ दिनमें फल करती हैं ॥ २ ॥

विद्युत्षड्भिरहोभिश्च तारास्तद्वत्फलप्रदाः ॥
फलपाककरी तारा धिष्ण्याख्यार्द्धा फलप्रदा ॥ ३ ॥

विद्युत् छः दिनमें फल करे, तारापात भी ६ दिनमें फल करे । तारापात पूरा फल और धिष्ण्या पात आधा फल करती है ॥ ३ ॥

उल्काविद्युदशन्याख्याः संपूर्णफलदा नृणाम् ॥
अश्वेभोष्ट्रपशुनृषु वृक्षक्षोणीषु च क्रमात् ॥ ४ ॥
विदारयंति पतितं स्वनेन महता शनिः ॥
जनयित्री च संत्रासं विद्युद्व्योम्नि त्विव स्फुटम् ॥ ५ ॥

उल्का, अशनि, विद्युत् ये मनुष्योंको पूरा फल देती हैं । अश्व, हाथी, ऊंट, पशु, मनुष्य, वृक्षोंकी पंक्ति इन सबोंपर यथाक्रमसे पडती हैं और तोड फोड

डालती हैं बडाभारी कडकना शब्द करती हैं यह अशनिका लक्षण है। और बिजली आकाशमें बहुत चमकती है, बडा भय दिखाती है यह विद्युत्का लक्षण है ॥ ४ ॥ ५ ॥

चक्रा विशालज्वलिता पतंती वनराजिषु ॥
धिष्ण्यान्त्यपुच्छा पतति ज्वलितांगारसन्निभा ॥ ६ ॥

चक्राकार विशाल ज्वलिता, वनमें बहुत दूरतक पडती हुई जले हुए अंगारसदृश, अंतमें पूंछसे आकारवाली ऐसी धिष्ण्या जाननी ॥ ६ ॥

हस्तद्वयप्रमाणा सा दृश्यते च समीपतः ॥
ताराब्जतनुवच्छुक्ला हस्तदीर्घाबुजारुणा ॥ ७ ॥

वह दो हाथप्रमाणकी समीपमें ही दीखती है जो चंद्रमासरीखी सफेद दीखती है ऐसी तारा जाननी और एक हाथ लंबी लालकमल सरीखी लाल७

उर्द्ध्वं वाप्यथवा तिर्यगधो वा गगनांतरे ॥
उल्काशिरो विशाला तु पतंती वर्द्धते तनुम् ॥ ८ ॥

आकाशमें ऊपरको अथवा नीचेको तिरछी होती है,पडती हुईका विस्तार होजाता है जिसका मस्तक चौडा होता है ऐसी उल्का जाननी चाहिये ॥८॥

दीर्घपुच्छा भवेत्तस्या भेदाः स्युर्बहवस्तथा ॥
पीडाश्चोष्ट्राहिगोमायुखरगोगजदंष्ट्रिकाः ॥ ९ ॥

वह उल्का लंबी पूंछवाली होती है तिसके बतहुसे लक्षण हैं। वह ऊंट,सर्प, गीदड़, गधा, गौ, हाथी, कीजाड इनके समान आकारवाली उल्का इन सबोंको पीडा करती है ॥ ९ ॥

कपिगोधाधूमनिभा विविधा पापदा नृणाम् ॥
अश्वेभचंद्ररजतवृषहंसध्वजोपमाः ॥ १० ॥

बंदर, गोह, धूमा इनके समान अनेक आकारवाली होय तो मनुष्योंको पाप (अशुभ) फल करती है और घोडा, हाथी, चंद्रमा, चांदी, बैल,हंस, ध्वजा इनके समान ॥ १० ॥

वज्रशंखशुक्तिकाब्जरूपाः शिवसुखप्रदाः ॥
पतंतीह स्वरा वह्नौ राजराष्ट्रक्षयाय च ॥ ११ ॥

अथवा हीरा, शंख, सींपी, कमल इन्होंके सदृश, उल्का पडे तो मंगल और सुखदायक जाननी । अग्निमें उल्कापात होजाय तो राजाका और देशोंका नाश हो ॥ ११ ॥

यद्यंबरे निपतति लोकस्याप्यतिविभ्रमः ॥
यद्यर्केंदू संस्पृशति तत्र भूपप्रकंपनम् ॥ १२ ॥

जो आकाशमें ही रहे तो लोगोंको अत्यंत भ्रम करे और जो सूर्य चंद्रमाको स्पर्श करे तो राजाओंको कंपित करे ॥ १२ ॥

परचक्रागमभयं जनानां क्षुज्जलाद्भयम् ॥
अर्केन्द्वोरपसव्योल्का पौरेतरविनाशदा ॥ १३ ॥

दूसरे राजाके आनेका भय हो, मनुष्योंको दुर्भिक्ष तथा जलका भय हो, सूर्य, चंद्रमाके बाँयीतर्फ होकर पडे तो शहरसे अलग तुच्छ बाहर गावोंमें रहनेवाले जनोंको पीडा करती है ॥ १३ ॥

उदयास्तमयेऽर्केंद्वोः परतोल्का शुभप्रदा ॥
सितरक्ता पीतसिता सोल्का नेष्टा द्विजातिभिः ॥ १४ ॥
सितोदितोभये पार्श्वे पुच्छे दिक्षु विदिक्षु च ॥
विप्रादीनामनिष्टानि पतितोल्कादिभान्यपि ॥ १९ ॥

सूर्य अथवा चंद्रमाके उदय होनेके बाद संधिमें पडे तो शुभदायक जानना और सफेद लाल तथा पीलीसफेद उल्का पडे तो द्विजातियोंको अच्छी नहीं है दोनों बराबर सफेद वर्ण हों । उल्काका पुच्छ भाग दिशाओंमें रहे अथवा अग्निकोण आदि विदिशाओंमें रहे तब पृथ्वीपर पड़े तो ऐसे टूटे हुए तारे ब्राह्मण आदि वर्णोंको अशुभ हैं तिनको कहते हैं ॥ १४ ॥ १५ ॥

तारा कुंदनिभा स्निग्धा भूभुजां तु शुभप्रदा ॥
नीला श्यामारुणा चाग्निवर्णोक्ता साशुभप्रदा ॥ १६ ॥

कुंदपुष्प समान सफेद, चिकना तारा टूटे तो राजाओंको शुभदायक है। नील, श्याम, लाल, अग्निसमान वर्णवाला तारा टूटे तो अशुभदायक जानना१६

संध्यायां वह्निपीडा च दलिता राजनाशिनी ॥
नक्षत्रग्रहणे देवस्तद्वर्णानामनिष्टदा ॥ १७ ॥

संध्यासमयमें तारा टूटे तो अग्निकी पीडा करे । खंडित हुआ तारा दीखे तो राजाको नष्ट करे और जिनके नक्षत्रोंका देवता गुण हो उन पुरुषोंको अशुभफल जानना ॥ १७ ॥

स्थिरधिष्ण्येषु पतिता स्त्रीणां चोक्ता भयप्रदा ॥
क्षिप्रभेषु विशां पीडा भूपतीनां चरेषु च ॥ १८ ॥

स्थिरसंज्ञक नक्षत्रोंमें पडे तो स्त्रियोंको अशुभ जानना, क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रोंमें पडी हुई तारा वैश्योंको पीडा करै और चरसंज्ञक नक्षत्रोंमें पडे तो राजाओंको पीडित करे ॥ १८ ॥

मृदुभेषु द्विजातीनां दारुणं दारुणेषु च ॥
उग्रभेषु च शूद्राणां परेषां मिश्रभेषु च ॥ १९ ॥

मृदुसंज्ञक नक्षत्रोंमें पड़े तो ब्राह्मणोंको पीडा करै, दारुण (तीक्ष्ण) नक्षत्रोंमें पडे तो दारुण दुष्टपुरुषोंको पीड़ा करै,उग्रसंज्ञक नक्षत्रोंमें पडे तो शूद्रोंको पीडा करै और मिश्रसंज्ञक नक्षत्रोंमें नीच जातियोंको पीडित करै ॥ १९ ॥

राजराष्ट्रस्वनाशाय प्रासादप्रतिमासु च ॥
गृहेषु स्वामिनां पीडा नृपाणां पर्वतेषु च ॥ २० ॥

राजाके भवनमें अथवा देवताओंकी मूर्तियोंपर बिजली पडे तो राज्यको नष्ट करे, घरमें पडे तो घरके मालिकको पीड़ा करै और पर्वतोंपर पडे तो राजाओंको पीडा करै ॥ २० ॥

दीक्षितानां दिगीशानां कर्षकाणां स्थलेषु च ॥
प्राकारे परिखायां वा द्वारि तत्पौरमध्यमे ॥ २१ ॥

स्थलमें पडे तो दीक्षित (ब्रह्मचारी आदि), दिशाओंके स्वामी तथा किसानलोगोंको पीडा करे और किला, कोट, खाही, शहरका दरवाजा,शहरका मध्यभाग ॥ २१ ॥

परचक्रागमभयं राज्यं पौरजमक्षयः ॥
गोष्ठे गोस्वामिनां पीडा शिल्पिकानां जलेषु च ॥ २२ ॥

इनमें पडे तो दूसरा राज्य आनेका भय हो और शहरके लोगोंका नाश हो गोशालमें पडे तो गौओंके स्वामियोंको पीडा हो, जलमें पडे तो शिल्पी (कारीगरों) को पीडा हो ॥ २२ ॥

राजहंत्री तंतुनिभा चेंद्रध्वजसमाथवा ॥
प्रतीपगा राजपत्नीं तिर्यगा च चमूपतिम् ॥ २३ ॥

तंतुसमान आकारवाली पडे तो राजाको नष्ट करै, इंद्रधनुष समान पड़े तो भी राजाको नष्ट करे और उलटी होकर पडे तो राजाकी रानीको नष्ट करै, तिरछी पडे तो सेनापतिको नष्ट करै ॥ २३ ॥

अधोमुखी नृपं हंति ब्राह्मणानूर्ध्वगा तथा ॥
वृक्षोपमा पुच्छनिभा जनसंक्षोभकारिणी ॥ २४ ॥

नीचेको मुखवाली उल्का राजाको नष्ट करै, ऊपरको मुखवाली ब्राह्मणोंको नष्ट करे,वृक्षसमान तथा पूंछसमान आकारवाली उल्का मनुष्यमात्रको त्रास देती है ॥ २४ ॥

प्रसर्पिणी या सर्प्पवत्सा गणानामानिष्टदा ॥
वर्तुलोल्का पुरं हंति च्छत्राकारा पुरोहितम् ॥ २५ ॥

सर्पकी तरफ फैलती हुई उल्का (बिजली) पडे तो किसी भी चाकर लोगोंको अशुभ है । गोल उल्का पडे तो पुरको नष्ट करे और छत्राकार पडे तो, राजाके पुरोहितको नष्ट करै ॥ २५ ॥

वंशगुल्मलताकारा राष्ट्रविद्राविणी तथा ॥
सूकरव्यालसदृशा खंडाकारा च पापदा ॥ २६ ॥

बांस, गुल्म, लता इनके समान आकारवाली पडे तो राष्ट्रको नष्ट करै और सूकर, सर्प तथा खंडित आकारवाली उल्का पडे तो पापदायक (अशुभदायक है) ॥ २६ ॥

इंद्रचापनिभा राज्यं मूर्छिता हंति तोयदम् ॥ २७ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायामुल्कालक्षणाध्याय-
स्त्रिचत्वारिंशत्तमः ॥ ४३ ॥

इंद्रधनुष समान आकारवाली पडे तो राज्यको नष्ट करे और मूर्च्छिता अर्थात् कांतिहीन उल्का (बिजली) पडे तो जलका काम करनेवाले जनोंको पीडित करै ॥ २७ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटी० उल्कालक्षणाध्याय-
स्त्रिचत्वारिंशत्तमः ॥ ४३ ॥

किरणा वायुनिहता उच्छ्रिता मंडलीकृताः ॥
नानावर्णाकृतयस्ते परिवेषाः शशीनयोः ॥ १ ॥

जो वायुसे निहत हुई सूर्य वा चंद्रमाकी किरण ऊपरको होके मंडलाकार होजाती हैं उनके अनेक वर्ण और अनेक आकार होते हैं तिनको सूर्यचंद्रमाके परिवेष (मंडल) कहते हैं ॥ १ ॥

ते रक्तनीलपांडूरकपोताभ्राश्च कापिलाः ॥
सपीतशुकवर्णाश्च प्रागादिदिक्षु वृष्टिदाः ॥ २ ॥
मुहुर्मुहुः प्रलीयंते न संपूर्णफलप्रदाः ॥
शुभास्तु कापिलाः स्निग्धाः क्षीरतैलांबुसन्निभाः ॥ ३ ॥

वे मंडल लाल, नीला, पांडुरवर्ण (गुलाबी) कपोतसरीखे तथा बादल सरीखे वर्णवाले तथा कपिल वर्णवाले पीले तथा हरे इन वर्णोंके होते हैं। ये वर्ण यथाक्रमसे पूर्वादि दिशाओंमें होवें तो वर्षा होवे और जो मंडलके वर्ण बारंबार हो होकर नष्ट होजावें तो पूरा फल नहीं करते हैं। कपिलवर्ण, चिकने दूध तथा तेल व जलसरीखी कांतिवाले ॥ २ ॥ ३ ॥

चापशृंगाटकरथक्षतजाभारुणाः शुभाः ॥
अनेकवृक्षवर्णाश्च परिवेषा नृपांतकृत् ॥ ४ ॥

धनुष, चौपट, रथ इनके आकार तथा रक्तसमान लाल ऐसे कुंडल शुभदायक कहे हैं अनेक दरखतोंके समान आकार हरे कुण्डल राजाओंको नष्ट करते हैं ॥ ४ ॥

अहर्निशं प्रतिदिनं चंद्रार्कावरुणो यदा ॥
परिविष्टो नृपवधं कुरुतो लोहितौ यदा ॥ ५ ॥

जो दिनरात नियम करके अर्थात् दिनमें सूर्यके और रात्रिमें चंद्रमाके इस प्रकार सूर्यचंद्रमाके लालवर्ण मंडल बना रहे तो राजाकी मृत्यु हो ॥ ५. ॥

द्विमंडलश्चमूनाथं नृपघ्नोऽथ त्रिमंडलम् ॥
परिवेषगतः सौरिः क्षुद्रधान्यविनाशकृत् ॥ ६ ॥

दो मंडल होवें तो सेनापतिको नष्ट करे, तीन मंडल होवें तो राजाको नष्ट करे, मंडलके मध्यमें शनि प्राप्त होवे तो तुच्छ धान्योंका नाश हो ॥६॥

रणकृद्भूमिजो जीवः सर्वेषामभयप्रदः ॥
ज्ञः सस्यहानिदः शुक्रो दुर्भिक्षकलहप्रदः ॥ ७ ॥

मंगल मंडलमें आजाय तो युद्ध करावे, बृहस्पति हो तो सबको अभय करे, बुध हो तो खेतीका नाश करे,और शुक्र मंडलमें प्राप्त हो तो दुर्भिक्ष तथा कलह करे ॥ ७ ॥

परिवेषगतः केतुर्दुर्भिक्षकलहप्रदः ॥
पीडां नृपवधं राहुर्गर्भच्छेदं करोति च ॥ ८ ॥

केतु सूर्यमण्डलमें आजाय तो दुर्भिक्ष तथा कलह करे और राहु मंडलमें आजय तो पीडा, राजाकी मृत्यु, गर्भच्छेद यह फल करता है ॥ ८॥

द्वौ ग्रहौ परिवेषस्थौ क्षितीशकलहप्रदौ ॥
कुर्वंति कलहानर्घं परिवेषगतास्त्रयः ॥ ९ ॥

दो ग्रह मंडलमें प्राप्त होवें तो राजाओंका युद्ध हो, तीन ग्रह होवें तो कलह तथा अन्नका भाव महँगा करे ॥ ९ ॥

चत्त्वारः परिवेषस्था नृपस्य मरणप्रदाः ॥
परिवेषगताः पंच बलप्रबलदा ग्रहाः ॥ १० ॥

चार ग्रह होवें तो राजाकी मृत्यु करैं और मण्डलमें पांच ग्रह होवें तो बलदायक (शुभफलदायक) जानने ॥ १० ॥

एवं वक्रग्रहास्तेषामेवं फलनिरूपणम् ॥
नृपहानिः कुजादीनां परिवेषे पृथक् पृथक् ॥ ११ ॥

इसी प्रकार जो दो चार वक्री ग्रह हों उनका भी फल जानना । मंगल आदि पृथक् २ ग्रह चन्द्रमण्डलमें होवें तो राजाकी हानि हो ॥ ११ ॥

परिवेषोऽपि धिष्ण्यानां फलमेवं द्वयोस्त्रिषु ॥
परिवेषो द्विजातीनां नेष्टः प्रतिपदादिषु ॥ १२ ॥

इसीतरह अन्य भी दो वा तीन तारे चन्द्रमण्डलमें होवें तो उनका फल जानना और प्रतिपदा आदि चार तिथियोंमें सूर्यके वा चन्द्रमाके मण्डलमें होय तो ब्राह्मणोंको अशुभ फल जानना ॥ १२ ॥

पंचम्यादिषु तिसृषु ह्यशुभो नृपतेस्तथा ॥
अष्टम्यां युवराजस्य परिवेषोऽप्यभीष्टदः ॥ १३ ॥

पंचमी आदि तीन तिथियोंमें मण्डल होय तो राजाको अशुभ जानना । अष्टमीके दिन मण्डल हो तो युवराजको शुभदायक जानना ॥ १३ ॥

ततस्तिसृषु तिथिषु नृपाणामशुभप्रदः ॥
पुरोहितस्य द्वादश्यां विनाशाय भवेदसौ ॥ १४ ॥
सैन्यक्षोभस्त्रयोदश्यां नृपरोधमथापि वा ॥
राजपत्न्यश्चतुर्दश्यां परिवेषो गदप्रदः ॥ १५ ॥

नवमी आदि तीनतिथियोंमें राजाओंको अशुभ जानना । द्वादशीको मंडल होय तो राजाके पुरोहितका नाश हो, त्रयोदशीके दिन हो तो सेनाका कोप

हो अथवा राजाका अवरोध हो और चतुर्दशीके दिन हो तो रानीके रोग होवे ॥ १४ ॥ १५ ॥

परिवेषः पंचदश्यां क्षितीशानामनिष्टदः ॥
परिवेषस्य मध्ये वा बाह्ये रेखा भवेद्यदि ॥ १६ ॥
स्थायिनां मध्यमा नेष्टा यायिनां पार्श्वसंस्थिता ॥
प्रावृट्तौ च शरदि परिवेषो जलप्रदः ॥ १७ ॥

पूर्णिमाको मण्डल होय तो राजाओंको अशुभ है, मण्डलके मध्यमें अथवा बाहिरकी तर्फ रेखा होय तो स्थायी (अपने किलामें स्थित रहनेवाले) राजाओंको मध्यम जानना और बराबरोंमें रेखा होय तो गमन करनेवाले राजाओंको अशुभ जानना । प्रावृट् ऋतुमें तथा शरदऋतुमें मण्डल होय तो वर्षा करे ॥ १६ ॥ १७ ॥

प्रायेणान्येषु ऋतुषु तदुक्तफलदायिनः ॥ १८ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां परिवेषलक्षणाध्यायश्चतु-
श्चत्वारिंशत्तमः ॥ ४४ ॥

और विशेषकरके अन्य ऋतुओंमें सूर्य वा चन्द्रमाके मण्डल होंय तो जैसा पूर्व कहा है वही फल जानना ॥ १८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां परिवेषलक्षणाध्याय-
श्चतुश्चत्वारिंशत्तमः ॥ ४४ ॥

नानावर्णांशवो भानोः साभ्रवायुविघट्टिताः ॥
यद्व्योम्नि चापसंस्थानमिंद्रचापं प्रदृश्यते ॥ १ ॥

सूर्यकी किरण बादल और वायुके संयोगसे अनेक प्रकारके रंगोंवाली होकर आकाशमें धनुषके आकार हो जाती हैं वह इन्द्रधनुष कहलाता है॥१॥

अथवा शेषनागेंद्रदीर्घनिश्वाससंभवम् ॥
विदिक्षुजं दिक्षुजं च तद्दिङ्नृपविनाशनम् ॥ २ ॥

अथवा सर्पराज शेषनागके उच्च श्वास लेनेसे इन्द्रधनुष हो जाता है वह जिस दिशामें अथवा जिस कोणमें होय तिसी देशके राजाको नष्ट करे ॥२॥

पीतपाटलनीलैश्च वह्निशस्त्रास्त्रभीतिदम् ॥
वृक्षजं व्याधिदं चापं भूमिजं सस्यनाशदम् ॥ ३ ॥

अवृष्टिदं जलोद्भूतं वल्मीके युद्धभीतिदम् ॥
अवृष्टौ वृष्टिदं चैंद्यां दिशि वृष्ट्यामवृष्टिदम् ॥ ४ ॥

पीला, पाडलवर्ण, नीलावर्ण इन्द्रधनुष होय तो अग्नि तथा युद्धका भय करे । वृक्षके ऊपर किरणोंकी कांति पड़के धनुषाकार दीखे तो प्रजामें रोग हो तथा भूमिपर दीखे तो खेतीको नष्ट करे और जलमें कांति पडके धनुष दीखे तो वर्षा नहीं होवे । बमईमें धनुषकी कांति पडे तो प्रजामें युद्धका भय हो, पूर्वदिशामें इन्द्रधनुष होय तो वर्षा नहीं होती हो तो वर्षा होने लगे और वर्षा होते हुए पूर्वदिशामें इन्द्रधनुष दीखे तो वर्षा होनी बन्द हो जाय ॥ ३ ॥ ४ ॥

सदैव वृष्टिदं पश्चाद्दिशोरितरयोस्तथा ॥
रात्र्यामिंद्रधनुः प्राच्यां नृपहानिर्भवेद्यदि ॥ ५ ॥

पश्चिमदिशामें इंद्रधनुष दीखे तो सदा वर्षा करता है, अन्यदिशाओंमें (उत्तरदक्षिणमें) हो तो भी वर्षा करे । रात्रिमें पूर्वदिशामें इंद्रधनुष दीखे तो राजाकी हानि करे ॥ ५ ॥

याम्यां सेनापतिं हंति पश्चिमे नाथकोत्तमम् ॥
मंत्रिणं सौम्यदिग्भागे सचिवं कोणसंभवम् ॥ ६ ॥

दक्षिणदिशामें दीखे तो सेनापतिको नष्ट करे, पश्चिममें हो तो बडे हाकिम (सरदार) को नष्ट करे, उत्तर तथा ईशान आदि कोणोंमें दीखे तो राजाके मंत्रीको नष्ट करे ॥ ६ ॥

रात्र्यामिंद्रधनुः शुक्लवर्णाढ्यं विप्रपूर्वकम् ॥
हंति यद्दिग्भवं स्पष्टं तद्दिगीशनृपोत्तमम् ॥ ७ ॥

रात्रिमें पूर्वदिशामें सफेदवर्ण इंद्रधनुष दीखे तो ब्राह्मणोंको नष्ट करे और जिस दिशामें स्पष्ट इंद्रधनुष दीखे उसी दिशाका राजा नष्ट होता है ॥ ७ ॥

अवनीगाढमच्छिन्नं प्रतिकूल धनुर्द्वयम् ॥
नृपांतकृद्यदि भवेदानुकूल्य न तच्छुभम् ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायामिंद्रचापलक्षणाध्यायः पंचचत्वारिंशत्तमः॥४५

विना कटा हुआ धनुष पृथ्वीपर शुभ फल करता है, दो धनुष अशुभफल करते हैं और राजाको नष्ट करते हैं अनुकूल शुभ फल नहीं करते ॥ ८ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायामिंद्रचापलक्षणाध्यायः
पंचचत्वारिंशत्तमः ॥ ४५ ॥

गन्धर्वनगरं दिक्षु दृश्यतेऽनिष्टदं क्रमात् ॥
भूभुजां वा चमूनाथसेनापतिपुरोधसाम् ॥ १ ॥

दिशाओंमें गंधर्वनगर दीखना यथाक्रमसे राजा, सेनापति, मंत्री, पुरोहित इनको अशुभफल करता है ॥ १ ॥

सितरक्तपीतकृष्णं विप्रादीनामनिष्टदम् ॥
रात्रौ गन्धर्वनगरं धराधीशविनाशनम् ॥ २ ॥

और सफेद, लाल, पीला, काला, ये वर्ण दीखने यथाक्रमसे ब्राह्मण आदिकोंको अशुभ हैं, रात्रिमें गंधर्वनगर दीखे तो राजाको नष्ट करे ॥ २ ॥

इंद्रचापाग्निधूमाभं सर्वेषामशुभप्रदम् ॥
चित्रवर्णं चित्ररूपं प्राकारध्वजतोरणम् ॥ ३ ॥

इंद्रधनुष, अग्नि, धूम इन्होंके सदृश गंधर्वनगर दीखे तो सभीको अशुभफलदायक है। विचित्रवर्ण, विचित्ररूप, कोटका आकार, ध्वजा, तोरण ॥ ३ ॥

दृश्यते चेन्महायुद्धमन्योन्यं धरणीभुजाम् ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां गन्धर्वनगरदर्शनाध्यायः
षट्चत्वारिंशत्तमः ॥ ४६ ॥

इन्होंके आकार दीखें तो राजाओंका आपसमें महान् युद्ध हो ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां गंधर्वनगरदर्शनाध्यायः
षट्चत्वारिंशत्तमः ॥ ४६ ॥

प्रतिसूर्यनिभः स्निग्धः सूर्यः पार्श्वे शुभप्रदः ॥
वैडूर्यसदृशस्वच्छः शुक्लो वाऽपि सुभिक्षकृत् ॥ १ ॥

सूर्यके तेजसे बादलमें दूसरा सूर्य दीख जाता है वह स्निग्धवर्ण तथा बराबरमें दीखे तो शुभ है और वैडूर्य मणिके समान स्वच्छ सफेद दीखे तो सुभिक्ष करता है ॥ १ ॥

पीताभो व्याधिदः कृष्णो मृत्युदो युद्धदारुणः ॥
माला चेत्प्रतिसूर्याणां शश्वच्चौरभयप्रदा ॥ २ ॥

पीलावर्ण प्रतिसूर्य दीखे तो प्रजामें बीमारी हो, कालावर्ण होय तो मृत्युदायक तथा दारुण युद्ध होता है। बादलमें प्रतिसूर्योंकी माला दीखे तो निरंतर चोरोंका भय हो ॥ २ ॥

जलदोदक्प्रतिसूर्यो भानोर्याम्येनिलप्रदः ॥
उभयस्थोंबुभयदो नृपहोपर्यधो नृहा ॥ ३ ॥

उत्तरदिशामें प्रतिसूर्य दीखे तो वर्षा होवे, दक्षिणदिशामें दीखे तो वायु चले, दोनों तर्फ बराबरोंमें प्रतिसूर्य दीखे तो वर्षाको बंद करे, सूर्यके ऊपर प्रतिसूर्य दीखे तो राजाको नष्ट करे और सूर्यके नीचे प्रतिसूर्य दीखे तो प्रजाको नष्ट करे ॥ ३ ॥

पराभवंति तीक्ष्णांशोः प्रतिसूर्याः समंततः ॥
जगद्विनाशमाप्नोति तथा शीतद्युतेरपि ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां प्रतिसूर्यलक्षणाध्यायः सप्तचत्वारिंशत्तमः ॥ ४७ ॥

सूर्यके चारों तर्फ प्रतिसूर्य होकर साक्षात् सूर्यकी क्रांतिको हीन कर देवे तो जगत्का नाश हो, इसी प्रकार चन्द्रमाका भी फल जानना ॥ ४ ॥

इति श्रीनारदीयसंहि० भाषाटी० प्रतिसूर्यलक्षणा ध्यायः सप्तचत्वारिंशत्तमः ॥ ४७ ॥

अथ निर्घातलक्षणम् ।

वायुनाभिहितो वायुर्गगनात्पतति क्षितौ ॥
यदा दीप्तः खगुरुतः स निर्घातोऽतिदोषकृत् ॥ १ ॥

वायुसे प्रतिहत हुआ वायु आकाशसे पृथ्वीपर पडता है और जो अपने भारीपनसे प्रदीप्त होता है वह निर्घात अत्यंत दोषदायक है। यह बिजली पडनेका लक्षण जानना ॥ १ ॥

निर्घातोऽर्कोदये नेष्टः क्षितीशानां विनाशदः ॥
आयामात्पाक्पौरजनशूद्राणां चैव हानिदः ॥ २ ॥

सूर्य उदय समय निर्घात होय तो राजाओंको अशुभ है यानी नष्ट करनेवाला है । प्रहरदिन चढेके पहिले तो शहरमें रहनेवाले शूद्रोंको हानिदायक है ॥ २ ॥

आमध्याह्ने तु विप्राणां नेष्टो राजोपजीविनाम् ॥
तृतीययामे वैश्यानां जलजानामनिष्टदः ॥ ३ ॥

चतुर्थे चार्थनाशाय संध्यायां हन्ति सङ्करान् ॥
आद्ये यामे सस्यहानिर्द्वितीये तु पिशाचकान् ॥ ४ ॥

मध्याह्नतक निर्घात होय तो ब्राह्मणोंको तथा राजद्वारमें नौकर रहनेवाले जनोंको अशुभ है, तीसरे प्रहरमें होय तो वैश्योंको तथा जलचर जीवोंको अशुभ है । दिनके चौथे प्रहरमें धनका नाश करे, सायंकालमें नीचजातियोंको अशुभ है, रात्रिके प्रथम प्रहरमें खेतीकी हानि हो और दूसरे प्रहरमें पिशाचोंको नष्ट करे ॥ ३ ॥ ४ ॥

हंत्यर्द्धरात्रे तुरगांस्तृतीये शिल्पिलेखकान् ॥
चतुर्थयामे निर्घातः पतन् हंति तदा जनान् ॥ ५ ॥

आधीरात समय घोडोंको नष्ट करे, रात्रिके तीसरे प्रहरमें शिल्पी तथा लेखक जनोंको नष्ट करे और रात्रिके चौथे प्रहरमें पडा हुआ निर्घात(बिजली) सब जनोंको नष्ट करता है ॥ ५ ॥

भीषजर्जरशब्दः स तत्र तत्र दिगीश्वरम् ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां निर्घातलक्षणाध्यायोऽष्टचत्वारिंशत्तमः ॥४८॥

वह निर्घात अर्थात् बिजलीका पडना जो भयंकर जर्जरशब्द करे तो जिस दिशामें पडे उसी दिशाके राजाको नष्ट करे ॥ ६ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां निर्घातलक्षणा
ध्यायोऽष्टचत्वारिंशत्तमः ॥ ४८ ॥

दिग्दाहः पीतवर्णश्चेत्क्षितीशानां भयप्रदः ॥
देशनाशायाग्निवर्णोऽरुणवर्णोऽनिलप्रदः ॥ १ ॥

पीतवर्ण दिग्दाह होवे तो राजाओंको भय करे, अग्निसमान वर्ण हो तो देशका नाश करे, लालवर्ण हो तो वायु चलावे । ऐसे यह दिग्दाह अर्थात् सूर्यके उदय वा अस्त होनेके समय दिशाओंपर लाल आदि रंग दीख जाते हैं ॥ १ ॥

धूमः सस्यविनाशाय कृष्णः शस्त्रभयप्रदः ॥
प्राग्दाहः क्षत्रियाणां च नरेशानामनिष्टदः ॥ २ ॥

धूमवर्ण हो तो खेतीको नष्ट करे, काला वर्ण हो तो शस्त्रका भय हो, पूर्वदिशामें दिग्दाह दीखे तो क्षत्रियोंको और राजाओंको अशुभ फल करे॥२॥

आग्नेय्यां युवराजस्य शिल्पिनामशुभप्रदः ॥
पीडां व्रजंति याम्यायां मूकवैश्यनराधमाः ॥ ३ ॥

अग्निकोणमें हो तो युवराज तथा शिल्पीजनोंको अशुभ फल करे, दक्षिणदिशामें हो तो मूढजन, वैश्य और अधमजनोंको पीडा हो ॥ ३ ॥

नैर्ऋत्यां दिशि चौराश्च पुनर्भूप्रमदा नृणाम् ॥
प्रतीच्यां कृषिकर्तारो वायव्यां पशुजातयः ॥ ४ ॥

नैर्ऋत कोणमें हो तो चोर, दूसरे विवाह करानेवाले जन और स्त्रीको पीडा हो । पश्चिमदिशामें हो तो किसान लोग और वायुकोणमें हो तो पशुजाति नष्ट होवें ॥ ४ ॥

सौम्ये विप्रादि चैशान्यां वैश्यानां खंडिनोऽखिलाः ॥
दिग्दाहः स्वर्णवर्णाभो लोकानां मङ्गलप्रदः ॥ ५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां दिग्दाहलक्षणाध्याय एकोनपंचाशत्तमः ॥ ४९ ॥

उत्तरमे हो तो ब्राह्मण आदि और ईशानकोणमें हो तो वैश्योंको अथवा सम्पूर्ण लोगोंको पीडा हो और सुवर्णसमान प्रदीप्त कांतिवाला दिग्दाह होवे तो सम्पूर्ण लोगोंको शुभदायक है ॥ ५ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां दिग्दाहलक्षणाध्याय एकोनपंचाशत्तमः ॥ ४९ ॥

अथ रजोलक्षणाध्यायः ।

सितेन रजसा छिन्नदिग्ग्रामवनपर्वताः ॥
यथा तथा भवंत्यंते निधनं यांति भूमिपाः ॥ १ ॥

दिशा, ग्राम, वन, पर्वत ये सफेदवायुसे आच्छादित हो जाँय अर्थात् आँधी चढकर आकाशमें सफेद गरम चढ जाय तो राजालोग मृत्युको प्राप्त होवें ॥ १ ॥

रजःसमुद्भवो यस्यां दिशि तस्यां विनाशनम् ॥
तत्रतत्रापि जंतूनां हानिदः शस्त्रकोपतः ॥ २ ॥

और जिस दिशामें रज (आँधी) उड़कर चलके आवे उसी दिशाके प्राणियोंके शस्त्रकोपसे हानि करे ॥ २ ॥

मंत्रीजनपदानां च व्याधिदं चासितं रजः ॥
अर्कोदये विजृंभंति गगनं स्थगयंति च ॥ ३ ॥
दिनद्वयं च त्रिदिनमत्युग्रभयदं रजः ॥
रजो भवेदेकरात्रं नृपं हन्ति निरन्तरम् ॥ ४ ॥

काले वर्णकी रज (आंधी) राजमंत्रीको व देशोंको हानि करती है, सूर्योदयके समय आंधी चलकर आकाशको आच्छादित कर दे तो दो दिन तथा तीनदिन तक अत्यंत उग्रवायु चले और एकरात्रितक निरंतर धूल चढी रहे तो राजाको नष्ट करे ॥ ३ ॥ ४ ॥

परचक्रागमं न स्याद्द्विरात्रं सततं यदि ॥
क्षामडामरमातंकस्त्रिरात्रं सततं यदि ॥ ५ ॥

दो रात्रितक निरंतर धूल चढ़ी रहे तो परचक्रागमन नहीं होता और तीन रात्रितक धूल बनी रहे तो दुष्ट डाकू जनोंका प्रजामें भय हो, रोग हो ॥ ५ ॥

ईतिदुर्भिक्षमतुलं यदि रात्रचतुष्टयम् ॥
निरन्तरं पंचरात्रं महाराजविनाशनम् ॥ ६ ॥

चार रात्रितक रहे तो टीडी आदि ईति तथा दुर्भिक्षका अत्यंत भय हो, निरंतर पांचरात्रितक हो तो महाराजाको नष्ट करे ॥ ६ ॥

ऋतावन्यत्र शिशिरात्संपूर्णफलदं रजः ॥ ७ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां रजोलक्षणाध्यायः पंचाशत्तमः ॥५०॥

शिशिर ऋतुके बिना अन्य ऋतुकी रज (अंधी) चलना पूरा फल करती है अर्थात् शिशिर ऋतुमें अंधी चलनेका (ज्यादे पवन चलनेका) कुछ दोष नहीं है ॥ ७ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां रजोलक्षणाध्यायः
पंचाशत्तमः ॥ ५० ॥

भूभारखिन्ननागेंद्रदीर्घनिःश्वाससंभवः ॥
भूकंपः सोऽपि जगतामशुभाय भवेत्तदा ॥ १ ॥

पृथ्वीके भारसे खिन्न हुए शेषनागके ऊंचे श्वास लेनेसे भूकंप अर्थात् भूमिकांपना (भौंचाल) होता है, वह संसारको अशुभ फलदायी है ॥ १ ॥

यामक्रमेण भूकंपो द्विजातीनामनिष्टदः ॥
अनिष्टदो क्षितीशानां संध्ययोरुभयोरपि ॥ २ ॥

प्रहरके क्रमसे भूकंप, द्विजातियोंको अशुभफल देता है, जैसे दिनके प्रथम प्रहरमें ब्राह्मणोंको अशुभ, २ प्रहरमें क्षत्रियोंको, ३ में वैश्योंको और चौथे प्रहरमें शूद्रोंको अशुभ जानना और दोनों संधियोंमें भूकंप होय तो राजाओंको अशुभ है ॥ २ ॥

अर्यमाद्यानि चत्वारि दस्रेंद्वदितिभानि च ॥
वायव्यमंडलं त्वेतदस्मिन्कंपो भवेद्यदि ॥ ३ ॥

और उत्तराफाल्गुनी आदि चार नक्षत्र, अश्विनी, मृगाशिर, पुनर्वसु इन नक्षत्रोंकी 'वायव्यमण्डल' संज्ञा है इसमें भूकंप होय तो ॥ ३ ॥

नृपसस्यवणिग्वेश्याशिल्पवृष्टिविनाशदः ॥
पुष्यद्विदैवभरणी पितृभाग्यानलाऽजपात् ॥ ४ ॥

खेती, राजा, वैश्य, वेश्या, कारीगर, वर्षा इन्होंका नाश हो और पुष्य, विशाखा, भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, कृत्तिका, पूर्वाभाद्रपद ॥ ४ ॥

आग्नेयमंडलं त्वेतदस्मिन्कंपो भवेद्यदि ॥
नृपवृष्टचर्घनाशाय हन्ति शांबरटङ्कणान् ॥ ५ ॥

यह इन नक्षत्रोंका 'अग्निमंडल' कहाता है, इसमें भूकंप हो तो राजाका नाश हो, वर्षा नहीं हो, भाव महँगा रहे, शांभरनमक, सुहागा इत्यादि वस्तु महंगी रहें ॥ ५ ॥

अभिजिद्धातृवैश्वेंद्रवसुवैष्णवमैत्रभम् ॥
वासवं मंडलं त्वेतदस्मिन् कंपो भवेद्यदि ॥ ६ ॥

अभिजित्, रोहिणी, उत्तराषाढ, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, श्रवण, अनुराधा इन्होंका समूह 'वासवमंडल' कहाता है, इसमें भूकंप होवे तो ॥ ६ ॥

राजनाशाय कोपाय हंति माहेयदर्दुरान् ॥
मूलाहिर्बुध्न्यवरुणाः पौष्णमार्द्राहिभानि च ॥ ७ ॥

राजाका नाश हो और राजाओंका वैर हो माहेय तथा दर्दुर देशोंका नाश हो। मूल, उत्तराभाद्रपद, शतभिषा, रेवती, आर्द्रा, आश्लेषा ॥ ७ ॥

वारुणं मंडलं त्वेतदस्मिन् कंपो भवेद्यदि ॥
राजनाशकरो हंति पौण्ड्रचीनपुलिंदकान् ॥ ८ ॥

यह ' वारुणमंडल ' कहा है, इसमें भूकंप होय तो राजाको नष्ट करे और पौण्ड्र, चीन, पुलिंद इन देशोंको नष्ट करे ॥ ८ ॥

प्रायेण निखिलोत्पाताः क्षितीशानामनिष्टदाः ॥
षड्भिर्मासैश्च भूकंपो द्वाभ्यां दाहफलप्रदः ॥ ९ ॥

विशेष करिके संपूर्ण उत्पात राजाओंको अशुभ कहे हैं, भूकंपका फल छः महीनेमें होता है और दोमहीनोंमें दिग्दाहका फल होता है ॥ ९ ॥

अनुक्तः पंचभिर्मासैस्तदानीं फलदं रजः ॥ १० ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां भूकंपलक्षणाध्याय एकपंचाशत्तमः ॥ ५१ ॥

और रज अर्थात् आँधी चलनेका तथा अन्यवस्तुका उत्पात पांच महीनोंमें फल करता है ॥ १० ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां भूकंपलक्षणाध्याय एकपंचाशत्तमः ॥ ५१ ॥

अथ नक्षत्रजातफलम् ।

सुरूपः सुभगो रूक्षो मतिमान्भूषणप्रियः ॥
अंगनावल्लभः शूरो यो जातश्चाश्विभे नरः ॥ १ ॥

सुंदररूपवान्, सुंदरऐश्वर्यवान्, रूक्षवर्ण, बुद्धिमान्, आभूषणप्रिय, स्त्रियोंका प्रिय, शूरवीर, ऐसा मनुष्य अश्विनीनक्षत्रमें जन्मनेसे होता है ॥ १ ॥

कामोपचारकुशलः सत्यवादी दृढव्रतः ॥
अरोगः सुभगो जातो भरण्यां लघुभुक्सुखी ॥ २ ॥

कामशास्त्रमें निपुण, सत्यबोलनेवाला, दृढनियमवाला, रोगरहित, सुंदर ऐश्वर्यवान्, हलका भोजन करनेवाला, सुखी ऐसा मनुष्य भरणीमें जन्मनेसे होता है ॥ २ ॥

तेजस्वी मतिमान्दाता बहुभुक्प्रमदाप्रियः ॥
गंभीरः कुशलो मानी वह्निनक्षत्रजः शुचिः ॥ ३ ॥

तेजस्वी, बुद्धिमान्, दाता, बहुत भोजन करनेवाला, स्त्रियोंसे प्यार रखनेवाला, गंभीर, चतुर, मानी ऐसा पुरुष कृत्तिका नक्षत्रमें जन्मनेसे होता है ॥ ३ ॥

सुरूपः स्थिरधीर्मानी भोगवान्सुरतप्रियः ॥
प्रियवाक्चतुरो दक्षस्तेजस्वी ब्रह्मधिष्ण्यजः ॥ ४ ॥

और सुन्दररूपवान्, स्थिरबुद्धिवाला, मानी, भोगवान्, मैथुनप्रिय, प्रिय बोलनेम चतुर, सब कामोंमें निपुण, तेजस्वी ऐसा पुरुष रोहिणीमें जन्मनेसे होता है ॥ ४ ॥

उत्साही चपलो भीरुर्धनी सामप्रियः शुचिः ॥
आगमज्ञः प्रभुर्विद्वानिंदुनक्षत्रजः सदा ॥ ५ ॥

और मृगशिरमें जन्मनेवाला मनुष्य चपल, उत्साहवाला, डरपोक, धनी साम (समझना) में प्रिय, पवित्र, शास्त्रको जाननेवाला, प्रभु और विद्वान् होता है ॥ ५ ॥

अविचारपरः क्रूरः क्रयविक्रयनैपुणः ॥
गवि हिंस्रश्चंडकोपी कृतघ्नः शिवधिष्ण्यजः ॥ ६ ॥

और आर्द्रा नक्षत्रमें जन्मनेवाला पुरुष विचारवान् नहीं होता; किन्तु क्रूर तथा खरीदने बेचनेके व्यवहारमें निपुण, हिंसा करनेवाला, प्रचण्ड कोपवाला और कृतघ्न होता है ॥ ६ ॥

दुर्मेधा वा दर्शनीयः परस्त्रीकार्यनैपुणः ॥
सहिष्णुरत्यसंतुष्टः शीघ्रगोऽदितिधिष्ण्यजः ॥ ७ ॥

पुनर्वसुमें जन्मनेवाला जन खराब बुद्धिवाला, दर्शनीय, परस्त्रीके कार्यमें निपुण, सहनेवाला, संतोष रहित, शीघ्रगमन करनेवाला होता है ॥ ७ ॥

पंडितः सुगमः शूरः कृपालुर्धार्मिको धनी ॥
कलाभिज्ञः सत्यवादी कामी पुष्यर्क्षजो लघुः ॥ ८ ॥

और पुष्यनक्षत्रमें जन्म होय तो पंडित, सुंदरऐश्वर्यवान्, शूरवीर, कृपालु, धार्मिक, धनी, कलाओंको जाननेवाला, सत्यवादी, सरल ऐसा मनुष्य होता है ॥ ८ ॥

श्रेष्ठो धूर्तः क्रूरशूरौ परदाररतः शठः ॥
अवक्रो व्यसनी दांतः सार्पनक्षत्रजो नरः ॥ ९ ॥

आश्लेषा नक्षत्रमें जन्मनेवाला मनुष्य श्रेष्ठ,धूर्त्त, क्रूर,शूरवीर, परस्त्रीगामी, मूर्ख, कुटिलतारहित, व्यसनी, अथवा जितेंद्रिय होता है ॥ ९ ॥

शूरः स्थूलहनुः कुक्षः कोपवक्तासहः प्रभुः ॥
गुरुदेवार्चने सक्तस्तेजस्वी पितृधिष्ण्यजः ॥ १० ॥

मघानक्षत्रमें जन्मनेवाला मनुष्य शूरवीर, भारीठोडीवाला,स्थूलकुक्षिवाला, क्रोधके वचन बोलनेवाला, नहीं सहनेवाला, समर्थ, गुरु तथा देवताके पूजनमें आसक्त और तेजस्वी होता है ॥ १० ॥

द्युतिमानटनो दाता नृपशास्त्रविशारदः ॥
कार्याकार्यविचारज्ञो भाग्यनक्षत्रजः पटुः ॥ ११ ॥

पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें जन्मनेवाला पुरुष सुंदर, विचरनेवाला, दाता, नृपशास्त्रमें निपुण,कार्य अकार्यके विचारमें निपुण अर्थात् चतुर होता है ११॥

जितशत्रुः सुखी भोगी प्रमदामर्दने कविः ॥
कलाभिज्ञः सत्यरतः शुचिः स्यादर्यमर्क्षजः ॥ १२ ॥

उत्तराफाल्गुनीमें जन्मनेवाला जन शत्रुओंको जीतता है, सुखी तथा भोगी स्त्रियोंसे क्रीडा करनेमें चतुर, कलाओंको जाननेवाला, सत्यरत और पवित्र होता है ॥ १२ ॥

मेधावी तस्करोत्साही परकार्यरतो भटः ॥
परदेशस्थितः शूरः स्त्रीलाभः सूर्यधिष्ण्यजः ॥ १३ ॥

हस्तनक्षत्रमें जन्मनेवाला पुरुष बुद्धिमान्, चोरीमें उत्साहवाला, परकार्यमें रत, शूरवीर, परदेशमें रहनेवाला, पराक्रमी, स्त्रीसे लाभकरनेवाला होता है ॥ १३ ॥

चित्रमाल्यांबरधरः कामशास्त्रविशारदः ॥
द्युतिमान्धनवान्भोगी पंडितस्त्वष्ट्रधिष्ण्यजः ॥ १४ ॥

जो चित्रानक्षत्रमें जन्मे वह विचित्रमाला तथा विचित्र सुन्दर वस्त्रोंको पहिननेवाला और कामशास्त्रमें निपुण होता है । कांतिमान्, धनवान्, भोगी तथा पंडित होता है ॥ १४ ॥

धार्मिकः प्रियवाक्छूरः क्रयविक्रयनैपुणः ॥
कामी वहुसुतो दांतो विद्यावान्मारुतर्क्षजः ॥ १५ ॥

स्वातीनक्षत्रमें जन्मनेवाला मनुष्य धार्मिक, प्रिय बोलनेवाला, शूरवीर, खरीदने बेचनेके व्यवहारमें निपुण, कामी, वहुतपुत्रोंवाला, जितेंद्रिय और विद्यावान् होता है ॥ १५ ॥

अन्यायोपरतः श्लक्ष्णो मायापटुरनुद्यमः ॥
जितेंद्रियोऽर्थवाँल्लुब्धो विशाखर्क्षसमुद्भवः ॥ १६ ॥

अन्यायमें तत्पर, चतुर, माया रचनेमें चतुर, उद्यमरहित, जितेंद्रिय, धनवान्, लोभी ऐसा पुरुष विशाखानक्षत्रमें जन्मनेवाला होता है ॥ १६ ॥

नृपकार्यरतः शूरो विदेशस्थांगनापतिः ॥
सुरूपच्छन्नपापश्च पिंगलो मैत्रधिष्ण्यजः ॥ १७ ॥

राजाके कार्यमें तत्पर, शूरवीर, विदेशमें रहनेवाला, स्त्रियोंका मालिक, सुन्दररूपवान्, गुप्त पाप करनेवाला, पिंगलवर्ण ऐसा पुरुष अनुराधा नक्षत्रमें जन्मनेवाला होता है ॥ १७ ॥

बहुव्ययपरः क्लेशसहः कामी दुरासदः ॥
क्रूरचेष्टो मृषाभाषी धनवानिंद्रधिष्ण्यजः ॥ १८ ॥

बहुत खर्चनेवाला, क्लेशको सहनेवाला, कामी, मुशकिलसे प्राप्त होनेवाला, क्रूरचेष्टावाला, झूठ बोलनेवाला, धनवान् ऐसा पुरुष ज्येष्ठानक्षत्रमें जन्मनेवाला होता है ॥ १८ ॥

हिंस्रो मानी च भोगी च परकार्यप्रकाशकः ॥
मिथ्योपचारस्त्रीलोलः श्लक्ष्णो नैर्ऋतधिष्ण्यजः ॥ १९ ॥

जो मूलनक्षत्रमें जन्मे वह हिंसक, अभिमानी, भोगी, पराये कामको प्रकट करनेवाला, मिथ्या उपचार करनेवाला, स्त्रीविषे चंचल और चतुर होता है ॥ १९ ॥

सुकलत्रः कामचारः कुशलो दृढसौहृदः ॥
क्लेशभाग्वीर्यवान्मानी जलनक्षत्रसंभवः ॥ २० ॥

पूर्वाषाढमें जन्मनेवाला पुरुष सुन्दर स्त्रीवाला, कामी, चतुर, दृढप्रीतिवाला, क्लेश सहनेवाला, बलवान और अभिमानी होता है ॥ २० ॥

नीतिज्ञो धार्मिकः शूरो बहुमित्रो विनीतवान् ॥
सुकलत्रः सुपुत्राढ्यश्चोत्तराषाढसंभवः ॥ २१ ॥

जो उत्तराषाढमें जन्मे वह नीतिशास्त्रको जाननेवाला, धार्मिक, शूरवीर, बहुत मित्रोंवाला, नीतिशास्त्रको जाननेवाला, सुंदर स्त्री और सुंदर पुत्रोंसे युक्त होता है ॥ २१ ॥

उदरे च दृढः श्रीमान्बहुवक्ता धनान्वितः ॥
काव्योक्तसुरताभिज्ञो धार्मिकः श्रवणर्क्षजः ॥ २२ ॥

श्रवणमें जन्मनेवाला पुरुष दृढ उदरवाला, श्रीमान्, बहुत कहनेवाला, धनाढ्य, काव्योंके अलंकारोंको जाननेवाला और धार्मिक होता है ॥ २२ ॥

धार्मिको व्यसनी लुब्धो नृत्यगीतांगनाप्रियः ॥
सामैकसाध्यस्तेजस्वी वीर्यवान्वसुधिष्ण्यजः ॥ २३ ॥

धनिष्ठा नक्षत्रमें जन्मनेवाला नर धार्मिक, व्यसनी, लोभी, नाचना गाना स्त्री इन्होंमें प्यार रखनेवाला, समझानेसे कार्य सिद्ध करनेवाला, तेजस्वी तथा बलवान् होता है ॥ २३ ॥

दुर्गंधो व्यसनी क्रूरः क्षयवृद्धियुतः शठः ॥
परदाररतः शूरः शततारर्क्षसंभवः ॥ २४ ॥

शतभिषानक्षत्रमें जन्म हो तो वह मनुष्य दुर्गंधवाला, व्यसनी, क्रूर, क्षय-वृद्धि-रोगवाला, धूर्त, परस्त्रीमें रत और शूरवीर होता है ॥ २४ ॥

उद्विग्नः स्त्रीजितः सौम्यः परनिंदापरायणः ॥
दांभिको दुःसहः शूरश्चाजपाद्धिष्ण्यसंभवः ॥ २५ ॥

पूर्वाभाद्रपदमें जन्म हो तो मनुष्य उद्विग्नमनवाला, स्त्रीजित, सौम्य, पराई निंदा करनेवाला, पाखंडी, दुस्सह और शूरवीर होता है ॥ २५ ॥

प्रजावान्धार्मिको वक्ता जितशत्रुः सुखी विभुः ॥
दृढव्रतः सदा कामी वाहिर्बुध्न्यर्क्षसंभवः ॥ २६ ॥

उत्तराभाद्रपदमें जन्मे तो संतानवाला, धार्मिक, वक्ता, शत्रुओंको जीतनेवाला, सुखी, समर्थ, सदा दृढनियमवाला और कामी होता है ॥ २६ ॥

रूपवान्धनवान्भोगी पंडितश्च जलार्थभुक् ॥
कामी च दुर्वृतः शूरः पौष्णजः परदेशगः ॥ २७ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां नक्षत्रगुणाध्यायो द्विपंचाशत्तमः ॥ ५२ ॥

रेवती नक्षत्रमें जन्मनेवाला पुरुष रूपवान्, धनवान्, भोगी, पंडित, जलके काममें द्रव्य कमानेवाला, कामी, दुष्ट आचरणवाला, शूरवीर और परदेशमें रहनेवाला होता है ॥ २७ ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां नक्षत्रगुणाध्यायो द्विपंचाशत्तमः ॥ ५२ ॥

अथ मिश्रप्रकरणम् ।

असंक्रांतिर्द्विसंक्रांतिः संसर्पाहस्पती समौ ॥
मासौ तु बहवश्चांद्रास्त्वधिमासः परः क्षयः ॥ १ ॥

बिना संक्रांतिवाला तथा दो संक्रांतिवाला ऐसे ये दो महीने क्रमसे 'संसर्प' तथा ' अहस्पाति ' नामवाले कहाते हैं और इसीको यथाक्रम क्षयमास और अधिकमास भी कहते हैं ये सब भेद चांद्रमासके जानने ॥ १ ॥

हिमाद्रिगंगयोर्मध्ये सुरार्चितवसुंधरा ॥
गोदावरी कृष्णवेण्योर्मध्ये काव्यवसुंधरा ॥ २ ॥

हिमालय और गंगाजीके मध्यमें बृहस्पतिकी भूमि जानना, गोदावरी और कृष्णावेणी नदीके मध्यमें शुक्रकी भूमि जानना ॥ २ ॥

विंध्यगोदावरीमध्ये भूमिः सूर्यसुतस्य च ॥
विंध्याद्रिगंगयोर्मध्ये या भूमिः सा बुधस्य च ॥ ३ ॥

विंध्याचल और गोदावरीके मध्यमें शनिकी भूमि जानना, विंध्याचल और गंगाजीके मध्यमें जो भूमि है वह बुधकी जाननी ॥ ३ ॥

या वेण्यालंकयोर्मध्ये धरात्मजवसुंधरा ॥
समुद्रयंत्रितक्षोणीनाथौ सूर्यहिमद्युती ॥ ४ ॥

और वेणी नदी तथा लंकाके मध्यमें मंगलकी भूमि जानना और समुद्रके पासकी भूमिके मालिक सूर्य तथा चन्द्रमा कहे हैं ॥ ४ ॥

इषमासि चतुर्दश्यामिंदुक्षयतिथावपि ॥
ऊर्जादौ स्वातिसंयुक्ते तदा दीपावली भवेत् ॥ ५ ॥

आश्विन वदि चतुर्दशी अथवा अमावास्याको और कार्त्तिककी चतुर्दशी तथा दीपमालिकाको ॥ ५ ॥

तैले लक्ष्मीर्जले गंगा दीपावल्यां तिथौ भवेत् ॥
अलक्ष्मीपरिहारार्थमभ्यंगस्नानमाचरेत् ॥ ६ ॥

तैलमें लक्ष्मी और जलमें गंगाजी रहती हैं इसलिये दीपमालिकाके दिन अलक्ष्मी (दरिद्र) दूर होनेके वास्ते तेल लगाकर स्नान करना चाहिये ॥६॥

इंदुक्षये च संक्रातौ वारे पाते दिनक्षये ॥
तत्राभ्यंगे ह्यदोषाय प्रातः पापापनुत्तये ॥ ७ ॥

अमावास्या तथा संक्रांतिके दिन, व्यतीपातके दिन, तिथि क्षयके दिन प्रातःकाल तेल लगाकर स्नानकरे तो संपूर्ण पाप दूर होवें ॥ ७ ॥

मासि भाद्रपदे कृष्णे रोहिणीसहिताष्टमी ॥
जयंती नाम सा तत्र रात्रौ जातो जनार्दनः ॥ ८ ॥

भाद्रपद कृष्णा अष्टमीको रोहिणी नक्षत्र हो तब वह 'जयंती' नाम अष्टमी है, उसदिन श्रीकृष्णभगवान्का जन्म हुआ है ॥ ८ ॥

उपोष्य जन्मचिह्नानि कुर्याज्जागरणं च यः ॥
अर्द्धरात्रयुताष्टम्यां सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥ ९ ॥

उस दिन व्रत कर जन्मके चिह्नकर अर्द्धरात्रियुक्त अष्टमीमें जो जागरण करता है वह अश्वमेध यज्ञके फलको प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

रोहिणीसहिताष्टम्यां श्रावणे मासि वा तयोः ॥
श्रावणे मासि वा कुर्याद्रोहिणीसहिता तयोः ॥ १० ॥

रोहिणी सहित अष्टमी श्रावणमें मिल जाय तो रोहिणीके योग होनेसे वह भी जयंती अष्टमी जाननी, उसी दिन व्रत करना चाहिये ॥ १० ॥

मासि भाद्रपदे शुक्ले पक्षे ज्येष्ठर्क्षसंयुते ॥
रात्रौ तस्मिन्दिने कुर्याज्ज्येष्ठायाः परिपूजनम् ॥ ११ ॥

भाद्रपद शुक्का अष्टमीको ज्येष्ठा नक्षत्र होय तो उस रात्रिमें अथवा दिनमें ज्येष्ठा नक्षत्रका पूजन करना चाहिये ॥ ११ ॥

अर्द्धरात्रयुता यत्र माघकृष्णचतुर्दशी ॥
शिवरात्रिव्रतं तत्र सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥ १२ ॥

और माघकृष्णा चतुर्दशी अर्द्धरात्रयुक्त हो उस दिन शिवरात्रि व्रत होता है, वह अश्वमेधयज्ञका फल देती है ॥ १२ ॥

नक्तव्रतेषु सा ग्राह्या प्रदोषव्यापिनी तिथिः ॥
पूजाव्रतेषु सर्वेषु मध्याह्नव्यापिनी स्मृता ॥ १३ ॥

वह तिथि रात्रिके व्रतोंमें प्रदोषव्यापिनी ग्रहण की है और अन्य सम्पूर्ण पूजा व्रतोंमें तो मध्याह्नव्यापिनी कही है ॥ १३ ॥

---

१ यह चन्द्रमासके अनुसार लिखा है और सौरमास माननेपर फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशीको शिवरात्रि होती है।

एकभुक्तोपवासेषु या विंशघटिकात्मिका ॥
पिष्टान्नप्राशनेष्वेव लवणाम्लविवर्जिता ॥ १४ ॥

एक भुक्तोपवास अर्थात् एकवार भोजन करनेके व्रतोंमें बीस २० घडी-तक रहनेवाली तिथि गृहीत है। पीठीके पदार्थ खानेमें, नमक खटाईका त्याग करनेमें भी बीसघडी इष्टतक रहनेवाली तिथि ग्राह्य है ॥ १४ ॥

आषाढसितपंचम्यामसंप्राश्य उपोषितः ॥
अर्चयेत्षण्मुखं देवमृणरोगविमुक्तये ॥ १५ ॥

आषाढ सुदी पंचमीको भोजन नहीं करना, उपवास व्रत करके षण्मुख-देव स्वामिकार्त्तिकजीका पूजन करनेसे ऋण और रोग दूर होते हैं ॥ १५ ॥

तथैव श्रावणे शुक्लपंचम्यां नागपूजनम् ॥
पयःप्रदानं सर्पेभ्यो भयरोगविमुक्तये ॥ १६ ॥

तैसे ही श्रावणशुक्ल पंचमीको नागपूजन होता है, उस दिन रोग दूर होनेके वास्ते सर्पोंको दूध पिलाना चाहिये ॥ १६ ॥

मासि भाद्रपदे शुक्लचतुर्थ्यां गणनायकम् ॥
पूजयेन्मोदकाहारैः सर्वविघ्नोपशांतये ॥ १७ ॥

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थीको गणेशजीका पूजन करना और लड्डुवोंसे पूजन करना तथा लड्डुवोंका भोजन करना ऐसे करनेसे संपूर्णविघ्नोंकी शांति होती है ॥ १७ ॥

माघशुक्ले च सप्तम्यां योऽर्चयेद्भास्करं नरः ॥
आरोग्यं श्रियमाप्नोति घृतपायसभक्षणैः ॥ १८ ॥

माघशुक्ला सप्तमीको जो पुरुष सूर्यका पूजन करता है और घृत तथा खीरका भोजन करता है वह आरोग्य (खुशी) रहता है और लक्ष्मीको पाता है ॥ १८ ॥

व्यंजनोपानहौ छत्रं दधि चान्नकशात्रिकाम् ॥
वैशाखे विप्रमुख्येभ्यो धर्मप्रीत्यै प्रयच्छति ॥ १९ ॥
कनकांदोलिकाछत्रचामरैः स्वर्णभूषितैः ॥
सह दिव्यान्नपानाभ्यां दत्त्वा स्वर्गमवाप्नुयात् ॥ २० ॥

और जो पुरुष धर्महेतु वैशाखमहीनेमें बीजना, जूती, जोडा, छत्री, दही, अन्न, थाली इनका दान श्रेष्ठब्राह्मणोंके वास्ते देता है और सुवर्ण, पालकी

छत्र, चमर, सुवर्णके आभूषण, दिव्य अन्नपानका दान करता है वह स्वर्गमें प्राप्त होता है ॥ १९ ॥ २० ॥

आश्वयुङ्मासि शुक्लायां नवम्यां भक्तितोऽर्चयेत् ॥
लक्ष्मीं सरस्वतीं शस्त्रान्विजयी धनवान्भवेत् ॥ २१ ॥

आश्विनशुक्ला नवमीको भक्तिसे लक्ष्मी, सरस्वती और शस्त्र इन्होंका पूजन करनेवाला पुरुष विजयी तथा धनवान् होता है ॥ २१ ॥

कार्तिक्यामथ वैशाख्यामुपोष्य वृषमुत्सृजेत् ॥
शिवप्रीत्यै भक्तियुतः स नरः स्वर्गभाग्भवेत् ॥ २२ ॥

कार्तिकशुल्का पूर्णिमाको अथवा वैशाखशुक्ला पूर्णिमाको उपवासव्रत करके बैल छोडे (आंकिल छोडे), भक्तिसे युक्त होकर शिवजीकी प्रीतिके वास्ते ऐसे करनेवाला पुरुष स्वर्गमें प्राप्त होता है ॥ २२ ॥

घटांत्या नृयुग्माश्च कन्याकीटतुलाधनुः ॥
कुलीरमृगसिंहाश्च चैत्राद्याः शून्यराशयः ॥ २३ ॥

और कुंभ, मीन, वृष, मिथुन, कन्या, वृश्चिक, तुला, धनु, कर्क, मकर, सिंह ये राशि यथाक्रमसे चैत्र आदि महीनोंमें शून्य जाननी । जैसे-चैत्रमें कुंभ, वैशाखमें मीन इत्यादि ॥ २३ ॥

अथ तिथिशून्यलग्नानि ।

तुलामृगौ प्रतिपदि तृतीयायां हरिर्मृगः ॥
पंचम्यां मिथुनं कन्या सप्तम्यां चापचांद्रमे ॥ २४ ॥

प्रतिपदा तिथिविषे तुला और मकर लग्न शून्य है; तृतीयाविषे सिंह और मकर; पंचमीविषे मिथुन, कन्या और सप्तमीविषे धन, कर्क लग्न शून्य हैं ॥ २४ ॥

नवम्यां हरिकीटौ द्वावेकादश्यां गुरोर्गृहे ॥
त्रयोदश्यां झषवृषौ दिनदग्धाश्च राशयः ॥ २५ ॥

नवमीविषे सिंह, वृश्चिक, एकादशीविषे धन, मीन तथा त्रयोदशीविषे मीन और वृष लग्न शून्य (दग्ध) कहे हैं ॥ २५ ॥

मासदग्धाह्वयात्राशीन्दिनदग्धांश्च वर्जयेत् ॥ २६ ॥

इसप्रकार मासदग्ध राशियोंको और दिनदग्ध राशियोंको वर्ज (त्याग) देवे ॥ २६ ॥

अथ मासशून्यतिथयः ।

अष्टमी नवमी चैत्रे पक्षयोरुभयोरपि ॥
वैशाखे द्वादशी शून्या पक्षयोरुभयोरपि ॥ २७ ॥

चैत्रके दोनों पक्षोंमें अष्टमी, नवमी तिथि शून्य जाननी और वैशाखमें दोनों पक्षोंमें द्वादशी शून्य जाननी ॥ २७ ॥

ज्येष्ठे त्रयोदशी शुक्ला कृष्णपक्षे चतुर्दशी ॥
आषाढे कृष्णपक्षेऽपि षष्ठी शुक्लेऽथ सप्तमी ॥ २८ ॥

ज्येष्ठके शुक्लपक्षमें त्रयोदशी, कृष्णपक्षमें चतुर्दशी और आषाढमें कृष्णपक्षमें षष्ठी, शुक्लपक्षमें सप्तमी शून्यतिथि जाननी ॥ २८ ॥

श्रावणेऽपि द्वितीया च तृतीया पक्षयोर्द्वयोः ॥
प्रौष्ठपदे सिते कृष्णे द्वितीया प्रथमा तथा ॥ २९ ॥

श्रावणमें दोनों पक्षोंमें द्वितीया, तृतीया शून्य जाननी और भाद्रपद शुक्ल तथा कृष्ण पक्षमें प्रथमा, द्वितीया शून्य तिथि जाननी ॥ २९ ॥

सिते कृष्णेऽप्याश्वयुजि दशम्यैकादशी तथा ॥
कार्तिके च सिते पक्षे चतुर्दशी शराऽसिते ॥ ३० ॥

अश्विनमें दोनों पक्षोंमें दशमी एकादशी शून्य तिथि जाननी और कार्तिकमें शुक्लपक्षमें चतुर्दशी और कृष्णपक्षमें पंचमी तिथि शून्य जाननी ॥ ३० ॥

मार्गेऽद्रिनागसंज्ञेऽपि पक्षयोरुभयोरपि ॥
पौषे पक्षद्वये चैव चतुर्थी पंचमी तथा ॥ ३१ ॥

मार्गशीर्षमें दोनों पक्षोंमें सप्तमी अष्टमी शून्य जाननी और पौषमें दोनों पक्षोंमें चतुर्थी, पंचमी शून्य जाननी ॥ ३१ ॥

माघे तु पंचमी षष्ठी शुक्ले कृष्णे यथाक्रमम् ॥
तृतीया च चतुर्थी च फाल्गुने सितकृष्णयोः ॥ ३२ ॥

माघमें शुक्लपक्षमें पंचमी, कृष्णमें षष्ठी शून्य तिथि जाननी और फाल्गुनमें शुक्लपक्षमें तृतीया, कृष्णमें चतुर्थी शून्यतिथि जाननी चाहिये ॥ ३२ ॥

अथ गंडांतविचारः ।

अभुक्तमूलजं पुत्र पुत्रीं वापि परित्यजेत् ॥
अथवाष्टाब्दकं तातस्तन्मुखं नावलोकयेत् ॥ ३३ ॥

अभुक्त मूलज पुत्रको त्याग देवे, अथवा आठ वर्षका बालक हो तबतक पिता उसके मुखको नहीं देखै ॥ ३३ ॥

मूलाद्यपादजो हंति पितरं तु द्वितीयजः ॥
मातरं तु तृतीयोऽर्थं सर्वस्वं तु चतुर्थजः ॥ ३४ ॥

मूलनक्षत्रके प्रथम चरणमें बालक जन्मे तो पिताको नष्ट करे और दूसरे चरणमें जन्मे तो माताको, तीसरेमें धनको, चौथे चरणमें संपूर्ण वस्तुको नष्ट करता है ॥ ३४ ॥

दिवा जातस्तु पितरं रात्रौ तु जननीं तथा ॥
आत्मानं संध्ययोर्हन्ति नास्ति गंडो निरामयः ॥ ३५ ॥

दिनमें बालक जन्मे तो पिताको नष्ट करे और रात्रिमें जन्मे तो माताको, दोनों संधियोंमें अपनी आत्माको नष्ट करे, ऐसे गंडांत नक्षत्रमें जन्मा हुआ बालक निर्दोष नहीं है ॥ ३५ ॥

यो ज्येष्ठामूलयोरंतरालप्रहरजः शिशुः ॥
अभुक्तमूलजः सार्पमघानक्षत्रयोरपि ॥ ३६ ॥

जो बालक ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रके मध्यके प्रहरमें जन्मता है और जो आश्लेषा तथा मघाके मध्यके प्रहरमें जन्मता है वह अभुक्त मूलज कहा है ३६

विधेयं शांतिकं तत्र गंडे दोषापनुत्तये ॥
अरिष्टं शतशो याति सुकृते शांतिकर्मणि ॥ ३७ ॥

तहां गंडांत नक्षत्रमें जन्मनेकी शांति करनी चाहिये शांतिकर्म करनेसे सैंकडो अरिष्ट (पीडा) दूर होते हैं ॥ ३७ ॥

तस्माच्छांतिं प्रकुर्वीत प्रयत्नाद्विधिपूर्वकम् ॥
वत्सरात्पितरं हंति मातरं तु त्रिवर्षतः ॥ ३८ ॥

इसलिये यत्नसे विधिपूर्वक शांति करवानी चाहिये और शांति नहीं की जाय तो गंडांत नक्षत्र पिताको एक वर्षमें नष्ट करे और माताको तीन वर्षमें नष्ट करे ॥ ३८ ॥

धनं वर्षद्वये चैव श्वशुरं नववर्षके ॥
जातं बालं वत्सरेण वर्षैः पंचभिरग्रजम् ॥ ३९ ॥

धनको दो वर्षमें, श्वशुरको नव वर्षमें नष्ट करे और जन्मे हुए उस बालकको एक वर्षमें और बालकके बडे भाईको पांच वर्षमें नष्ट करे ॥ ३९ ॥

श्यालकं चाष्टभिर्वर्षैरनुक्तान्हंति सप्तभिः ॥ ४० ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां मलमासाद्यनेकलक्षणाध्यायस्त्रिपंचाशत्तमः ॥ ५३ ॥

सालाको आठ वर्षमें नष्ट करे ऐसे वह बालक जिसको अशुभ हो तिसकी अवधि कही है और विना कहे हुए कुटुम्बके जनोंको सात वर्षमें नष्ट करे ॥ ४० ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां मलमासाद्यनेकलक्षणाध्यायस्त्रिपंचाशत्तमः ॥ ५३ ॥

अथाश्वशांतिः ।

अश्वशांतिं प्रवक्ष्यामि तेषां दोषापनुत्तये ॥
भानुवारे च संक्रांतावयने विषुवद्वये ॥ १ ॥

अब अश्वोंके दोष दूर होनेके वास्ते अश्वशांतिको कहते हैं—रविवार तथा संक्रांति विषे तथा उत्तरायण दक्षिणायन होनेके समय, अथवा दिन रात्रि समान होवे उस दिन ॥ १ ॥

दिनक्षये व्यतीपाते द्वादश्यामश्विभेऽपि वा ॥
अथवा भास्करे स्वातिसंयुक्ते च विशेषतः ॥ २ ॥

तिथिक्षयमें, व्यतीपात योग वा द्वादशीके दिन, अश्विनी नक्षत्रविषे अथवा स्वातीनक्षत्रयुक्त रविवारविषे ॥ २ ॥

ईशान्यां त्वष्टभिर्हस्तैश्चतुर्भिर्वाथ मंडपम् ॥
चतुर्द्वारवितानस्त्रक्तोरणाद्यैरलंकृतम् ॥ ३ ॥

ईशान कोणमें आठ हाथ प्रमाणका अथवा चार हाथ प्रमाणका मण्डप बनावे, तिसके चार द्वार बन्दनवार, माला, और तोरण आदिकोंसे शोभित करे ॥ ३ ॥

तन्मध्ये वेदिका तस्य पंचविंशांशमानतः ॥
मंडपस्य बहिः कुंडं प्राच्यां हस्तप्रमाणतः ॥ ४ ॥

तिस मण्डपके पच्चीसवें अंश (भाग) प्रमाण तिसके मध्यमें वेदी बनावे और मण्डपसे बाहिर पूर्वदिशामें एक हाथ प्रमाण अग्निकुण्ड बनावे ॥ ४ ॥

वरयेच्छ्रोत्रियान् विप्रान् स्वस्तिवाचनपूर्वकम् ॥
सूर्यपुत्रं हयारूढं पंचवक्रं त्रियंबकम् ॥ ५ ॥

फिर स्वस्तिवाचनपूर्वक वेदपाठी ब्राह्मणोंका वरण करे और सूर्यके पुत्र, अश्वपर चढ़े हुए, पांचमुख और तीन नेत्रोंवाले ॥ ५ ॥

शुक्लवर्णवसाखड्गं रैवंतं द्विभुजं स्मरेत् ॥
सूर्यपुत्र नमस्तेऽस्तु नमस्ते पंचवक्रक ॥ ६ ॥

शुक्लवर्ण, ढाल तलवार धारण किये हुए, दो भुजाओंवाले ऐसे रैवंत देवका स्मरण करे । हे सूर्यपुत्र ! हे पंचमुखवाले देव ! तुमको नमस्कार है ६

नमो गंधर्वदेवाय रैवंताय नमोनमः ॥
मंत्रेणानेन रैवंतं वस्त्रगंधाक्षतादिभिः ॥
विधिवद्वेदिकामध्ये तंडुलोपरि पूजयेत् ॥ ७ ॥

'गंधर्वदेव रैवन्तको नमस्कार है' इस मन्त्रसे वस्त्र, गन्ध, अक्षत आदिकोंसे रैवन्तको विधिपूर्वक तिस वेदीपर चावलोंपर स्थापित कर पूजन करे ७

कार्यास्तत्र गणाः पंच रौद्रशाक्राश्च वैष्णवाः ॥
सगाणपतिसौराश्च रैवंतस्य समंततः ॥ ८ ॥

तहां पांच प्रकारके गण स्थापित करने, यथा—रौद्रगण, इंद्रके गण, वैष्णवगण, गणेशजीके गण और सूर्यके गण ऐसे रैवंतके चारों तर्फ स्थापित करने चाहिये ॥ ८ ॥

ऋग्वेदादिचतुर्वेदान्यजेद्द्वारेषु पूर्वतः ॥ ९ ॥

और ऋग्वेद आदि चारों वेदोंको पूर्व आदि द्वारों विषे पूजे ॥ ९ ॥

रक्तवर्णान्पूर्णकुंभान्वस्त्रगंधाद्यलंकृतान् ॥
पंचत्वक्पल्लवोपेतान्पंचामृतसमन्वितान् ॥ १० ॥

और लालवर्णवाले पूर्णकलशोंको वस्त्र, गध आदिकोंसे विभूषितकर पंचवल्कल, पंचपल्लव, पंचामृत इनसे पूरित करे ॥ १० ॥

द्वारेषु स्थाप्य तल्लिंगैर्मंत्रैर्विप्रान्प्रपूजयेत् ॥
एवं तु पूजामाचार्यः कृत्वा गृह्यविधानतः ॥ ११ ॥

तिन चार द्वारोंमें स्थापित कर तिसी २ वेदके मंत्रोंकरके तहां चार ब्राह्मणोंका पृथक् २ पूजन करे। आचार्य इसप्रकार कुलकी मर्यादाके अनुसार पूजा कर ॥ ११ ॥

स्थापयेत्तु व्याहृतिभिस्तस्मिन्कुंडे हुताशनम् ॥
ततस्तदाज्यभागांते मुख्याहुतिमतंद्रितः ॥ १२ ॥

फिर व्याहृतियोंकरके तिस कुंडमें अग्नि स्थापन करे। फिर सावधान होकर आज्य भाग आहुति देकर मुख्य आहुति देना ॥ १२ ॥

अग्नये स्वाहेति हुत्वा घृतेनादौ प्रयत्नतः ॥
एवं तु पूजामंत्रेण ह्याद्यं तु प्रणवेन च ॥ १३ ॥
पलाशसमिदाज्यान्नैः शतमष्टोत्तरं हुनेत् ॥
प्रत्येकं जुहुयाद्भक्त्या तिलान्व्याहृतिभिस्ततः ॥ १४ ॥

'अग्नये स्वाहा' इस मंत्रसे पहले यत्न पूर्वक घृतसे होम करे। ऐसे पूजाके मंत्रसे आद्यंतमें ॐकार कहके पलाशकी समिध, घृत, तिलादि अन्न इन्हों करके अष्टोत्तरशत १०८ आहुति दे। फिर प्रत्येक मन्त्रमें ' भूर्भुवः ' इत्यादि व्याहृति लगाकर तिलोंसे होम करना ॥ १३ ॥ १४ ॥

एकरात्र त्रिरात्रं वा नवरात्रमथापि वा ॥
अनेन विधिना कुर्याद्यथाशक्त्या जितेंद्रियः ॥ १५ ॥

एक रात्रितक वा तीन रात्रितक वा नव रात्रितक इस विधिसे शक्तिके अनुसार जितेंद्रिय होकर हवन करे ॥ १५ ॥

जपादिपूर्वकं सम्यक्कर्ता पूर्णाहुतिं हुनेत् ॥
ततो मंगलघोषैश्च नैवेद्यं च समर्पयेत् ॥ १६ ॥

यजमान जपादिपूर्वक अर्थात् सब जपोंकी दशांश आहुति कराके फिर पूर्णाहुति करे। फिर मंगल शब्दोंकरके नैवेद्य समर्पण करे ॥ १६ ॥

ततस्ते हुतशेषेण सम्यक्कुंभोदकैर्द्विजाः ॥
प्रादक्षिण्यव्रजंतोऽश्वाञ्जयंतबलिमुत्तमम् ॥ १७ ॥

फिर वे चार ब्राह्मण तिन चार कलशोंकी धारा अश्वोंके दाहिनी तर्फ गमन करते हुए छोड़कर हुतशेष पदार्थसे उत्तम जयंत बलि देवे ॥ १७ ॥

जीमूतस्येत्यनूवाकाश्चतुर्दिक्षु विनिःक्षिपेत् ॥
आचार्याय ततो दद्याद्दक्षिणां निष्कपंचकम् ॥ १८ ॥

और 'जीमूतस्य' ऐसे अनुवाक मंत्र पढकर चारों दिशाओंमें बलि छोढना। फिर पांच पल (२०) तोला सुवर्ण आचार्यको देवे ॥ १८ ॥

तदर्द्धं वा तदर्द्धं वा यथाशक्त्यनुसारतः ॥
ऋत्विग्भ्यो दक्षिणां दद्याद्धेनुं वस्त्रं धनादिकम् ॥ १९ ॥

तिससे आधी अथवा तिससे भी आधी दक्षिणा अपनी शक्तिके अनुसार देनी चाहिये और गौ, वस्त्र, धन इन्होंकी दक्षिणा ऋत्विजोंके अर्थ देनी चाहिये ॥ १९ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छांतिवाचनपूर्वकम् ॥
एवं यः कुरुते सम्यगश्वशांतिमनुत्तमाम् ॥ २० ॥

फिर स्वस्तिवाचनपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन करवावे। ऐसे अच्छे प्रकारसे जो पुरुष उत्तम अश्वशांतिको करता है ॥ २० ॥

सोऽश्वाभिवृद्धिं लभते वीरलक्ष्मीं न संशयः ॥
यज्ञेनानेन संतुष्टा धातृविष्णुमहेश्वराः ॥ २१ ॥

वह अश्वोंकी समृद्धिको प्राप्त होजाता है और शूरवीरोंकी लक्ष्मीको प्राप्त होता है इसमें संदेह नहीं और इस यज्ञसे ब्रह्मा, विष्णु, महादेव प्रसन्न होते हैं ॥ २१ ॥

आदित्याद्या ग्रहाः सर्वे प्रीताः स्युः पितरो गणाः ॥
लोकपालाश्च संतुष्टाः पिशाचा डाकिनीगणाः ॥ २२ ॥

और (उसपर) सूर्य आदि सब ग्रह, पितरगण, लोकपाल, पिशाच, डाकिनी गण ये सब प्रसन्न होजाते हैं ॥ २२ ॥

भूतप्रेताश्च गंधर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ॥ २३ ॥
इति श्रीनारदीयसंहितायां मिश्रकाध्यायश्चतुःपंचाशत्तमः ॥ ५४ ॥

भूत, प्रेत, गंधर्वगण, यक्ष, राक्षस, पन्नग ये भी सब प्रसन्न हो जाते हैं ॥ २३ ॥ इति अश्वशांतिः ॥

इति श्रीनारदीयसंहिताभाषाटीकायां मिश्रकाध्यायश्चतुःपंचाशत्तमः ॥ ५४ ॥

अथ श्राद्धलक्षणाध्यायः ।

चतुर्दशी तिथिर्नंदा भद्रा शुक्रारवासरौ ॥
सितेज्ययोरस्तमयं द्व्यंघ्रिभं विषमांघ्रिभम् ॥ १ ॥

चतुर्दशी और नंदातिथि व भद्रातिथिविषे शुक्र और मंगल, गुरु, शुक्रका अस्त, दोचरणोंका नक्षत्र और विषम चरणवाला नक्षत्र, जैसे-कृत्तिकाका १

पाद मेषमें है यह विषमांघ्रि है और मृगशिर आधा वृषमें है यह दोचरणों-
वाला है ऐसे सब जगह जानो ॥ १ ॥

शुक्लपक्षं च संत्यज्य पुनर्दहनमुत्तमम् ॥
वसूत्तरार्द्धतः पंच नक्षत्रेषु त्रिजन्मसु ॥ २ ॥
पौष्णब्रह्मर्क्षयोः पौनर्दहनं कुलनाशनम् ॥
दिनोत्तरार्द्धे तत्कर्तुश्चंद्रताराबलान्विते ॥ ३ ॥

और शुक्लपक्षको त्यागकर पुत्तलविधान आदिसे प्रेत दाह करना श्रेष्ठ है और धनिष्ठाका उत्तरार्द्ध आदि पांच पंचकोंमें तथा त्रिपुष्करयोगमें और रेवती तथा रोहिणीमें पुत्तलविधान आदिसे दाहकर्म किया जाय तो कुलका नाश होवे, किन्तु मध्याह्न पीछे और क्रिया करनेवालेको चंद्र ताराका बल होनेके दिन ॥ २ ॥ ३ ॥

पापग्रहे बलयुते शुक्रलग्नांशवर्जिते ॥
तत्पुनर्दहनं चोक्तं श्राद्धकालमथोच्यते ॥ ४ ॥

तथा पापग्रह बलवंत हों शुक्र लग्नमें नहीं हो ऐसे मुहूर्त्तमें दाह कर्म करना शुभ है ॥ ४ ॥

अथ श्राद्धकालनिर्णयः ।

सपिंडीकरणं कार्यं वत्सरे वार्द्धवत्सरे ॥
त्रिमासे वा त्रिपक्षे वा मासि वा द्वादशेऽह्नि वा ॥ ५ ॥

वर्षदिनमें, छह महीनोंमें अथवा तीन महीनोंमें, डेढ महीनोंमें वा दाहक-र्मसे बारहवें दिन सपिंडीकर्म करना शुभ है ॥ ५ ॥

एष्वेव कालेष्वेतानि ह्येकोद्दिष्टानि षोडश ॥
कृत्तिकासु च नंदायां भृगोर्वारे त्रिजन्मसु ॥ ६ ॥

इन्ही समयमें एकोदिष्ट षोडशश्राद्ध करने चाहियें और कृत्तिका नक्षत्र और नंदातिथि शुक्रवार त्रिपुष्करयोग इन्होंमें ॥ ६ ॥

पिंडदानं न कर्तव्यं कुलक्षयकरं यतः ॥
त्रिजन्मसु त्रिपाद्भेषु नंदायां भृगुवासरे ॥ ७ ॥

पिंडदान नहीं करना चाहिये, क्योंकि पिंडदान करनेवालेके कुलका नाश होता है । त्रिपुष्करयोग तीन चरणोंवाला नक्षत्र जैसे-पुनर्वसु, क्योंकि "पुन-र्वसु, पादत्रयं मिथुनं" और शुक्रवार ॥ ७ ॥

धातृपौष्णभयोः श्राद्धं न कर्तव्यं कुलक्षयात् ॥
नंदासु च भृगोर्वारे कृत्तिकायां त्रिजन्मसु ॥ ८ ॥
रोहिण्यां च मघायां च कुर्यान्नापरपाक्षिकम् ॥
सकृन्महालये काम्यं न्यूनश्राद्धेऽखिलेषु च ॥ ९ ॥

रोहिणी और रेवतीविषे श्राद्ध नहीं करना चाहिये, क्योंकि श्राद्ध करनेसे कुलका नाश होता है । और नंदातिथि, शुक्रवार, कृत्तिका नक्षत्र, त्रिपुष्करयोग, रोहिणी व मघा नक्षत्रमें सपिंडी आदि श्राद्ध नहीं करना चाहिये । परंतु महालय श्राद्ध अर्थात् कनागतोंमें पार्वण श्राद्ध तो कर देना चाहिये अन्यसम्पूर्ण न्यून श्राद्धोंमें ॥ ८ ॥ ९ ॥

अतीताविषये चैव ह्येतत्सर्वं विचिंतयेत् ॥
नभस्यमासे संप्राप्ते कृष्णपक्षे समागते ॥ १० ॥

और साधारण कामनावाले श्राद्धोंमें यह पूर्वोक्त मुहूर्त्तविषय विचार लेना चाहिये, भाद्रपद महीनेमें कृष्णपक्षमें ॥ १० ॥

तत्र श्राद्धं प्रकुर्वीत सकृद्वा चेदशक्तिमान् ॥
विशिष्टदिवसे कर्तुश्चंद्रताराबलान्विते ॥ ११ ॥

एकवार तो निर्धन पुरुषको भी श्राद्ध करना चाहिये और अन्य शुभ मुहूर्त्तके दिन करनेवालेको चंद्रमा तथा ताराका पूर्ण बल होय तब श्राद्ध करना चाहिये ११

नंदाश्च तिथयो निंद्या भूतायां शस्त्रघातिनाम् ॥
द्वितीया मध्यमा ज्ञेया तृतीया भरणीयुता ॥ १२ ॥

नंदातिथियोंको वर्ज देवे और चतुर्दशीको शस्त्रघातसे मरनेवालोंका श्राद्ध करना चाहिये । द्वितीया मध्यम तिथि है और भरणीनक्षत्र युक्त तृतीया १२

पूज्या यदि चतुर्थी वा श्रीप्रदा पितृकर्मणि ॥
आनंदयोगः पंचम्यां याम्यर्क्षस्थे निशाकरे ॥ १३ ॥

अथवा चतुर्थी श्रेष्ठ है क्योंकि पितृकर्ममें लक्ष्मीदेनेवाली है । पंचमीको चंद्रमा भरणीनक्षत्रपर हो तो पितृकर्ममें आनंदयोग जानना ॥ १३ ॥

भोजयेद्यः पितृंस्तत्र पुत्रपौत्रधनं लभेत् ॥
यशस्करी सप्तमी स्यादष्टमी भोगदायिनी ॥ १४ ॥

इस योगमें जो पुरुष पितरोंको भोजन कराता है वह पुत्र पौत्र व धनको प्राप्त होता है । सप्तमी तिथि श्राद्धकर्ममें यशकरनेवाली है और अष्टमी भोगदेनेवाली है ॥ १४ ॥

श्राद्धकर्तुश्च नवमी सर्वकामफलप्रदा ॥
सूर्ये कन्यागते चंद्रे रौद्रनक्षत्रगे यदा ॥ १५ ॥

और नवमी तिथि श्राद्ध करनेवालेके संपूण मनोरथोंको सिद्ध करती है । कन्याराशिपर सूर्य हो तब, चंद्रमा आर्द्रानक्षत्रपर आवे उसदिन ॥ १५ ॥

सप्तम्यां च तथाष्टम्यां नवम्यां च तिथौ तथा ॥
योगोऽयं पितृकल्याणः पितॄन्यस्मिन्प्रपूजयेत् ॥ १६ ॥

सप्तमी, अष्टमी और नवमी तिथि होय तो यह ‘ पितृकल्याण ’ नामक योग कहा है, इस योगविषे पितरोंका पूजन करना चाहिये ॥ १६ ॥

इह संपदमाप्नोति पश्चात्स्वर्गे ह्यवाप्यते ॥
दशम्यां पुष्यनक्षत्रे सुयोगोऽमृतसंज्ञकः ॥ १७ ॥

इस पूर्वोक्त योगमें पितरोंका पूजन करनेवाला मनुष्य इस लोकमें संपत्ति (लक्ष्मी) को प्राप्त होता है और परलोकमें स्वर्गको प्राप्त होता है । दशमी तिथिको पुष्यनक्षत्र आजाय तो सुंदर ' अमृतसंज्ञक ' योग होता है ॥ १७ ॥

अर्चयेद्यः पितॄंस्तत्र नित्यं तृप्तास्तु तस्य ते ॥
सर्वसंपत्प्रदाः कर्तुर्द्वादशी तिथिरुत्तमा ॥ १८ ॥

इस योगमें जो पितरोंका पूजन करता है उसके पितर नित्य तृप्त रहते हैं। और कर्त्ता (यजमान) को संपूर्ण संपत्ति देनेवाली उत्तम द्वादशी तिथि कही है ॥ १८ ॥

त्रयोदश्यां चतुर्दश्यां हानिर्धनकलत्रयोः ॥
अनंतपुण्यफलदा गजच्छाया त्रयोदशी ॥ १९ ॥

त्रयोदशी वा चतुर्दशीको श्राद्ध करे तो धन स्त्रीकी हानि हो परंतु गजच्छाया योगवाली त्रयोदशी अनंत पुण्यफल देनेवाली है ॥ १९ ॥

श्राद्धकर्मण्यमावास्या पक्षश्राद्धफलप्रदा ॥ २० ॥

श्राद्धकर्ममें अमावस्या तिथि पक्षश्राद्धका फल देती है अर्थात् १५ दिनतक श्राद्ध करनेका पुण्य होता है ॥ २० ॥

पौष्णद्वये पुष्यचतुष्टये च हस्तत्रये मैत्रचतुष्टये च ॥
सौम्यद्वये च श्रवणत्रये च श्राद्धप्रदाता बहुपुत्रवान्स्यात् ॥ २१ ॥

इति श्रीनारदीयसंहितायां श्राद्धलक्षणाध्यायः पंचपंचाशत्तमः ॥५५॥

रेवती, अश्विनी, पुष्य आदि चार नक्षत्र, हस्त आदि ३ नक्षत्र; अनुराधा आदि चार नक्षत्र और मृगशिर आदि दो नक्षत्र, श्रवण आदि ३ नक्षत्र इनमें श्राद्ध करनेवाला मनुष्य बहुत पुत्रोंवाला होता है अर्थात् इन नक्षत्रोंके दिन श्राद्ध करना श्रेष्ठ है ॥ २१ ॥

वेदबाणाङ्कभूवर्षे तैषशुक्लदले तथा ॥
पूर्णिमायां कवेर्घस्रे टीकेयं पूर्णतामगात् ॥ १ ॥

इति श्रीइंद्रप्रस्थप्रान्तवर्त्तिवरीनगरनिवासिद्विजशालिग्रामात्मजबुधवसतिरामविरचितसरलानामभाषाटीकायां श्राद्धलक्षणाध्यायः पंचपंचाशत्तमः ॥ ५५ ॥ शुभं भूयात् ॥

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१
दूरभाष ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

